गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, राजस्थान से प्रसारित
साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध का अंतर्राष्ट्रीय मासिक

ISSN : 2321-8037
मार्च-अप्रैल 2023
Vol. 11, Issue 3-4

Impact Factor : 4.553

Gina Shodh SANGAM

Peer Reviewed & Refereed Research Journal

International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

संपादक :
डॉ. रेखा सोनी

संपादक :
डॉ. बी. आर. भद्री

प्रधान सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

संगम SANGAM

साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

A Peer Reviewed International Refereed Journal

वर्ष : 11 अंक : 3 – 4 मार्च – अप्रैल : 2023 आईएसएसएन : 2321 – 8037

संस्थापक सम्पादिका :
स्मृति शेष डॉ. विश्वकीर्ति

संरक्षक :
हरविन्द्र कमल, पटियाला

मार्गदर्शन :
डॉ. राजेन्द्र गोदारा
श्रीगंगानगर, राजस्थान।

इन्जीनियर सृष्टि चौधरी
लेक्चरर, इलेक्ट्रानिक्स एंड कम्युनिकेशन, सरकारी पॉलिटेक्निक कॉलेज फॉर गर्ल्स, पटियाला, पंजाब।

श्रेष्ठ चौधरी
सीनियर मैनेजर, स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, साहिबजादा अजित सिंह नगर, मोहाली, पंजाब।

प्रधान सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट
सचिव, गीना देवी शोध संस्थान, भिवानी (हरियाणा)

सम्पादक :
डॉ. रेखा सोनी
शिक्षा विभाग, टांटिया वि.वि., श्रीगंगानगर-335001 (राज.)

डॉ. बी. आर. भट्टी
सहायक प्राध्यापक हिन्दी, रा. म. वि. पौखाल, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखंड।

सलाहाकार समिति (Advisory Committee)

डॉ. अरूणा अंचल
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा)

डॉ. सुशीला
चौधरी बंसीलाल विश्वविद्यालय, भिवानी (हरियाणा)

डॉ. सुलक्षणा अहलावत
अंग्रेजी प्रवक्ता, शिक्षा विभाग नूंह (हरियाणा)

डॉ. अल्पना शर्मा
आईएएसई विश्वविद्यालय सरदारशहर (राजस्थान)

डॉ. विजय महादेव गाडे
बाबा साहेब चितले महाविद्यालय भिलवडी (महाराष्ट्र)

डॉ. लता एस. पाटिल
राजीव गांधी बीएड कॉलेज धारवाड़ (कर्नाटक)

डॉ. रीना कुमारी
दशमेश गर्ल्स कॉलेज, अल्ला बक्श, मुकेरिया, पंजाब।

श्री राकेश शंकर भारती
यूक्रेन।

श्री हेमराज न्यौपाने
नेपाल।

ले. डॉ. एम. गीताश्री
डिप्टी डीन एकेडमिक विभागाध्यक्ष, हिंदी विभाग, बीएमएस महिला कॉलेज, स्वायत्त, बसवनगुडी, बेंगलुरु

प्रो. मधुबाला
राजकीय महिला महाविद्यालय, हिसार।

प्रो. पीयूष कुमार द्विवेदी
जगद्गुरू रामभद्राचार्य दिव्यांग विश्वविद्यालय, चित्रकूट, उत्तरप्रदेश

डॉ. हवासिंह ढाका
सहायक आचार्य भूगोल, एस.एन.डी.बी. राजकीय महाविद्यालय, नोहर, राज.

डॉ. मानसिंह दहिया
संस्कृत प्रवक्ता, शिक्षा विभाग तोशाम (हरियाणा)

डॉ. राजेश शर्मा
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राजस्थान)

डॉ. मोहिनी दहिया
माती जीतोजी कन्या महाविद्यालय, सूरतगढ़ (राजस्थान)

डॉ. मुकेश चंद
राजकीय महाविद्यालय, बाडी, धौलपुर, राजस्थान।

प्रो. कौशल्या कालोहिया,
पॅनसिल्वेनिया, यूएसए

डॉ. मोरवे रोशन के.
यूनाईटिड किंगडम।

डॉ. प्रियंका खंडेलवाल
बराण, राजस्थान।

डॉ. आर.के विश्वास
अध्यक्ष होम्योपैथिक, टांटिया, वि.वि.

डॉ. ममता तनेजा
अबोहर, पंजाब।

कानूनी सलाहकार : **डॉ. रामफल दलाल** एडवोकेट, भिवानी
श्रीमती रूपिन्द्र कौर, एडवोकेट, पटियाला।

प्रकाशक, स्वामी एवं मुद्रक **डॉ. नरेश सिहाग**, एडवोकेट ने **मनभावन प्रिन्टर्ज**, पुराना बस स्टैण्ड रोड़, नया बाजार, भिवानी से छपवाकर 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से जारी किया।

संगम SANGAM

साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित अंतर्राष्ट्रीय मासिक

A Peer Reviewed International Refereed Journal

(Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences)

सचिव :

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड,

भिवानी-127021 (हरियाणा)

Email : grngobwn@gmail.com

मो. 09466532152

संगम मासिक पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं/लेखों की मौलिकता का दायित्त्व स्वयं रचनाकारों/लेखकों का है। उससे सम्पादक व प्रकाशक का सहमत होना आवश्यक नहीं। किसी भी प्रकार का विवाद होने पर न्यायक्षेत्र केवल भिवानी (हरियाणा) होगा। सम्पादन और प्रबंधन के सभी पद पूर्ण रूप से अवैतनिक हैं।

Published by :

Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

202, Old Housing Board,

Bhiwani-127021 (Haryana) INDIA

Email : grsbohal@gmail.com

Facebook.com/bohalshodhmanjusha

Website : www.bohalsm.blogspot.com

WhatsApp : 9466532152

All Right Reserved by Publisher & Editor

Price

Individual/Institutional : 1300/-

Disclaimer :

1. Printing, Editing, Selling and distribution of this Journal is absolutely honorary and non-commercial.
2. All the Cheque/Bank Draft/IPO should be sent in the name of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society payable at Bhiwani.
3. Articles in this journal do not reflect the Views or Policies of the Editor's or the Publisher's. Respective authors are responsible for the originally of their views/opinions expressed in their articles.
4. All dispute will be Subject to Bhiwani, Hry. Jurisdication only.

Printed by : Manbhawan Printers, Old Bus Stand Road, Naya Bazar, Bhiwani (Hry.)

Impact Factor : 2.636
ISSN : 2321-8037
Gina Shodh SANGAM
Peer Reviewed & Refereed Research Journal
International Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)
Publisher : Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

तालिका– 2

शैक्षणिक / शोध अंक की गणना हेतु विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षकों के लिए कार्यप्रणाली

(आकलन शिक्षकों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर आधारित होना चाहिए, जैसेः प्रकाशनों की प्रति, परियोजना स्वीकृति पत्र, विश्वविद्यालय द्वारा जारी उपयोग तथा पूर्णता प्रमाण पत्र, पेटेंट दर्ज कराने संबंधी अभिस्वीकृति और स्वीकृति पत्र, विद्यार्थियों को पीएचडी उपाधि प्रदान किए जाने संबंधी पत्र इत्यादि।)

क्रम सं.	शैक्षणिक / शोध क्रियाकलाप	विज्ञान / अभियांत्रिकी / कृषि / चिकित्सा / पशु–चिकित्सा विज्ञान संकाय	भाषा / मानविकी / कला / सामाजिक विज्ञान / पुस्तकालय / शिक्षा / शारीरिक शिक्षा / वाणिज्य / प्रबंधन तथा अन्य संबंधित विधाएं
1	समकक्ष व्यक्ति समीक्षित अथवा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सूचीबद्ध पत्रों में शोध पत्र	08 प्रति पत्र	10 प्रति पत्र
2	प्रकाशन (शोध पत्रों के अतिरिक्त)		
	(क) लिखी गई पुस्तकें, जिन्हें निम्नवत के द्वारा प्रकाशित किया गया :		
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक	12	12
	राष्ट्रीय प्रकाशक	10	10
	संपादित पुस्तक में अध्याय	05	05
	अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	10	10
	राष्ट्रीय प्रकाशक द्वारा पुस्तक का संपादक	08	08
	(ख) योग्य संकाय द्वारा भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद कार्य		
	अध्याय अथवा शोध पत्र	03	03
	पुस्तक	08	08
3	आईसीटी के माध्यम से शिक्षण ज्ञान– अर्जन, शिक्षण शास्त्र और विषयवस्तु का सृजन तथा नए और नवोन्मेषी पाठ्यक्रमों और पाठ्यचर्या का विकास		
	(क) नवोन्मेषी अध्यापन का विकास	05	05
	(ख) नई पाठ्यचर्या और पाठ्यक्रमों को तैयार करना	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम	02 प्रति पाठ्यचर्या / पाठ्यक्रम

अनुक्रमाणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. रेखा सोनी	7–7
2.	प्रवासी रचनाकार मोहन राणा के कविताओं में मानववाद	डॉ. मालतेश स. बसम्मनवर	8–10
3.	साठोत्तरी नाटकों के विविध विमर्श : दलित नाटकों के संदर्भ में	श्री. प्रदीप. राठोड	11–15
4.	मीराबाई के काव्य में निजी अनुभूति की अभिव्यक्ति	डॉ. वीना सोनी	16–19
5.	इक्कीसवीं सदी के काव्य में व्याप्त आम-आदमी की संवेदना	ब्रजेन्द्र कुमार सिंह	20–24
6.	शांति बाँह में चुभी चूड़ी के आँसू जितना जख्म... : 'पाश' 'युद्ध और शांति' के संदर्भ में	डॉ. रमेश यादव	25–29
7.	भारत विभाजन : मासूम बच्चों की त्रासदी	डॉ. अमित कुमारी	30–34
8.	नागार्जुन की कविताओं में सामाजिक और राजनीतिक चेतना	अनिता	35–38
9.	धूमिल के काव्य में समकालीन बोध के आयाम	रेनु	39–43
10.	सामाजिक मानसिकता व तृतीयक लिंगी समुदाय (एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण)	डॉ० परेश द्विवेदी, उन्नति शर्मा	44–49
11.	समाज में उत्तर भारतीय संगीत की महान महिला संगीतज्ञों का योगदान	जया मींड, डॉ. पुनीता श्रीवास्तव	50–60
12.	वाग्येकार सादल्लाह मेव के "पंडुन का कड़ा" की आकर्षक परम्परा	रोशनी बानो, डॉ. रौशन भारती	61–63
13.	'ਪਰੀ ਲੋਕ ਦੀ ਸੈਰ ਕਰਾਵਾਂ' ਪੁਸਤਕ ਵਿਚ ਮਾਨਵੀ ਸਰੋਕਾਰ	-ਡਾ. ਪਰਮਜੀਤ ਕੌਰ 'ਪਾਹੁਲ'	64–68
14.	मीडिया शिक्षा और साइबर अपराध : मीडिया छात्रों के बीच साइबर अपराध के बारे में जागरूकता का एक अध्ययन	रोहताश, प्रोफेसर, (डॉ.) मनोज दयाल	69–84
15.	Opportunities for Exchanging Sports Batting Management Skills in Career of Youth Cricketers in Bikaner Region	Jitender Singh, Dr. Braj Kishor Choudhary	85-88
16.	Mughal State Formation, Ideology and Military Tactics as part of Imperialism against Rajput powers in Medieval Times : A brief Survey	Dr. Meghna Sharma	89-95
17.	मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानियों में मनोवैज्ञानिक संदर्भ	अफीफा फातिमा शेक, डॉ. पूर्णिमा श्रीनिवासन	96–102

18.	प्रवासी साहित्य और विमर्श के संदर्भ : उभरते मूलभूत प्रश्न	डॉ. सुशीला	103–109
19.	गोविन्द मिश्र के उपन्यास धुल पौधों पर में सामाजिक चेतना	सुधीर सिंह	110–115
20.	शैक्षिक परिदृश्य में समयोचित पुनरूत्थान : महत्व और औचित्य	डॉ. अखिला सिंह गौर	116–120
21.	प्रवासी साहित्य और भारतीयता	डॉ. पूनम मियान	121–125
22.	भारत–चीन संबंध	डॉ स्नेह लता	126–130
23.	सूर्यबाला की कहानियों में चित्रित आर्थिक संवेदना	**Francis Shaila S, Dr. Santhoshi**	**131-137**
24.	ग्रामीण विकास में सरकारी योजनाओं की भूमिका	डॉ. मामराज यादव	138–142
25.	**ISSUES WITH TEACHING IN EDUCATION SYSTEM OF INDIA**	**Harsh**	**143-146**
26.	**Effect of Yoga Asanas on Flexibility of College Students of Hamachal Pradesh**	**Dr. Ajay Kumar**	**147-149**
27.	वैश्विक युवा बेरोजगारी : चुनौतियाँ	डॉ. निशा बहल	150–154
28.	कम्प्यूटर और हिन्दी का अंर्तसंबंध	डॉ. राजपाल	155–164
29.	सूर का वात्सल्य वर्णन हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि	डॉ. बी. आर. भद्री	165–169
30.	थर्ड जेंडर : एक दर्द भरी दास्तान (हिंदी साहित्य के संदर्भ में)	डॉ. भावना	170–175
31.	ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा	डॉ. अलका गुप्ता	176–179
32.	**India's Special Economic Zones (SEZs) Problems and Prospects**	**MOTIRAM DAS**	**180-187**
33.	समावेशी शिक्षा का महत्व	डॉ. गोविन्द सोनी	188–190

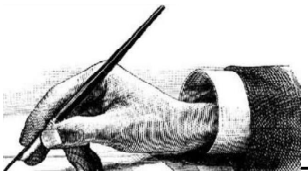

विशेषांक सम्पादक
डॉ. रेखा सोनी की कलम से..

नई शिक्षा नीति 2023 शिक्षा के क्षेत्र में एक नई क्रांति का आगाज़ करने जा रही है। इस शिक्षा नीति का मुख्य उद्देश्य रचनात्मक, बहुभाषिक शिक्षा, छात्र केन्द्रित परीक्षा मूल्यांकन, परीक्षा पद्धति में विभिन्न सुधार करना तथा इच्छानुसार विषय का पठन–पाठन करना है। 34 वर्षों बाद इसरो के प्रमुख कस्तूरीरंगन एवं देश के माननीय प्रधानमंत्री जी की अध्यक्षता में भारतवर्ष की नई शिक्षा पद्धति को लागू किया गया है। इसका मुख्य उद्देश्य वर्ष 2040 तक शिक्षा को कुशल एवं मजबूत बनाना है। विश्व में भारत देश को पुनः विश्वगुरू बनाना है ताकि पूरे संसार में भारतीय प्रतिभाओं को लोहा मनवाया जा सके।

शिक्षा व्यक्ति के विकास के लिए बहुत ही आवश्यक है। शिक्षा के बिना मनुष्य पशु के समान माना गया है। इसलिए प्रत्येक मनुष्य अपने सामर्थ्य और बच्चे की प्रतिभा के अनुसार उसे शिक्षा, दीक्षा दिलवाता है। वैदिक काल से ही यह परम्परा हमारे देश में चली आ रही है। प्राचीन समय में विद्यार्थी विभिन्न प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने के लिए गुरूकुलों में जाते थे। हमारे देश में नालंदा, विक्रमशिला आदि विश्व प्रसिद्ध विश्वविद्यालय स्थापित थे जहां पर विश्वभर के लोग विभिन्न प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने के लिए आया करते थे। वर्तमान में जो शिक्षा पद्धति देश में चल रही है वह ब्रिटिश शासन की देश मानी गई है। इस पद्धति के जन्मदाता लॉर्ड मैकाले को माना गया है। उस समय हमारे देश में अंग्रेजों का शासन था। अंग्रेजों को अपने ऑफिशियल कार्य करने के लिए ब्रिटेन से कर्मचारियों को बुलाना पड़ता था जिस पर ब्रिटिश सरकार का बहुत सा धन जाया होता था। ब्रिटिश सरकार ने धन बचाने के लिए ऐसी शिक्षा नीति हमारे देश में लागू की जिससे उनका उद्देश्य कम वेतनमान देकर पूर्ण किया जा सके। वहीं शिक्षा प्रणाली भारत देश में चली आ रही है। इसका बदलाव अत्यंत आवश्यक था क्योंकि यह पद्धति हमें रोजगार उपलब्ध करवाने में पूरी तरह सक्षम नहीं थी।

हमारे युवा बड़ी–बड़ी उपाधियां ग्रहण कर भी बेरोजगारी से पीड़ित है। वर्तमान समय में नई शिक्षा नीति को लेकर कुछ भ्रांतिया भी फैलाई जा रही हैं उनमें कितनी सच्चाई है यह तो भविष्य के गर्भ में छिपा हुआ है। किन्तु स्वरोजगार के माध्यम से युवाओं को आत्मनिर्भर एवं स्वावलम्बी बनाने में नई शिक्षा नीति काफी हद तक कामयाब होती नजर आ रही है क्योंकि नई शिक्षा नीति में बहुत से ऐसे पाठ्यक्रमों को जोड़ा गया है जिसके माध्यम से युवा स्वरोजगार अपनाकर अपनी बेरोजगारी दूर करने में सक्षम होंगे। इस अंक में नई शिक्षा नीति के साथ–साथ दलित चेतना, रामकाव्य, भक्ति भावना आदि से सम्बन्धित भी आलेख भी प्रकाशित है। पूर्व की भांति यह अंक भी सुधी पाठकों के बहुपयोगी सिद्ध होगा ऐसा मेरा मानना है।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 3-4
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 8-10

प्रवासी रचनाकार मोहन राणा के कविताओं में मानववाद

डॉ. मालतेश स. बसम्मनवर
अध्यापक, हिन्दी विभाग, क.वि.वि. धारवाड़, कर्नाटक।

प्रवासी रचनाकार मोहन राणा जी का जन्म १९६४ में दिल्ली में हुआ। वे ब्रिटेन में बसे भारतीय मूल के हिन्दी कवि हैं। 'बाथ' जो इंग्लेड की समरसेट कौंट में एक रोमन शहर में है। ये वहाँ के निवासी हैं। इनकी कविताओं में जीवन के सूक्ष्म अनुभव महसूस किये जा सकते हैं। बाजार शक्तियों के विरुद्ध इनकी सोछ रहा है। जो इनकी कविताओं में भी उभरकर सामने आता है। इनकी कविताएँ स्थितियों पर तत्कालीन प्रतिक्रिया मात्र न हो कर सच्चाई की निरंतर यात्रा रही हैं। यूरोप के ज्यादा से ज्यादातर देश उन्होंने देखा है, इन देशों के इतिहास और मिथकों से वह अच्छी तरह परिचित हैं और यात्रा में कैमरे की तरह उनके साथ कविता भी चलती है। जो शब्द चित्र बनाती चलती है, उनके पास भारत का इतिहास और मिथक तथा उसकी स्मृतियाँ एक रेफरेंस बिंदु की तरह मौजूद है । जो उनको पर्सपेक्टिव प्रदान करता है।

कवि–आलोचक– नंदकिशोर आचार्य के अनुसार– "हिंदी कविता की नई पीढी में मोहन राणा की कविता अपने उल्लेखनीय वैशिष्ट्य के कारण अलग से पहचानी जाती रही हैं, क्योंकि उसे किसी खाते में खतियाना संभव नहीं लगता। यह कविता किसी विचारात्मक खाते में नहीं आती तो इसका यह अर्थ नहीं लिया जाना चाहिए कि मोहन राणा की कविता विचार से परहेज करती हैं।"[1]

इनकी कविताओं में जीवन का व्यापक संदर्भ विद्यमान हैं। इनके कवि मन में चर्चित प्रतीक और वह विजुवल नहीं है जो सबको दिखाई देते हैं। बल्कि जो बोलबाले में नहीं है वह भी उनकी कविता में किसी न किसी रूप में आ ही जाता है। जैसे नाव पर बैठी हुई काली बिल्ली जिसका नाम नहीं है, स्थान नहीं है, पहचान नहीं है :–

उसका नाम नहीं है,
पुरानी घुमन्तु गाडी में छुपकर रहती है,
टूटी नाव के कबाड में,
उजडे खेतों में बची दीवारों में कहीं,
मनुष्य की छोडी हुई हर जगह,
वह मंडराती है ढलानों की गीली हवा की तरह।

(काली बिल्ली, पृ. ६६)

यही मानवीय दृष्टि उन्हें एक कोमल हृदय वाले व्यक्तित्व प्रदान करती है। इनकी हर सोच इंसानियत

से भरा है। इनकी और एक कविता है 'सदी का अंतिम दिन'। इस कविता में रेल स्टेशन पर किसी की सहायता करने की इच्छा होने पर भी वे नहीं कर पाते।

शाम को लौटते हुए शहर में
वह लडकी अचानक से खडी हो गयी
रोक लिया उसने मेरी आहटों को
चौंक उसके सवाल पे
उसे पैसे चाहिए नया टिकट खरीदने के लिए
खोया हुआ पाने के लिए अगली गाडी के लिए
किसी पास के शहर
कौन है यह भीड में अकेली सोचता
मैंने उसकी मदद नहीं की
बस उसे देखता रहा भीड में गुम होते
वह किसका चेहरा था
जो कभी खोया नहीं डूबा नहीं
मिटा नहीं, स्मृतियों के कोलाहल में
हर दिन और पास आता
बस सदि के अंतिन दिन भी
विश्वास ना किया किसी और पर।

(सदी का अंतिम दिन, पृ. ६६)

यही मानवीय मुल्यों की गहन इच्छाएँ उनमें भरी हुई हैं। यही इच्छाएँ उन्हें व्यष्टि से समष्टि की ओर अग्रसर करती हैं । बमियान में गौतम बुद्ध की मूर्तियों को ध्वस्त किया गया था। इस घटना को वे आने वाले आहट का सूचना मानते हुए एक कविता लिखा है :–

सुबह के उजाले में उदास
शिलाएँ बामियान की
बुद्ध के निष्कासन पर
मैं दुख को बाँटता हूँ पर इतना बड़ा यह
कि बँट नहीं पाता
पत्थर थे तथागत
उन्हें वहाँ से हटा दिया गया। (बमियान, पृ. ७१)

स्वयं मोहन राणा जी मानते हैं कि उनकी कविता का मूल स्त्रोत साक्षात्कार ही है। उनकी कविताओं का मूल में बाहरी सवाल न होकर, अस्तित्व का सवाल है। यह सवाल एक दृष्टि से आध्यात्मिक भी नहीं है और न ही ईश्वर भजन में अपना रास्ता खोजता है। बल्कि उनकी कविताएँ मानव जीवन के उत्सुक शोध की उपज हैं। जिसमें निरीह कल्पना न होकर जीजीविशा भरी हुई है।

भले ही वे विदेश में रहते होंगे परंतु उनका दृष्टिकोण भारतीयता का ही द्योतक है। इसलिए मोहन राणा जी की कविताओं को पढने पर हमें एक अलग सी खुशी मिलती है। ये भी द्वंद्वात्मकता से परे नहीं है। धीरे–धीरे सच को खोजने की चाह उनकी कविताओं में है। पाठक प्रवासी रचनाओं को पढते समय एक काल्पनिक मुखौटा पहन लेते हैं। हमें उस मुखौटे को उतारकर फेंक देना होगा। चाहे वृक्ष कितना ही विशाल क्यों न हो उसके जडे जमीन से जुडे हुए हैं। हमें इस बात को याद रख कर आगे बढ़ना होगा। विश्व बंदुत्व की भावना को चरितार्थ करने में मोहन राणा जैसे अनगिनत बंधुओं का अविस्मरणीय योगदान रहा है। अतः मैं उनकी कवि हृदय के प्रति नतमस्तक हूँ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. 'प्रवासी लेखन – नयी जमीन, नया आसमान'–अनिल जोशी।
2. 'इस छोर पर' – मोहन राणा।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 3-4
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 11-15

साठोत्तरी नाटकों के विविध विमर्श : दलित नाटकों के संदर्भ में

श्री. प्रदीप. राठोड
अनुसंधाता हिन्दी विभाग, कर्नाटक विश्वविद्यालय।

नाटक साहित्य की वह लोकप्रीय विधा है जो जितनी प्राचीन है, उतनी ही महत्वपूर्ण भी इसी विधा से आज के मीडिया, विज्ञापन और आज के इलेक्ट्रानिक्स मनोरंजन 1 और सीनेमा आदि निकले हैं। साथ ही नाटक को पंचम वेद की संज्ञा दी जाती है। नाटक की व्युत्पत्ति एवं आवश्यकता को बताते हुए भरत मुनि कहते हैं–

''न वेद व्यवहारेऽयं संश्राव्यः शूद्रजातिषु।
तस्मात् सुजापरं वेदं पंच्चमं सावर्णविर्णिकम्।।[1]

... चूँकि शूद आदि जातियाँ वेदों का व्यवहार नहीं कर सकती, इसलिए शूद सहित सभी जातियों के श्रवण और ज्ञानवर्धन के लिए पंचम वेद नाटक की रचना की गयी है। प्रायः सभी भाषाओं में नाटकों की रचना हो रही है। इसके अलावा दलित साहित्य में भी नाटकों का सृजन हो रहा है। भले ही इस नये साहित्यिक इतिहास के लिए प्रारंभिक और आरोपित प्रवास हो, किन्तु आधुनिक और समकालीन दलित साहित्य में आज नाटकों की कमी नहीं है।

दलित साहित्य के प्रधान नाटककार के रूप में किसान फाग 'बनसोडे' का नाम अल्लेखनीय है जो 'संत चोखामेला' के जीवन पर आधारित नाटक है। इसके बाद सन् 1920 के बाद जो सामाजिक जागृति का दौर चली, उससे केवल दलित ही नहीं दलितेतर समाज के व्यक्ति भी इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहे और वे सभी दलित समाज की पीड़ा को मुक्ति दिलाने का प्रयास किया। इसका प्रमाण 'महारवाड' नामक नाटाक है।

वास्तव में दलित पँथर की बात 1980 के बाद शुरु होती है। इसका मतलब यह नहीं इससे भी पहले प्रयास हुआ ही नहीं आजादी से पहले बाबासाहेब अंबेडर जी ने स्वाभीमान को जगाया। गाँधी ने भी इस दिशा में काम किया लेकिन दोनों के मार्ग अलग थे 'आजादी मिलने के बाद की हिन्दी राज्यों में ही नहीं संपूर्ण देश के दलित समाज में दो धाराएँ उभरने लगी थीं एक आजादी के गीत गुनगुनाते हुए नौकरी, सुविधाएँ आदि बटोरते हुए राष्ट्रीय धारा में जुड़ने वालों की अपनी राग विराग धारा। दूसरा, दलित उत्पीड़न का शिकार हुए लोग वा उत्पीड़न से आन्दोलन में शामिल होने वाले की संघर्षपूर्ण धारा आजादी के बाद लोकतंत्र के खिलाफ सामन्ती और परंपरागत ताकते एकजूट हो सिर उठाने लगी थीं। स्वयं हिन्दू कोड बिल टुकुडों में स्वीकृत होना इसका उदाहरण रहा है। चूंकि बाबासाहेब डॉ. अंबेडर संवैधानिक प्रमुख रूप से इससे जुड़े थे, अतः उन्हें भी समय–समय

पर करपत्री तथा शंकाराचार्य के द्वारा चुनौती दी गई। वकौल सोहनलाल शास्त्री हिन्दू कोड बिल के कारण सारे भारत में हंगामा सा उठ खड़ा हुआ था।'[२] इसके फल स्वरूप देश भर में एकांकी, लघु नाटक एवं नुक्कड़ नाटकों की बाढ आगई। जिसको हिन्दी क्षेत्र में अंबेडर जयंती के अवसरों पर दलित बहुल स्थानों पर नाटकों की प्रस्तुतियाँ जगह जगह पर होने लगीं।

भीमसेन संतोष का नाटक शोषितों के नाम पैगाम (1983) में तथा रत्नकुमार संभारिया का समाज की नाकश जिनमें दलित जीवन के संघर्ष एवं समस्याओं को बारीकी से उकेरा गया है।

प्रेमकुमार कुलदीप का 'बाल दहन' एकांकी, कर्मशील भारतीय का 'मेरा वजूद' नामक नाटक की रचना की। इसका 1989 अक्तूबर 10 को मुनिरका गाँव में इसका मंचन भी हुआ था। यह नाटक दलितों के मंदिर प्रवेश के सवाल पर रचा गया है।

23 जुलाई 1984 में मोहनदास नैमिशराय द्वारा लिखित नाटक 'हैलो कामरेड' का मंचन हुआ। सन् 1990 में नई दिल्ली में दलित थियेटर की स्थापना हुई, जिसमें बहुत सारे नाटकों का मंचन हुआ। इसी समय मंडल आयोग की सिफारिशें लागू होने से आंदोलन को गति मिली और कर्मशील भारती तथा धर्मवीर ने मिलकर दलित नाट्यमंच की स्थापना दिल्ली में की।

वरिष्ठ दलित कथाकार ओमप्रकाश वाल्मीकि का नाटक 'दो चेहरे' का मंचन कई नाट्य संस्थाओं ने किया। जिसमें मजदूर संघटनों की दलित विरोधी गतिविधियों को उभारा गया है।

सामाजिक न्याय के संबंध में लिखे गये नाटककार माताप्रसाद का नाटक सन् 1995 में 'वीरांगना झलकारी बाई' एक अर्द्ध ऐतिहासिक नाटक है। जिसमें 'झलकारी बाई' अतुलनीय शौर्य एवं बलिदान की कहानी कहकर उसके चरित्र से पाठकों का परिचय कराया है। 'झलकारी बाई' एक ऐतिहासिक नारी पात्र है, जो कोरी कुल में जन्म लेकर भी लक्ष्मीबाई के साथ प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में अद्भूत शौर्य का परिचय देती है। इस नाटक द्वारा दलित समाज को प्रेरणा मिलती है और उनके भीतर से हीनता की भावना का निवारण होगा। माताप्रसाद के 'धर्म के नाम पर धोखा' नामक नाटक में समाज में व्याप्त अनेक बुराइयों का भी उल्लेख किया है। इसके अलावा 'अछूत का 'बेटा', 'प्रतिशोध', 'काला पहाड़' आदि नाटक भी दलित चेतना के लिए उदाहरण हैं। इसके अतिरिक्त ताराचंद चौहान का 'गरीब की रोटी, मेघनाद जमाल पुरी का नींव का पत्थर', 'कीड़े मकोडे, पराकाष्टा के स्वर तथा रमेश उपाध्याय द्वारा लिखित नाटक 'हरिजन दहन' भी उल्लेखनीय हैं। सूरजपाल चौहान के नाटक सच कहने वाले शूद्र हैं, इसमें शोद्र को शुद्ध एवं सत्य सिद्ध करते हुए तथाकथित ज्ञान के भंडार ब्राह्मण को ठग का तार्किक अर्थ देकर सत्य की परिभाषा बदलने में नाटककार सफल हुआ है। इन सभी नाटकों से यही अर्थ मिलता है कि भारत के दलित भी नाटक विधा का प्रयोग कर समाज में बदलाव लाने एवं समाज की मानसिकता बदलने की तरफ सग्रसर हुए हैं।

दलित विषय पर अन्य लेखकों ने जो नाटक लिखा है उनमें नरेंद्र कोहली का शंबूक की हत्या, शंकर शेष का पोस्टर, भीष्म सहानी का कबीर खड़ा बाजार में, हबीब तनवीर का 'जमादरानी, नागबोर्डस का 'दलित, त्रिपुरारी शर्मा का बांझ पार्टी, आदि हिन्दी में बहुत सारे दलित नाटक की रचना हुई है। लेकिन इसमें कुछ प्रकाशन हुए तो कुछ मंछन हुए हैं। अभी प्रकाशन की जरूरत है।

जो नाटक या एकाकी उपलब्ध है उन्हें निम्न श्रेणियों में बांटा जा सकता है।

ऐतिहासिक व रामायण–महाभारत तथा पौराणिक कथाओं के उपेक्षित पात्रों पर आधारित नाटक :–

20वीं सदी में आदि हिन्दी आंदोलन के प्रणेता स्वामी अछूतानंद 'हरिहर' के चार नाटक मिलते है, जिसमें दो प्रकाशित नहीं हो पाए। पहला नाटक है 'रामराज्य न्याय' में रामायण के उपेक्षित और राम के जुल्म के शिकार पात्र शंबूक की हत्या का वर्णन है।

इसी श्रेणी के अंतर्गत एन. आर. सागर के अंतिम अवरोध नाटक की सबसे पहले चर्चा होती है। जो हिन्दी दलित साहित्य के लिए उपलब्धि माना जाना चाहिए। इनके और दो नाटक संग्रह 'लाजवती' और 'दूसरा पक्ष भी काफी पहले छपे हैं। ऐतिहासिक नाटकों में माताप्रसाद के अन्तहीन बेडियाँ नाटक भी महत्वपूर्ण हैं जिसके माध्यम से मानवीय मुल्यों को नए तरीके से व्याख्यायित करने का प्रयास किया गया है।

डॉ. अंबेकर, ज्योतिबा फूले तथा सावित्री बाई के जीवन के अंशों व घटनाओं पर आधारित नाटक :–

इस श्रेणी में माता प्रसाद द्वारा रचित 'धर्म परिवर्तन' नाटक आता है जो बाबासाहेब के जीवन के कुछ पहलुओं या घटनाओं की झकी प्रस्तुत करता है। सूरजपाल चौहान का श्छू नहीं सकताश नामक पुस्तक 2001 में प्रकाशित हुआ। जिससे दलित समस्या को बड़े ही तर्कपूर्ण एवं स्पष्ट रुचिकर ढंग से प्रस्तुति की गई है। यह नाटक बाबासाहेब के बाल जीवन पर आधारित है। दहाड़ उठा सिंह जिसका नाम भीमश नामक अप्रकाशित नाटक सुश्री अनीता द्वारा लिखा है। जो बाबासाहेब के महाड आंदोलन पर आधारित है। इनका दूसरा नाटक 'सिद्धार्थ का गृहत्याग उनके गृहत्याग को एक नई परिभाषा देता है। 'संकल्प' नामक शिवनाथ शीलवोधी द्वारा रचित नाटक में स्त्रियों की शिक्षा के लिए श्रीमती सावित्रीबाई फूले का संघर्ष वर्णन बड़े मार्मिक ढंग से किया है। क्रान्तिबा फूले नामक नाटक प्रो, रतनलाल सोनग्रा का है। जिसमें क्रान्तिकारी ज्योतिबा फूले के जीवन एवं जीवन–संघर्ष को विस्तृत ढंग से लिखा गया है।

राजनैतिक दलों या छद्म दलित प्रचार की वास्तविकता उजागर करने वाले नाटक :–

'हैलो कामरेड' मोहनदास नैमिशराय जी के द्वारा रचित नाटक में वामपंथी उदारता का जामा पहनकर अपनी बात सीधे न कहकर ब्राह्मणवाद के छद्म रास्ते से दलित चेतना को जागृत करने का जाने–अनजाने या छिपे रुस्तम प्रयास करने वाले लोगों की मान्सिकता को उजागर किया है।

बदलाव के लिए संकल्पित एवं सवर्ण मानसिकता के भण्डाफोड पर आधारित नाटक :–

इन स्तरों की नाटाकों में बदलाव की चेतना और रूढियों से मुक्त होने का संकल्प है जिसमें 'मंदिर प्रवेश' नामक नाटक कर्मशील भारती का अप्रकाशित नाटक है। जिसमें मंदिर में जाने को लेकर अवर्णों द्वारा अवरोध पैदा करने पर एक नई बहस को छोड़ना है। तब एक पढ़ा–लिखा दलित छात्र अपने दलित बंधुओं को इन मंदिर के बारे में टिप्पणी करते हुए कहता है 'मंदिर में कुछ नहीं रखा। बाबा साहेब ने हमें शिक्षित होने के लिए कहा है हमारे मंदिर तो स्कूल हैं वहाँ चलो। इसी तरह सूरजपाल चौहान की 'नई चादर का रहस्य' एकांकी में एक पंडित जो स्वयं सरकारी दफ्तर में बाजार मूल्य से भी कम दाम पर चादरे बेचता है। उसका बिजनेस फेल हो जाता है। पोल उस दिन खुलती है जब उसका बाप मरता है। पता चलता है कि उसका बाप शमशान घाट का पंडित था और मुर्दे जलवाता था। वहीं से वह चादरें लाता था इसलिए वह सस्ती होती थी। कृष्णपाल परख का 'हम दलित' पत्रिका में प्रकाशित नाटक 'द्वन्द्व' नाटक उत्तर प्रदेश के बागपत, बड़ौत के क्षेत्र में जाटों द्वारा दलित को वोट न डालने पर आधारित है। एस के पिपल का नाटक संघमित्रा की राह पर दलित समाज के पाखण्डी

अंधविश्वासी और मनुवादी लोगों का प्रतिनिधित्व करने वाले दलितों का चित्रण करता है, जिनके बारे में बाबासाहेब जी कहा था। मेरे पढे–लिखे लोगों ने मुझे धोखा दिया। आदिवासी लेखक सुनील कुमार सुमन का नाटक 'एक बार फिर में पंडित की पोंगापंथी पर कड़ी चोट करके दलित समाज को जागरुक और सावधान करता है। इनका दूसरा नाटक 'दही च्यूडा' नाटक भी पंदितों द्वारा दलित को मुर्ख बनाने की साजिश के पर्दाफाश करता है। श्रीकांत व्यास का 'आज का द्रोण' नाटक शिक्षा जगत में व्याप्त आराजकता की ओर सीधा संकेत करता है, जिसमें नाटककार ने अपने भोगे हुए सत्य को नाटक के माध्यम से अद्भाषित किया। ओमप्रकाश वाल्मीकि द्वारा रचित 'दो चहरे' नामक नाटक दलित मजदूरों के उत्पीडन एवं मजदूर संगठनों के नेतृत्व का भंडाफोड करता है।

दलित पीडा व उत्पीडन पर आधारित नाटक :–

इस श्रेणी से संबंधित बहुत सारे नाटक उजागर हुए हैं। जिसमें सुश्री अनिता का नाटक 'मिट्टी रंगबदलेगी, कर्मशील भारती का मान सम्मान' नाटक सवर्णी द्वारा दलित दूल्हे को घोड़ी पर चड़ने की जिद के विवाद पर आधारित है। इस नाटक में दलितों की संगठित संकल्पित शक्ति बदलाव लाने में सफल होती है। इनका दूसरा नाटक 'श्रेष्ठ कौन' में एक दलित विधवा औरत का प्याऊ से पानी पीने का दण्ड इसलिए भोगना पडता है, क्योंकि उसने प्याऊ के बर्तन को उठाकर पानी पी लिया था।

इसी प्रकार कर्मशील का आजादी किसकी नाटक की पृष्ठभूमि यह सन् 1992 जून 6 (राजस्थान) की सच्ची घटना है। इस नाटक में जाटों द्वारा पुलिस प्रकाशन को साथ मिलाकर दलित टोलों के युवक–युवतियों को बराबर अपमानित करता और अन्त में उस टोले को ही जला देना, घर, तोड देना, महिलाओं के साथ बलात्कार करना दर्शाया गया है।

सामाजिक एवं धार्मिक कुरीतियों को उजागर करने वाले नाटक :–

इस श्रेणी में ऐसे नाटक है जो सवर्णों की मानसिकता का पर्दाफाश करते हैं या बाबा साहेब की प्रतिज्ञाओं को आधार मानकर रचे गए हैं। कर्मशील भारती के फाँसी नाटक में एक दलित लड़का सवर्णीय लड़की से प्रेम विवाह के कारण गाँव की सवर्ण पंचायत द्वारा फाँसी चढा दिया जाता है।

'झूठा अहंकार' नामक नाटक में निम्न जाति के लोगों को पढे–लिखे नहीं देख सकते याने उन्हें बर्दाश्त नहीं होती। दलित लड़के का पिता अपने पुत्र की पढाई बन्द नहीं करवाता। तब सवर्णों ने षड्यन्त्र करके लड़ने की माँ पर चोरी से घास काटने का आरोप पर उसे गाँव में नंगा घुमाते हैं ताकि उस दलित परिवार का मनोबल टूट जाए। इस नाटक का अंत बहुत ही मार्मिक ढंग से किया है। एक तरफ दलितों के विकास का अंकड़ा घोषित करते हैं तो दूसरी ओर सवर्ण टिप्पणी करते हैं सरकार का भेजा खराब है जो दलित को सिर पर चढा रही हैं, तीसरी ओर एक दलित औरत नंगी घुमाई जा रही है। 'बुद्धशरणम् गच्छामि' नामक में दर्शक व पाठकों को ब्राह्मणवाद की दूषित सोच से चेताता है। शिवनाथ शीलवोधि का 'कैद किरणें' स्त्री शिक्षा पर बल देता है। इसके अलावा भी कई सारी नाटक अप्रकाशित होने के कारण साहित्यकारों व आलोचकों की दृष्टि में नहीं आ पाये। अंत में अधिकांश नाटक सच्ची घटनाओं पर या लेख के भोग अनुभवों आधार पर है।

निष्कर्ष :–

अंततः हम देखते है कि दलित नाटककार हो या गैर दलित नाटककार अपने नाटकों में मनुष्य के आत्म

सम्मान की रक्षा करने का प्रयास किया है। स्वस्थ भारत का निर्माण तभी संभव हो सकता है, जब समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, जातिवाद, वर्णभेद, अधिकार भेद व ऊँच–नीच की भावना जड़ समेत मिट जाएगा। नाटक इसके लिए एक सशक्त माध्यम है जो हर मनुष्य में चेतना का प्रवाह करके सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक समानता की अनुभूति को जगाता है।

उपरोक्त सभी नाटक निर्भिकता के साथ विषमतावादी समाज व्यवस्था का सत्य बताते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के इतने साल के बाद भी हर गाँव हर शहर में आज भी दलित समाज की करुणजनक स्थिति दिखाई देती है। अंततः हम देखते हैं कि उपरोक्त नाटकों में अंध–विश्वास, अशिक्षा, दलित उत्पीडन, नारी उत्पीडन, अत्याचार और बलात्कार आदि समस्याओं का फर्दाफाश हुआ है। नाटकाकार अपने नाटकों के माध्यम से समाज में समता, सम्मान और भाईचारा स्थापित करने का प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रंथ :–

१. नाट्य शास्त्र – भरतमुनी पृ. १.२

२. बाबासाहेब–डॉ. अंबेडकर के संपर्क में २५ वर्ष पृ. २५६

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 3-4
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 16-19

मीराबाई के काव्य में निजी अनुभूति की अभिव्यक्ति

डॉ. वीना सोनी
सह आचार्य–हिन्दी, सनातन धर्म राजकीय महाविद्यालय, ब्यावर।

जीवन में घटी घटनाओं, इच्छाओं, अनिच्छाओं, पीड़ा, व्यथा, आशा, निराशा और प्रसन्नता के पल आते हैं। इन पलों का बोध इन्द्रियों, मन तथा बुद्धि के माध्यम से होता है। यह बोध या अनुभूति मनुष्य की भावनाओं का एहसास है। समय और परिस्थिति के अनुसार अनुभूति मन के भावों को संबल प्रदान करती है और अवसर मिलते ही लेखनी, वाणी या हाव–भाव द्वारा व्यक्त हो जाती है। अनुभूति दो प्रकार की होती है–सुखानुभूति और दुःखानुभूति। जिन उद्दीपकों द्वारा मानव मन को प्रेम, स्नेह, भक्ति, श्रद्धा आदि का अनुभव होता है वे सुखानुभूति हैं। जिन उद्दीपकों द्वारा क्रोध, घृणा, विद्रोह का भाव उपजता है वह दुःखानूभूति हैं।

भक्तिकालीन कवयित्री मीराबाई के काव्य में निजी अनुभूति के स्वरों की अभिव्यिक्त हुई है। लोक लाज का भय, परिवार व समाज द्वारा दी गई यंत्रणाएं व लांछनाएं, स्त्री मन की पीड़ा व आकांक्षा तथा सामंती समाज में नारी दशा को सहजता से देखा जा सकता है। मीराबाई के काव्य में इनके विरूद्ध विद्रोह का स्वर भी मुखर हुआ है। ''मीरा की कविताएं डायरी के पृष्ठों की तरह हैं। यहां भक्ति की ओट में स्त्री मन की अनुगूंज को स्पष्ट सुना जा सकता है।''[1]

मीरा स्त्री स्वतन्त्रता की पक्षधर हैं। वे मानती हैं कि उसे भी अपनी इच्छा से जीवन जीने का अधिकार है। स्त्री, पुरूष की दासी नहीं है। उन्होंने निजी जीवन में नारी होने की त्रासदी को झेला। भौतिक जीवन को तिलांजलि देकर स्वयं के पति के अतिरिक्त श्रीकृष्ण को अपना स्वामी बोलना, निश्चित ही स्त्री–भाव को स्वच्छंदता प्रदान करना है। इसके लिए उन्होंने नानाविध कष्ट झेले और आशावादी बनी रहीं–

''म्हाराँ री गिरधर गोपाल दूसराँ णाँ कूयाँ।
दूसराँ णाँ कूयाँ साधाँ सकल लोक जूयाँ।।''[2]

तत्कालीन समाज में स्त्री को पर्दे में रखने की प्रथा थी। उसकी इच्छा–अनिच्छा के कोई मायने नहीं थे। चारदीवारी में रहकर पति सेवा करना उसका मुख्य कर्म था। स्त्री के मनोभावों को मीरा के पदों में देखा जा सकता है। वे कृष्ण को अपना पति स्वीकार कर चुकी हैं और राजसी व सामाजिक नियमों की परवाह ना करते हुए कहती हैं–

''बरजी री म्हाँ स्याम विणा न रह्याँ।
साधाँ संगत हरि सुख पास्यूँ जगसूँ दूर रह्याँ।
तण मण म्हाराँ, जावाँ जास्याँ, म्हारो सीस लह्याँ।

मण म्हारो लग्याँ गिरधारी जगराँ बोल सह्याँ।[3]

कृष्ण प्रेम में रंगी मीरा को स्वजनों से मतभेद और उलाहने मिलने लगे। परंतु जिसके हृदय में साँवरे की छवि बस गई हो उसे जग के वैर की चिंता कैसी? उन्होंने काजल, टीकी, चूड़ा सब त्यागकर वैराग्य धारण कर लिया। महलों की महारानी साधु संगति करने लगी। पुरूषों के साथ बैठ कर भक्ति–गीत गाने लगी तो समाज में बदनामी होने लगी। मीरा को ताने सुनने पड़े, परंतु उन्होंने राणा से स्पष्ट कह दिया–

''राणो म्हाँने या बदनामी लगे मीठी।

कोई निन्दो कोई बिन्दो मैं चलूंगी चाल अपूठी।''[4]

मीरा परंपरागत प्रतिमानों को अपने विद्रोही स्वर के माध्यम से व्यक्त करती हैं। थोथी कुल की कान, सामाजिक जड़ता की जंजीरों को तोड़ते हुए साधु संतों की संगति करती हैं। अभिजात्य कुल की आन के भीतर छिपी नारी भावनाओं को स्वतन्त्रता प्रदान करती हैं। वे बेधड़क तानपुरा लेकर भक्ति गीत गाती हैं। परिणामस्वरूप राणा तथा अन्य परिजन उनसे नाराज हो जाते हैं और यातनाएं देते हैं। परेशान होकर मीरा वृंदावन चली जाती हैं। यहाँ भी राणा के व्यक्ति उनके पीछे लगे रहते हैं और वापस राजमहल चलने के लिए दबाव डालते हैं परंतु मीरा सामंती दंभ और अहंकार के समक्ष नहीं झुकीं। वे राणा को कहती हैं–

''साँवरियो रंग राचाँ राणा, साँवरियो रंग राचाँ।

ताल पखावज मिरदंग बाजा, साधाँ आगे णाच्याँ।।''[5]

युवावस्था में वैधव्य का दंश झेलने वाली मीरा के जीवन में परिवर्तन हुआ। अंतर्मन की अनेक आकांक्षाओं को कृष्ण भक्ति के गीतों के साथ व्यक्त करने लगीं। भगवत भक्ति से राणा विक्रमाजीत सिंह चिढ़ने लगे। उन्हें मृत्यु के द्वार तक पहुँचाने के लिए विष का प्याला और टोकरी में सर्प भेजा गया। गोपाल की भक्ति में तल्लीन मीरा तनिक नहीं डरीं और विषपान कर लिया–

''राणोजी थे जहर म्हें जाणी

जैसे कंचन दहत अगिन में, निकसत बाराँवाणी।।''[6]

''राणो भेज्या विख रो प्यालो, चरणामृत पी जाणा।

काला नाग पिटारयाँ भेज्या, सालगराम पिछाणा।।''[7]

स्वजन यदि प्रताड़ित करते हैं तो मन को ठेस पहुँचती है। एक स्त्री अपने माता–पिता को छोड़कर पति के घर आती है। वहाँ के रीति–रिवाज अपनाती है परंतु स्वयं के जीवन को इच्छानुसार नहीं जी सकती। तत्कालीन समाज में नारी को बंधनों में बँधकर रहना पड़ता था। मीरा को भी ससुराल में कई दुःखों का सामना करना पड़ा। उनके काव्य में निजी अनुभूति की अभिव्यक्ति कई पदों में मिलती है। वे पद के माध्यम से अपने दुःख व्यक्त करती हुई जीवन में करेले सी कड़वाहट भरने वाले राणा से कहती हैं–

''राणा जी थे क्यों ने राखों म्हाँसू बैर।

थे राणा जी म्हाँने इसड़ा लागो ज्यों ब्रच्छन में कैर।''[8]

मीरा ने अपमान सहा। शारीरिक पीडा भोगी। मानसिक तनाव का सामना किया। उनका मन भीतर ही भीतर चीत्कारता रहा परंतु कृष्ण की अनन्य भक्त मीरा गिरधर को पुकारती रहीं। समयानुकूल पुरूष तंत्रात्मक समाज का विद्रोह भी करतीं और कभी कभी लोकोपवाद से बचने के लिए चुप्पी साध लेतीं। उनकी निजी अनुभूति

वाणी द्वारा निसृत होकर कह उठी–

''हेरी म्हा तो दरद दिवॉणी म्हाराँ, दरद न जाण्याँ कोय।
घायल की गत घायल जाण्याँ, हियडो अगण सँजोय।''[9]

इस दौर में स्त्रियाँ पूर्णरूप से पिता, पति व पुत्र पर आश्रित रहती थीं। बिना अनुमति घर की देहरी लाँघना मना था। ऐसे सामाजिक बंधन में बंधी नारी यदि सामाजिक नियमों का उल्लंघन करे तो निश्चित ही उसे कठिनाइयों और चुनौतियों का सामना करना पड़ा होगा। कृष्ण भक्त कवयित्री मीरा ने जितने कष्ट सहे, प्रताड़ना झेली, संभवतः भक्तिकालीन किसी अन्य कवि ने नहीं झेला होगा क्योंकि ''एक स्त्री, वह भी मेड़ता के राठौर राजपूत कुल की बेटी और मेवाड़ के महाराणा परिवार की बहू, ऊपर से विधवा। यही था मीरा का अपना लोक।''10 राजपरिवार के लोक में अपने पति के अतिरिक्त किसी दूसरे को स्वामी स्वीकारना, एक तरह से सामाजिक मान्यताओं का विरोध करना था। राजकुल की वधू से सास ननद के रिश्ते बिगड़ने लगे। परिजनों का कटु व्यवहार असहनीय होने लगा तो उन्होंने अपनी मनःस्थिति को पदों के द्वारा जगजाहिर किया। उनके काव्य में देवर, जेठ, सास, ननद द्वारा किए गए व्यवहार का चित्रण देखने को मिलता है। मीरा कहती हैं–

''सासरियों दुख घणा रे सासू नणद सतावै।
देवर जेठ कुटुम्ब कबीलो, नित उठ राड चलावै।
राजा बरजै राणी बरजै, बरजै सब परिवारी।
कुँवर पाटवी सो भी बरजै, और सहैल्या सारी।''[11]

मीरा ने ससुरालजन के सम्बन्ध में पदों द्वारा जो उद्‌गार व्यक्त किए हैं वे उनकी निजी अनुभूति के स्वर हैं। मीरा को सास–ननद से उलाहना मिला। उनके साथ क्रूर व्यवहार किया। उन्हें ताले में बंद करके पहरेदारों को चौकसी करने के लिए नियुक्त किया गया। पैरों में जंजीरें बांधी गईं। मीरा कृष्ण के बिना जीवन नहीं जी सकती थीं। वे अपने ऊपर हो रहे अत्याचारों को व्यक्त करती हुई कहती हैं–

''हेली म्हाँसू हरि बिना रह्यो न जाय।
सास लडै मेरी ननद खिजावै, राणा रह्या रिसाय।
पहरों भी राख्यो चौकी बिठारयो, ताला दियो जड़ाय।
पूर्व जनम की प्रीत पुराणी, सो क्यूं छोड़ी जाय।''[12]

मीरा के काव्य में उनके निजी जीवन की संघर्षमयी विविध घटनाओं का वर्णन मिलता है। सामंती समाज की जकड़न, मन की घुटन, त्रासदी और मुक्ति की छटपटाहटता के साथ नारी की विवशता, प्रतिरोध की भावना की अभिव्यक्ति भी हुई है। 'लोक लाज', 'निंदा', 'बड़े कुल की बेटी', 'उच्च कुल की बहू' की दुहाई देकर ईश वंदना और साधु संतों की संगति करने पर अपमानित किया गया। ननद भी अपनी भाभी से कह रही है–

''थांने बरज बरज मैं हारी, भाभी मानो बात हमारी।
राणे रोस किये थां ऊपर, साधों में मत जारी।
कुल को दाग लगै छै भाभी, निंदा हो रही भारी।
साधां रे सँग बन बन भटको, लाज गमाई सारी।
बड़ा धरां थें जनम लियो छै, नाचो दे दे तारी।

वर पायो हिंदवाणे सूरज, थे कांई मन मां धारी।
मीरा गिरधर साध सँग तज, चलो हमारी लारी।''[13]

वस्तुतः मीरा के काव्य में निजी अनुभूति की जो अभिव्यक्ति मिलती है वह उनके जीवन के कटु अनुभव व संघर्ष के स्वर हैं। उन्होंने सामंती प्रथा को तोड़ते हुए स्त्री चेतना के स्वर को गति प्रदान की। उनके पदों द्वारा कृष्ण के प्रति अटूट विश्वास अभिव्यक्त हुआ है। भगवत रूपी विश्वास की डोर थामे मीरा परिवार व समाज द्वारा मिले तिरस्कार व अपमान भी सहती गईं और एक प्रकार से हिन्दी साहित्य को विशिष्ट पदों की सौगात देकर साहित्य में श्री वृद्धि कर गईं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. संगीता गुप्ता – हिन्दी कविता में स्त्री स्वर, पृ. 27
2. मीराँबाई की पदावली– (सं) आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, पद 18, पृ. 100
3. वही, पद 29, पृ. 104
4. वही, पद 33, पृ. 106
5. वही, पद 37, पृ. 107
6. वही, पद 38, पृ. वही
7. वही, पद 39, पृ. 107–108
8. वही, पद 34, पृ. 106
9. वही, पद 70, पृ. 116
10. मैनेजर पाण्डेय, भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य, पृ. 21
11. माधव हाडा–पचरंग चोला पहर सखी री, पृ. 130
12. मीराँ बाई की पदावली– (सं.) आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, पद 42, पृ. 108–109
13. मीरा सुधासिंधु (भाग–1) (सं.) स्वामी आनंदस्वरूप, पद 8

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 20-24

इक्कीसवीं सदी के काव्य में व्याप्त आम–आदमी की संवेदना

ब्रजेन्द्र कुमार सिंह
शोधार्थी, उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद।

संवेदना वह मनोभाव हैं जो प्रकृति में व्याप्त सभी प्राणियों को वस्तुजगत के गुणधर्मी तथा परिवेशगत परिघटनाओं से उनकी चेतना को जोड़ता है। संवेदना वह आधार है जिसके कारण कोई प्राणी किसी दूसरे के दुःख से स्वयं पीड़ा का अनुभव करता हैं और उसके सुख से आनंद बोध का। संवेदना व्यक्ति के उर में नवों रस की उत्पत्ति करता हैं। संभवतः संवेदना इसलिए आदिकाव्य की उत्पत्ति का आधार रहा और यह काव्य की आत्मा बना। इस इक्कीसवीं सदी में भी संवेदना ही है जो कवियों के उर को स्पंदन कर उनके मनमस्तिष्क में एक प्रेरक विचारधारा निर्माण करता है, जिनकी अभिव्यक्ति काव्य के रूप में होती है और इन सबका केन्द्र बिन्दु होता है आम–आदमी। समाज में आम आदमी वह होता है, जिसके पास न कुछ विशेषाधिकार होता है और न ही भौतिक सुख सुविधाओं से अति सम्पन्न जीवन। डॉ. कुमार विश्वास कहते हैं – 'आम आदमी वहीं है जो शासकीय व्यवस्था में अंतिम पायदान पर खड़ा हैं। वह वंचित है, शोषित है, दलित हैं, आदिवासी हैं। बहुसंख्यक आबादी है ऐसे लोगों की लेकिन उनकी परवाह सरकार को नहीं हैं।'[1]

इक्कीसवीं सदी के काव्य को तीन पीढ़ियों के कवियों ने मिलकर गढ़ा हैं। कवि के संवेदना विशाल अथाह सागर और गगन की ऊँचाइयों के सामान होती हैं जो उनकी परिवेशगत परिस्थितियों के अनुरूप ही होता है। आज के इस वैश्वीकरण के दौड़ में पूँजीवादी अर्थव्यवस्था ने बाजारवाद आधारित उपभोक्तावादी संस्कृति को जन्म दिया है जहाँ आम आदमी अपनी रोजी रोटी की जुगाड़ में संघर्षरत हैं। आम–आदमी की सबसे बड़ी बीमारी है गरीबी जो एड्स की तरह लाइलाज् हैं। कवि लीलाधर जगूड़ी की कविता 'बीमारी जो गरीबी है' में आम आदमी की व्यथित दशा को ही अभिव्यक्त किया गया हैं –

'गरीबी के कारण वे पहले हो बहुत कुछ खो चुके, बेच चुके लोग होते हैं
उनके पूरे जीवन में एक पूरा असन्तोष भी नहीं दिखता
एक अधूरी कोशिश भी नहीं दिखती न्यायसंगत समाज बनाने की
गुणों की गरीबी छोड़कर अन्य हर प्रकार की गरीबी।[2]

हम आज इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर विकास के नए–नए आयाम हासिल कर रहे हैं परन्तु आज भी न्यायसंगत समाज की व्यवस्था नहीं बन पायी है। हमारे देश की तीन चौथाई धड़ा आम आदमी की है परन्तु सारी सुख सुविधाओं से वो वंचित है। वहीं दूसरी ओर एक खास वर्ग के लोग हैं जो संपूर्ण जगत की ऐशो–आराम प्राप्त करने के लिए ही उनका जन्म हुआ हैं। अमीर और गरीब के बीच इतनी बड़ी खाई हैं कि जिसको पाटना

बहुत ही मुश्किल लग रहा हैं। समाज की इस दोषपूर्ण व्यवस्था को हटाना तो दूर एक पूरक व्यवस्था बनाने की अधूरी कोशिश भी नहीं की जा रही हैं, न सरकार की तरफ से और न हीं उस आम आदमी की तरफ से जो इस व्यवस्था कै शिकार है। खैर आम आदमी तो वैसे ही फटेहाल जीवन जीने को मजबूर हैं जिसके पास सादगी, इमानदारी, और कर्मठता जैसे गुणों के अलावा हर मामले में गरीब ही हैं। गरीबी के कारण वे लोग पहले ही अपना बहुत कुछ खो चुके होते हैं। अपने परिवार और अपने गुजारे के लिए बंधुआ और दास प्रथा जैसे जीवन जीने को मजबूर अपने आप को ही बेचने को प्रस्तुत रहते हैं।

स्वतंत्रता के पश्चात जब देश में प्रजातंत्र की सरकार बनी तो आम–आदमी को लगा की उनके सपनों के पंख उड़ान भरने लगा हैं परन्तु इस प्रजातांत्रिक व्यवस्था ने ही इसके साथ छला है। वर्तमान समय की की राजनीतिक व्यवस्था अवसरवादी व सिद्धांतहीन हो गई है। जो आम जन अपने नेताओं को पूरी श्रद्धा और विश्वास के साथ चुनती है वहीं उसको अपने पैरों तले कुचलती हैं। आज इस प्रजातांत्रिक व्यवस्था के प्रति लोगों का मोहभंग हो चुका है। इक्कीसवीं सदी का कवि इस व्यवस्था का स्वयं भुक्त भोगी हैं और शायद इसलिए कवि ऋतुराज अपनी कविता 'अंधेरे में प्रार्थना' में सर्वशक्तिमान प्रभू से प्रार्थना करते है–

'ले चल मुझे इस लोक से दूर कही
जहाँ निर्धन धनवानों को चुनते नहीं
जहाँ मूर्ख और पंगु नहीं बनते बुद्धिमान
जहाँ निर्बल स्त्रियों पर वीरता नहीं दिखाते शक्तिमान।'[3]

आज की लोकतांत्रिक व्यवस्था में 'बुराबक बेटा टके काबिल' जैसी कहावते बिल्कुल चरितार्थ होती है जहाँ पर ज्ञान और बुद्धि के बदले धन और बल को तरजीह दी जाती है। राजनेता और बाहुबली अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए मानवीय मूल्यों को ताक पर रख कर आम आदमी के अधिकारों का हनन करती है। सदियों से आम–आदमी हाशिए पर ही खड़ा है परन्तु उस आम–आदमी में अगर स्त्री हो तो उसकी स्थिति और भयावह हो जाती है। इस पुरुष प्रधान समाज में नारी हमेशा से ही पुरुषों के आधीन रहा और पंरपरा के कुचक्र में फंसाकर उसके अस्तित्व को ही खत्म कर दिया गया है। वर्तमान समय में भी ये पुरूष वर्ग स्त्रियों पर अपनी शक्ति प्रदर्शन में पीछे नहीं है। कवयित्री कात्यायनी अपनी कविता 'पीढ़ियों का संघर्ष' में नौजवान और बुजुर्ग नौजवानों की स्त्रियों के प्रति उनकी गलत मानसिकता को अभिव्यक्त करते हुए कहती हैं –

'वे हर खूबसूरत चीज को
गलत समझते थे।
नौजवान अपनी हर गलती
को खूबसूरत सिद्ध करते थे।'[4]

निर्धनता और आभाव के बीच सदा से ही आम–आदमी अपना गुजर बसर करता आरहा है। मुश्किल तो तब बढ जाती है जब उसे कोई काम नहीं मिलता और मंहगाई कमर तोड़ देती है तब वह अपना घर–बार छोड़ने के लिए विवश हो जाता है। विस्थापन की जलालत भरी जिंदगी जीने को मजबूर घर से कोशों दूर अपनों के लिए अपनों से दूर हो जाता है और इधर इनके परिवार को वहाँ के जमींदार और ठेकेदार के द्वारा तरह–तरह से प्रताड़ित किया जाता है। ग्रामीण, आदिवासी इलाकों में ये तो घर–घर की कहानी है। ये जहाँ कहीं भी रहे

इनकी मजबूरी का फायदा खास लोग जरूर उठाते हैं। इनका दैहिक और आर्थिक रूप से शोषण हर स्तर पर किया जाता है। कवयित्री निर्मला पुतुल अपनी कविताओं के माध्यम से इस क्रूर व्यवस्था, पूँजीवादी व्यवस्था, भूस्वामी एवं अन्य शोषकों के द्वारा किए गए कटु व्यवहार को याद करते हुए कहती हैं –

'याद हैं कितना कष्ट हुआ था
और मजूरी भी ठीक–ठीक नहीं दी
जो कहकर लिवा गया था
और उस दिन कैसे तुम्हे बहलाकर भेज
पकड़ा–धड़ी कर रहा था मुझसे।'[5]

हमारे देश की आत्मा गाँवों में बस्ती हैं। गाँव की अपनी एक अलग संस्कृति अपनी एक अलग पहचान नैतिकता से परिपूर्ण होती है। इस इक्कीसवी सदी में बदलते सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य ने गाँव की सहज स्वाभाविक प्रवृतियों को ही बदल दिया है। आधुनिकता की आँधी में अपना गाँव व पंचायत कहीं खो चुका हैं। संवेदनशील कवि जब अपने आस–पास गाँवों और पंचायतों के बदलते हूए जीवन मूल्यों के देखते हैं तो बड़े भावुक हो जाते हैं और याद करते हुए 'गाँव का घर' कविता में कवि ज्ञानेन्द्रपति कहते हैं :–

'गाँव का वह घर
अपना गाँव खो चुका है
पंचायती राज में जैसे खो गए पंच परमेश्वर
बिजली–बत्ती आ गई कब की, बनी रहने से अधिक गई रहने वाली।'[6]

गाँधी जी का विचार था कि गाँवों के विकास के बिना देश का विकास संभव नहीं हैं। उन्हीं के सपनों को साकार करने के लिए अपनी परंपरागत व्यवस्था पंचायतीराज की अवधारणा को लागु किया गया। प्रेमचंद ने भी अपनी कहानी में पंच को परमेश्वर के रूप में दिखाया हैं। परन्तु स्वार्थलोलुपता तथा भाई–भतीजावाद ने पंचायत जैसी पवित्र संस्था को ही राजनीति का अड्डा बना दिया। जिस आम–आदमी की संवेदना गाँवों और पंचायतों से जुड़ी होती है यदि वही अधोपतन के गर्त में गिर रही हो तो कवि का मन उद्विग्न हो जाता हैं। वर्तमान समय का समाज चाहे वह ग्रामीण परिवेश का हो या आधुनिकता से परिपूर्ण शहर, चारों तरफ छल–कपट, घृणा, व्यभिचार अपनी जड़ें जमा चुकी हैं। कवि उदय प्रकाश 'एक लिखी जा रही कविता का पहला ड्राफ्ट' में अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करते हुए कहते हैं :–

'बाहर सड़क पर जहाँ खुल्ला समाज है वहाँ हम
असुरक्षा, घृणा, भय, और भूख को निर्लज्जता के साथ
अपनी विकट मुस्कराहटो में ढंकते
पाँत में बैठे हैं आधी से भी अधिक सदी से
अपनी पगार और मजूरी माँगते।'[7]

समाज में जब छल–कपट, कटुता की भावना जब घर कर जाती है तब उसका सबसे पहला शिकार भोली–भाली आम जनता ही होती है। आम–आदमी की आज जो दयनीय अवस्था है उसका एक बहुत बड़ा कारण ये मायावी बाजारवाद हैं। बाजारवाद ने आम–आदमी का सर्वस्व छीन लिया हैं परन्तु आज भी इस

उपभोक्तावादी युग में आम–आदमी उस बाजारवाद का हिस्सा नहीं बन सका। आर्थिक उदारीकरण ने तो उन्हें सड़क पर ला दिया है। जब मेहनत और इमानदारी से काम करने के बाद भी पगार और मजदूरी के लिए जद्दोजहद करनी पड़े तो कवि की संवेदना इन शोषक वर्गों के प्रतिकार करने के लिए तड़प उठती हैं। जब आम–आदमी की भावनाओं का सरेआम कत्ल किया जाता है तब कवि केदारनाथ सिंह 'विद्रोह' कविता में आक्रोश भरे शब्दों में कहते हैं –

'जी– अब बहुत हो चुका
आपको सहते – सहते
हमें बेहतर याद आ रहे हैं हमारे पेड़
और उनके भीतर का वह जिन्दा द्रव
जिसकी हत्या कर दी है आपने।'8

विविध संस्कृतियों, धर्मों एवं पंथों से भारी हमारी देश की एक गौरवशाली परंपरा रही है, जहाँ पर विभिन्न समुदायों के लोग आपस में गंगा–जमुनी तहजीब के आधार पर मिलजुल कर भाइचारे के साथ रहते हैं। ये विभिन्नताएँ ही आज देश के अस्तित्व के लिए कुछ स्वार्थी लोग ने अपने स्वार्थपूर्ति के लिए खतरे की कागार पर पहुँचा दिया है। धार्मिक कट्टरता ने साम्प्रदायिकता तथा आतंकवाद को जन्म दिया जिसके शिकार आम आदमी ही हुआ है। राजनेता अपनी सत्ता पाने के लिए तथा धर्म के ठेकेदारों के साथ मिलाकर मानवता को शर्मशार कर आम–आदमी को हिंसा और दंगों की आग में ढ़केल देते हैं। गुजरात में गोधरा कांड के बाद जो प्रतिक्रियात्मक स्वरूप जो घटना घटी उस पर कवयित्री की आत्मा चित्कार कर उठी और अपनी कविता 'आह मेरे लोग ! ओ मेरे लोग !' में इस वहशीपन और दरिंदगी को व्यक्त की है –

'धुआँ और राख और जली–अधजली लाशों
और बलात्कृत स्त्रियों – बच्चियों और चीर दिये गर्भों
और टुकड़े–टुकड़े कर दिये गये शिशु – शरीरों के बीच,
कुचल दी गयी मानवता, चूर कर दिये विवेक और
दफन कर दी गयी सच्चाई के बीच,
संस्कृति और विचारों के ध्वंसा शेषों में।'[9]

आम–आदमी सदियों से ही मंदिर का घंटा बन के रहा है जिसे कुछ खास लोग सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक रूप से बजाते रहा है। समाज में आम–आदमी निचले पायदान पर हैं, परन्तु तमाम सामाजिक परंपराओं की निभाने की जिम्मेदारी इन्हीं की कंधों पर हैं। राजनैतिक रूप से ये सिर्फ वोट बैंक हैं, परन्तु इनके विकास तथा कल्याण के नाम पर और समुचित सुख–सुविधा उपलब्ध कराने के लिए संसद में जो नीतियों बनाई जाती है उनका सारा का सारा लाभ वहीं विशिष्ट लोग ले जाते हैं। आर्थिक रूप से शोषित है। वस्तुओं के उत्पादन में अपनी खून–पसीना एक कर देता है परन्तु मजे की बात ये है कि इन्हीं के द्वारा उत्पादित वस्तुओं का उपभोग खास लोगों के द्वारा किया जाता है परन्तु उन्हीं वस्तुओं के उपयोग से ये वंचित रह जाते हैं। आम–आदमी धार्मिक मान्यताओं, भावनाओं और ईश्वरीय आस्थाओं में पूर्ण श्रद्धा और विश्वास रखते हैं। यही श्रद्धा और विश्वास धर्म के ठेकेदारों के हाथों कठपुतली बना देता हैं और अपनी स्वार्थी पूर्ति के लिए जीवन के साथ

खिलवाड़ करते हैं। इक्कीसवीं सदी के कवि उन्हीं आम–आदमियों में से एक है जो आम–आदमी के दर्द का जीवंत दास्तां बयाँ कर रही है –

'दिल पे हाथ रखने से दिल का दर्द छुपता नहीं।
सागर में पानी होने से प्यास बूझती नहीं।
जिंदगी की कैद अब कटती ही नहीं
दुःख की कैद अब छूटती ही नहीं।'[10]

सन्दर्भ :–

1. https://www.bbc.com/hindi/india/2013/02/130227_budget_preview_pk.amp
2. खबर का मुँह विज्ञापन से ढ़का है – लीलाधर जगूड़ी, – 65
3. आशा नाम नदी – ऋतुराज, पृ० सं० – 11
4. फुटपाथ पर कुर्सी – कात्यायनी, पृ० – 106
5. नगाड़े की तरह बजते हैं शब्द – निर्मला पुतुल, पृ० – 40
6. संशयात्मा – ज्ञानेन्द्रपति पृ० – 16.
7. एक भाषा हुआ करती हैं – उदय प्रकाश, पृ०– 15
8. सृष्टि पर पहरा – केदारनाथ सिंह, पृ० – 11
9. फुटपाथ पर कुर्सी – कात्यायनी, पृ० – 170
10. कब तक.....? – प्रा० लता गुरव, पृ०– 75

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 25-29

शांति बाँह में चुभी चूड़ी के आँसू जितना जख्म... : 'पाश' 'युद्ध और शांति' के संदर्भ में

डॉ. रमेश यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, महारानी काशीश्वरी कॉलेज, कोलकाता–700003

सारांश :–

'पाश' मूलतः पंजाबी भाषा के जाने–माने कवियों में एक प्रमुख कवि हैं। वे और उनकी कविताएं दोनों हिंदी में अनुवाद के माध्यम से अपना पैठ बना पाये। 'पाश' साहित्य में एक विद्रोही व्यक्तित्व व कवि के रुप में ही पहचाने जाते रहे हैं। मूल रुप से 'पाश' एक सामाजिक व सांस्कृतिक कार्यकर्त्ता और एक प्रखर कवि थे। कवि 'पाश' को यह समझ पूरी तरह से स्पष्ट थी कि मिजाज और चेतना के साथ ही अपने संसाधनों की रक्षा के लिए नौकरशाही, लाल–फीताशाही, पूंजीपतियों और इन सबसे बड़े षड्यंत्रकारी संरक्षक पूरी राजनीतिक जमात के विरुद्ध संघर्ष या लड़ाई करना अब अति आवश्यक हो गया है। 'पाश' इस तरह के संदर्भ के लिए निरंतर प्रतिबद्ध रहे हैं। उनके जीवन का यह परम कर्त्तव्य बन गया था कि समाज में उपस्थित शोषक और शोषित वर्ग के मध्य वर्षों पूर्व से चली आ रही खाई को कैसे पाटा जाय। 'पाश' के लिए केवल खाई को पाटना या कम करना ही मकसद नहीं रहा वरन दूर करना और सदा के लिए निजात पाना भी रहा है। उनके लिए 'कविता' केवल कोरी कविता नहीं थी बल्कि एक 'बन्दूक' भी थी जिसको उन्होंने महीनों कैदखानों में रहकर महसूस किया था। शारीरिक यातनाएं झेलना, मानसिक प्रताड़ना सहना और हर मुश्किल समय में भी बर्बाद हो रहे समुदाय के लिए संघर्षरत रहना ये उनके जीवन के अविच्छिन्न हिस्से थे। कवि श्पाशश के लिए कविता गोली है, बारुद है और बम भी है अर्थात् वे सभी औजार उनके लिए थे जो एक समाजवादी क्रांतिकारियों के लिए होती हैं।

वे जानते थे कि जमीन का कोई ऐसा कोना या जगह नहीं है जहाँ अत्याचार और शोषण नहीं है इसलिए वे अपने जीवन के भोगे अनुभव और यथार्थ को भावनात्मक रुप देकर कविता को एक सैनिक के रुप में प्रस्तुत करने की कोशिश करते हैं। विश्व के प्रत्येक मानवीय समाज की पृष्ठभूमि के मूल मूल्यबोध की उपस्थिति ही उस समाज को दृढ़ करती है। समाज का प्रत्येक तबका इसी कड़ी में अपने अस्तित्व की पहचान करने की खोज करता है, और वह सदा इसके लिए संघर्षरत भी रहता है। इस परिप्रेक्ष्य में अगर हम देखें तो पायेंगे कि टॉल्सटॉय ने अपनी प्रमुख रचना 'युद्ध और शांति' में जिन वैश्विक परिस्थितियों की ओर हमारा ध्यान खींचते हैं उस स्थिति और परिस्थिति में घटित वे सारी घटनाएं मानवीय समाज और संस्कृति तथा मूल्यबोध के लिए प्रासंगिक हैं। विश्व में युद्ध जीवन संघर्ष की चरम स्थिति है जो कहीं–न–कहीं शांतिविहीन अवस्था की ओर संकेत देती है। युद्ध और

शांति का लोक, समाज और राज पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है, जिससे हम सामाजिक प्राणी होने के नाते किसी मायने में इससे अछूते नहीं रह सकते हैं। उपरोक्त सन्दर्भ में प्रिय कवि 'पाश' की कविता 'युद्ध और शांति' का प्रासंगिक विश्लेषण और उसके महत्व को रेखांकित किया जा सकता है।

बीज शब्द :– युद्ध, शांति, संघर्ष, यथार्थ, पूंजीवाद, स्तालिनवादी, समाज, संस्कृति, अधिकार–हक, जिंदगी, स्पेस, समस्या, निजात, चेतना, शोषक–शोषित, अत्याचार।

प्रस्तावना :–

'युद्ध और शांति' 'पाश' की अन्यतम कविताओं में अपना विशेष स्थान रखती है, और नीचे संदर्भित रचनाओं में अग्रणी। लेकिन इसके समानान्तर अगर हम समय और काल को बयां करती कविताओं की ओर ध्यान दें तो पायेंगे कि विषय केंद्रित अन्य कविताओं में सफेद रात (आलोक धन्वा), बच्चों के लिए चिठ्ठी (मंगलेश डबराल), अगर हो सके (अशोक वाजपेयी), फौजी तैयारी, चक्रव्यूह, शांति–वार्ता (कुँवर नारायण), एक चिनगारी के लिए (नवारुण भट्टाचार्य), चाय पर शत्रु सैनिक (विहाग वैभव), जलियांवाले बाग में वसंत (सुभद्रा कुमारी चौहान), आँख (कमलजीत चौधरी), शांति के विरुद्ध एक कविता (गंगा प्रसाद विमल), समकालीन (गोरख पांडेय), लद्दू घोड़े (हरिश्चंद्र पाण्डे), पुश्तैनी तोप (असद जैदी), वसंत के लिए युद्ध (अनिल जनविजय), कब्रगाह में रोने की जगह (लीलाधर मंडलोई) इत्यादि। प्रत्येक युद्ध के पश्चात धरा पर या धारा का विनाश हुआ और मानवीय समाज का भी। सवाल है कि समस्या का समाधान युद्ध नहीं हो सकता है। लेकिन कुछ विशेष समस्याओं के लिए युद्ध की आशंकाएं बनी रहती हैं। युद्ध किसी भी सुसंस्कृत समाज या देश के लिए सही नहीं हो सकता है। भरसक हम सभी को युद्धीय रणनीति या युद्ध–कार्यकुशलता से दूर रहना चाहिए।

विश्व साहित्य में टॉल्स्टाय (1828–1910), दस्तोव्स्की, गोर्की, चेखव आदि साहित्यकारों ने मानवीय सम्वेदनाओं की अभिव्यक्ति को विशिष्ट राजनीतिक, सामाजिक और ऐतिहासिक भाव–बोध के धरातल पर प्रतिष्ठित किया है। जैसे यह युग जाहिर है, 'युद्ध के आकार को सिकोड़ना चाहा। हम बिना शान के फन्दों में शांति–सा कुछ बुनते रहे।' अगर हम 'पाश' की कविताओं की बात करें तो उनकी कविताएं हमें सामाजिक, राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में समझने और समय की तमाम समस्याओं से जूझने की सूझ देती हैं। चूंकि 'पाश' एक ऐसे क्रांतिकारी कवि हैं जो सदा समय के झंझावतों और अटकलों से लोहा लेते रहे हैं। कारण जो भी हो कवि 'पाश' हर मुमकिन मानवता के समर्थन में आत्मिक बल और संघर्ष के लिए सामर्थ्य जुटाने की अथक कोशिश करते हैं। युद्ध की आशंकाएं और युद्ध होने तक में युद्ध मध्य में ही खत्म होने की एवज में कवि 'पाश' मानव समाज के उन व्यक्तियों को अपने तीखे शब्द वाणों से खबर लेते हैं जो थोड़ी–बहुत कुछ किसी से पाने की आशा या उम्मीदें और मन की आकांक्षाओं के मोहपाश में फँसकर युद्ध की परिसीमा को संकीर्ण कर देते हैं। युद्ध के आकार और आकार से बनने वाली उम्मीदें कहीं–न–कहीं युद्ध के परिणाम हो सकते थे, लेकिन व्यक्ति मन की सूक्ष्म अपेक्षाएं उन्हें बाधित कर देती हैं।

इस संदर्भ में कवि 'पाश' लिखते हैं, 'हम जिन्होंने युद्ध नहीं किया/तुम्हारे शरीफ बेटे नहीं हैं जिंदगी।/ वैसे हम हमेशा शरीफ बनना चाहते रहे/हमने दो रोटियों और जरा–सी रजाई के एवज में/युद्ध के आकार को सिकोड़ना चाहा।'[1] युद्ध और युद्ध से बचने की लालसा मनुष्य को कितना छोटा कर देती है। इसमें हम इसे पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक अड़चनों को समक्ष रखकर इससे न गुजरने की सिफ्त या सिफारिश करते

रहे। यह नहीं कि हम युद्ध करने में लचर थे, बल्कि युद्ध करने की झुंझलाहट ने हमें युद्ध से दूर रखने का भरसक प्रयास किया। जिनमें क्षितिज में सबकुछ खो जाने का डर, पिता, पुत्र, नाजुक–सी बेटियों के आँखों की कोर से निकलने वाले आँसू भरे जख्मों से सदा डरते रहे। कवि श्पाशश समाज की उन तमाम सच्चाई से रु–ब–रु होते हैं जो किसी भी मनुष्य को वह सच्चाई डराती है या पारिवारिक मनोभाव मन में उभरकर बाधित करती है। लेकिन 'पाश' इसकी परवाह किये बिना हर संभव युद्ध करने या न करने के द्वंद्व से मुक्त रहना चाहते हैं। कवि इस संदर्भ में लिखता है, 'युद्ध से बचने की लालसा में हम बहुत छोटे हो गये/कभी तो थके हुए बाप को अन्नखाऊ बुड्ढे का नाम दिया/कभी चिंताग्रस्त बीवी को चुड़ैल का साया कहा/...और हम नाजुक–सी बेटियों की आँख में आँख डालने से डरते रहे/युद्ध सिरों पर आकाश की तरह छाया रहा/हम धरती पर खोदे गढ़ों को मोर्चों में बदलने से झिझकते रहे।'[2]

कवि डर और डर से उठे प्रश्नों को हमारे समक्ष लाता है, जो कहीं–न–कहीं हम सभी के लिए सज्जनता का सूचक बन गया या कह लें तो वह डर हमें किसी मान–सम्मान बन हमारी पगड़ी बन गया या और बहुत कुछ जो युद्ध में शामिल नहीं हुए या जो युद्ध की बात सुनकर डर गये, कवि ऐसों को आडम्बरी या पाखंडी कहता है। मनुष्य मन की पाखंडी एवं विकट स्थिति को कवि अच्छी तरह से जानता है। इसलिए ऐसे लोगों को कवि प्रश्नों के घेरे में लेता है, और वह इस संदर्भ में लिखता है, 'डर कभी आत्मा में सज्जनता बन गया/...ऐ जिंदगी, हम जिन्होंने युद्ध नहीं किया/तुम्हारे बहुत पाखंडी बेटे हैं।'[3] युद्ध और शांति दोनों एक दूसरे के विपरीत भी हैं और पूरक भी, क्योंकि कुछ लोगों के लिए युद्ध के विपरीत शांति की अपील वास्तविक तौर पर अपील न होकर श्बाघोंश के जबड़ों में स्वाद बनकर समयानुसार टपकती रहती है, ऐसे में कवि का कहना है कि निरा शांति की अपील या इसके लिए कोशिश करना बेजा ही है।

कवि लिखता है, 'हम जिस शान्ति के लिए रींगते रहे/वह शांति बाघों के जबड़ों में/स्वाद बनकर टपकती रही/शांति कहीं नहीं होती –/आत्मा में छिपे गीदड़ों का हौंकना ही सब कुछ है।'[4] युद्ध काल में भी समानांतर रुप से प्रेम के गीत गाये जाते रहे हैं, कोयल पक्षी की रोमांचकारी स्वर गूंजती रही और प्रकृति में दुःख–सुख, हर्ष–उल्लास चलती रही हैं। लड़ाई–युद्ध भी इन्हीं के मध्य जो अपने समय परिस्थितियों में घटित होते रहे हैं। जिसको हम विलियम वर्ड्सवर्थ की प्रमुख कविता 'सोलिटरी रिपर' में हुई ऐसी सूक्ष्म अभिव्यक्ति को देख सकते हैं। युद्ध की प्रक्रिया प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से चलती रहती है। जो युद्ध करना चाहते हैं या जो युद्ध नहीं करना चाहते हैं उन दोनों के लिए युद्ध और शांति के मध्य के द्वंद्व सदा मथते रहते हैं। पाश की कविता युद्ध या संघर्ष के लिए प्रेरित तो करती है लेकिन विध्वंस रुप से परे जाकर उनकी कोशिश केवल मात्र किसी समुदाय विशेष या वर्ग के जीवन की तमाम जहालतों से मुक्ति का रहा है।

कवि अपनी कविता 'युद्ध और शांति' में इसलिए जिन प्रसंगों को उठाता है वे सारे प्रसंग युद्ध के लिए नहीं हैं बल्कि उन हक या अधिकारों को पाने के लिए है जिससे एक विशाल जन समुदाय की बहुत–सी अपेक्षाएं हैं। लेकिन जिन्होंने युद्ध को घटित या घटाने के लिए अस्त्र बनाए अपनी व्यक्तिगत मुनाफे के लिए कॉरपोरेट घराने और सम्मिलित लोगों को सवाल के घेरे में लेना चाहिए। जेनीविन युद्ध के नाम पर जैसे सीरिया, फिलस्तीन, इराक, अफगानिस्तान या ऐसे कइयों देशों को झोंक दिया गया। जिनके साथ एक साम्राज्यवादी शक्ति और सामर्थ्य कार्य कर रही हैं और सत्ता के नशाखोर इनके समर्थन में हैं। फलतः युद्ध के उपरांत विनाश और सर्वनाश

की स्थिति भयावह एवं जघन्य है, जिसको हम नजरअंदाज नहीं कर सकते। जिनमें अत्यधिक मुखौटे छिपे हैं, उनको 'बॉब डिलन' जैसे कवि उघाड़कर रख देता है। जिन्होंने युद्ध के लिए बन्दूकें बनाई, बम–गोले बनाए वे कौन हैं? उन्हें तो हमें जानना चाहिए, बेजा शांति की खोज करने वालों उन्हें प्रथमतः जानें! इस संदर्भ में 'बॉब डिलन' ने कविता 'तुमने ही बनाई सारी बन्दूकें' में लिखा है, 'आओ युद्ध के मालिकों/तुमने ही बनाईं सारी बन्दूकें/तुमने ही बनाए मौत के सारे हवाई जहाज/तुमने बम बनाए/...मैं चाहता हूँ कि तुम जान लो/कि मैं तुम्हारे मुखौटे से देख सकता हूँ/तुमने कभी कुछ नहीं किया/लेकिन जो भी बनाया वह विनाश के लिए।'[5]

युद्ध पर कविताएँ पूरे विश्व में विश्व के काले क्षणों को कैद करती रही हैं। पुराने ग्रंथों से लेकर आधुनिक मुक्त छंद तक या यों कह लें कि युद्धीय कविताएं विविध अनुभवों की पड़ताल और शिनाख्त करती हैं तथा कहीं जीत का जश्न मनाती हैं तो कहीं पतितों के मान–सम्मान करते हुए दमन और क्रूरताओं की रिपोर्टर बन जाती हैं। लेकिन उनकी खबर युद्ध कविता अवश्य लेती है जिन्होंने अपनी आँखें मूंद लीं। इस संदर्भ में अगर श्पाशश की कविता 'युद्ध और शांति' पर बात करते हुए कुछ तथ्य सामने आते हैं कि 'पाश' के जीवन और साहित्य कर्म में कोई अंतर्विरोध नहीं थे, दकियानूसी औपचारिक शिक्षा का मोहपाश में 'पाश' पास नहीं हो सके। बल्कि वे जीवनपर्यंत साम्राज्यवाद और नाजीवाद विषय के प्रतिरोध में खड़े रहे। कला और कलात्मकता से कवि 'पाश' आगे निकलकर हर मुश्किल दौर से मुठभेड़ किये। 'पाश लगातार सरकारी दमन का शिकार होते रहे, झूठे मुकदमों में फँसाये जाते रहे, बार–बार जेल गये, मगर झूठे वामी नेताओं ने पाश को भगोड़ा और गद्दार कहकर किनारे लगाने में कोई कसर नहीं छोड़ी,... स्तालिनवादी नेता खालिस्तानियों से लड़ने का स्वांग करते, लाइसेंसी बन्दूकों के सहारे अपना सर बचाने में जुटे थे। ठीक इस वक्त पाश त्रिकोणीय संघर्ष में जुटा था और युवा कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं को खुद को क्रांतिकारी सिद्धान्त से सन्नद्ध करने के लिए ललकार रहा था।'[6] कवि संघर्ष के लिए हर सम्भव प्रयासरत है। क्योंकि कवि शांति को वह वैसे ही मानता है कि जैसे कि किसी यथार्थवादी जीवन के अनुभव से अपने को किनारा कर सु–स्वप्न देखना और भूमिगत साथी से आँखें बचाकर अंदर से खोखलेपन से भर जाना और किसी बदबूदार नाले की ओर झुककर नारों से घबराकर पलायन करना।

कवि ऐसी स्थिति में शांति के लिए आह्वान करना दुनिया का सबसे हास्यास्पद या व्यंग्य रस से ज्यादा कुछ नहीं है। कवि लिखता है, 'शांति' – घुटने में गर्दन देकर जिंदगी के सपने में देखने की कोशिश है/शांति वैसे कुछ नहीं है/भूमिगत साथी से आँख बचा लेने के लिए/सड़क किनारे नाले में झुक जाना ही सबकुछ है/. ..नारों की गरज से घबराकर/...शांति बाँह में चुभी चूड़ी के आँसू जितना जख्म है।'[7] कवि संघर्ष का समर्थक है लेकिन विनाशकारी युद्ध के लिए न होकर जीवन जीने के स्पेस के लिए। उसे यह आशंकाएं हैं कि हर सम्भव एक विशेष वर्ग युद्ध के लिए कोशिश में है। अकेले जीवन में मानवीय मूल्यबोध को स्थापित करने के लिए भी संघर्ष जरुरी है, इस बीच प्रेम होना या करना बेजा सहमति है। जो हर समय प्रेम में प्रेमी और प्रेमिका की आँखों में द्वंद्व का फुला गुब्बारा रहता है, जिसे कवि निहारने में सूक्ष्मता का एहसास करता है जो एक दिन यह एहसास बूढ़ी माँ के लिए नजरों का चश्मा बन जायेगा और शहीद हुए वीर सपूतों और संघर्षशील लोगों के लिए उनके श्मशान पर उम्मीदें बनकर फूल खिलेगा। इस संदर्भ में कवि लिखता है, 'युद्ध के बगैर हम बहुत अकेले हैं/अपने ही आगे दौड़ते हुए हाँफ रहे हैं/...युद्ध में रोटी के हुस्न को/निहारने जैसी सूक्ष्मता है/...युद्ध किसी महबूब के लिए आँखों में लिखा खत है/...युद्ध बूढ़ी माँ के लिए नजर की ऐनक बनेगा/युद्ध हमारे बुजुर्गों की कब्रों पर/

फूल बनकर खिलेगा।'[8]

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि 'युद्ध और शान्ति' कविता के माध्यम से कवि श्पाशश समाज और व्यक्ति के अंर्तद्वंद्व को यहाँ समक्ष लाते हैं। युद्ध जीवन–जगत का अंश मात्र है शाश्वत नहीं। चाहे प्रेम हो या युद्ध दोनों स्थितियों में युद्ध माकूल संगति है। कवि 'पाश' के लिए जीवन में संघर्ष, द्वंद्व और प्रतिरोध हर सम्भव मुमकिन हैं। व्यक्ति के लिए जीवन जीने की लालसा संघर्ष से आँखें चुराने जैसा नहीं हो सकता बल्कि हर स्तर पर लड़ाई करते हुए सामाजिक जीवन में मूल्यबोध को स्थापित करना होगा, और निश्चित तौर पर स्वप्न हो या दिवा–स्वप्न हर सम्भव साम्राज्यवादी शक्तियों या पूंजीवादी घेरा–बन्दियों से मुठभेड़ करना तथा जिंदगी जीने की जिजीविषा को जिंदा रखना, वे चाहे द्वंद्व पथ से चलकर या शांति से मिले, हर सम्भव कोशिशों को निरंतर जारी रखना एक संघर्षशील व्यक्ति के लिए जरुरी पाठ हो जाता है। 'पाश' जिस बाँह में धँसी चूड़ी के आँसू जितना जख्म शांति के लिए करते हैं वह कवि के लिए केवल एक झूठ या फरेब की गुंजाइश मात्र हो सकता है, क्योंकि कवि यहाँ पूर्ण रुप से आश्वस्त है कि कोई भी चीज निरा शांति मात्र से नहीं मिलती है, वो चाहे हक हो या अधिकार, स्पेस समाज में हों या संस्कृति में या अर्थ में, अमूमन सभी के लिए कमोबेश संघर्ष या द्वंद्व वाजिब है। भौतिकवादी समाज या दुनिया के लिए द्वंद्व अति आवश्यक है, क्योंकि किसी भी समाज को अग्रसरित या प्रगतिशील बनाने की नींव में यह कार्य संभव है। तथाकथित समाज या यथावत दुनिया के यह मूल में है। संस्कारजनित मानवीय संवेदना या सहानुभूति के संदर्भ में वे सभी स्पेस चाहे प्रेम से मिले या संघर्ष कर, सदा उनके लिए प्रतिबद्ध रहना कवि 'पाश' की कविता का मूल उत्कर्ष और प्रतिपाद्य रहा है।

संदर्भ :–

1. पाश, बीच का रास्ता नहीं होता, चमनलाल (सं–अनु.), संस्करण : 2021, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 146.
2. वही., पृ. 146.
3. वही., पृ. 146.
4. वही., पृ. 147.
5. https://www.amarujala.com kavya, Bob Dylan famous Lyrics Masters of war.webpage.
6. https://www.workersocialist.blogspot.comwebpage, रजिंदर, राजेश त्यागी, अवतार सिंह पाश : उनका युग, कविता और राजनीति, 12 अप्रैल, 2015
7. पाश, बीच का रास्ता नहीं होता, चमनलाल (सं–अनु.), संस्करण : 2021, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 147.
8. वही., पृ. 148–149.

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 3-4
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 30-34

भारत विभाजन : मासूम बच्चों की त्रासदी

डॉ. अमित कुमारी
एक्सटेंशन लेक्चरर इतिहास विभाग, आई.जी. कॉलेज, टोहाना।

शोध सार :–

विभाजन या बटंवारा किसी देश, भूमि या सीमा का नहीं होता, विभाजन लोगों की जिंदगी, भावनाओं का होता है जो हमेशा के लिए उनको इतने गहरे जख्म दे जाता है कि वह उनकी खुद की और आने वाली नस्लो की जिंदगी को झकझोर कर रख देता है। सन् 1857 से 1947 तक 90 सालों के संग्राम आंदोलन और बलिदान के बाद भारतीयों ने आजादी की जगह विभाजन की त्रासदी को देखा।[1] देश विभाजन एक ऐसी त्रासदी थी जिससे मानवता आहत हुई थी। प्रख्यात उर्दू कथाशिल्पी आदत हसन मंटों ने तल्ख अंदाज में बेबाक टिप्पणी की है – ''हिंदुस्तान आजाद हो गया। पाकिस्तान अस्तित्व में आते ही आजाद हो गया, लेकिन इंसान दोनों देशो में गुलाम था। साम्प्रदायिकता का गुलाम, धार्मिक पागलपन और जुनून का गुलाम।'' देश का विभाजन एक ऐसी सच्चाई बनकर आज भी हमारे मन–मस्तिष्क को झकझोरती है, जिसे भुला पाना कदापि संभव नहीं है। बंटवारा एक चट्टान की तरह लोगों के सिर पर टूटा था और जब तक व सांस ले पाते, कुछ सोच पाते, सब कुछ नष्ट हो चुका था। सदियों से अर्जित संस्कृति, जातीयता, भाषा और प्रकृति तथा मानवीय संबंध साम्प्रदायिक आग में जलकर राख हो चुके थे।[2] विभाजन स्थूल और शारीरिक रूप में ही एक दुर्घटना नहीं थी, यह एक मानवीय ट्रेजेडी भी थी, जिसने लाखों लोगों को भावनात्मक, विचारात्मक, मनोवैज्ञानिक, मानसिक और आत्मिक स्तरों पर प्रभावित किया था। यह दुर्घटना केवल राजनीतिक या किसी एक वर्ग विशेष से जुड़ी नहीं थी, बल्कि इसमें लाखों–करोड़ों लोगों की जिंदगी, उनका वर्तमान और भविष्य उनकी सभ्यता और संस्कृति, उनका आचरण और व्यवहार भी जुड़ा हुआ था।

भारत विभाजन के परिणामस्वरूप अनेक समस्याएं जैसे साम्प्रदायिक हिंसा का कहर, शरणार्थी समस्या, कश्मीर समस्या, नारी–वर्ग की त्रासदी, अल्पसंख्यक समस्या, मासूम बच्चों की समस्या आदि प्रमुख थी। देश–विभाजन के परिणामस्वरूप समस्याओं में बच्चों के संबंध में इतिहास में चर्चा न के बराबर हुई है। दुहमुंहे, मासूम, अबोध बच्चे या तो माँओं की गोद से छीनकर मार दिए गए या जलती आग के हवाले कर दिए गए अथवा जो किसी तरह बच–बचा गए उन्हें 'यतीम', 'लावारिश', 'नाजायज', 'अवैध' करार दे दिया गया। बंटवारे के छह दशक पूर्ण होने के बाद भी बच्चों के विषय में कोई मुकम्मिल जानकारी नहीं मिल पाई जो माताओं की गोद से निर्ममतापूर्वक अलग कर दिए गए थे। प्रख्यात स्त्रीवादी लेखिका उर्वशी बुटालिया, (खामोशी के उस पार), अनीस किदवई (आजादी की छांव में), गुजराती की लेखिका कमला बने पटेल (मूल सुता उखड़े) जैसे विदुषियों का

महत्वपूर्ण योगदान है जिन्होनें विभाजन के समय के जीवित बच्चे जो अब उम्र के पचास वर्ष या उससे भी अधिक पार कर गए हैं की जानकारियां हासिल की हैं। उन बच्चों के विषय में विभाजन संबंधी उनके अनुभवों और त्रासद स्थितियों को लिपीबद्ध किया है।

उर्वशी बुटालिया के शब्दों में– ''विभाजन का अब तक मैंने जो भी इतिहास देखा है, उसमें बच्चों का कोई उल्लेख नहीं है। यह आश्चर्यजनक नहीं है क्योंकि इतिहास के विषयों के रूप में बच्चों से निबटना मुश्किल है। इतिहासकार पूछ सकता है– आप बच्चों के रूप में उनके अनुभवों को कैसे खोजते हैं? इतिहास के – एक साधन के रूप में स्मृति को ज्यादातर अविश्वासनीय समझा जाता है, 'तथ्यो' के रूप में यह कुछ भी नहीं देती। प्रौढ़ अनुभव के प्रिज्म से छनी हुई बचपन की यादें– ये आत्मकथा के रूप में तो स्वीकार्य हो सकती हैं लेकिन जरूरी नहीं कि यह इतिहास ही हो। तब हम बच्चों के अनुभवों से कोई अर्थ कैसे निकालते हैं? जहां बंटवारे के इतिहास का संबंध है यह खासतौर पर महत्वपूर्ण है। बच्चों के चारों ओर इतना इतिहास बुना गया है कि उनकी इसमें अनुपस्थिति अब काफी दुखद है। भारत और पाकिस्तान जितना औरतों को लेकर झगड़े थे, उतना बच्चों पर नहीं।'' सच उतना ही नहीं होता जितना इतिहास में दर्ज होता है बल्कि इतिहास से बाहर भी सच होता है और ज्यादा प्रामाणिक भी।

उपर्युक्त विदुषियों ने शोधपरक काम किया है उन व्यक्तियों से मिलकर उनकी जिंदगी की उन बंद किताबों के धूल जमे पन्नों की धलू झाड़कर तल्ख सच्चाइयों को जानने–समझने का अनथक प्रयास किया है जिस विषय की आरे अब तक न तो इतिहासकारों ने अपनी कलम चलाई है न ही स्वनामधन्य रचनाशिल्पियों ने। बंटवारे के समय अनूमन 75000–100000 स्त्रियों का अपहरण हुआ था। उन अपहृत स्त्रियों के बारे में छानबीन करने, पता लगाने में लगभग एक दशक गर्क हो। गए। अंदाजा लगाया जाए कि अपहरण की गई स्त्रियों में से आधी स्त्रियों के बच्चे थे तो इनकी संख्या में परित्यक्त बच्चे भी थे या जो यों ही छोड़ दिए गए थे। इनका कोई रिकॉर्ड उपलब्ध नहीं है। जो बात रिकॉर्ड में नहीं होती वह लोगों की जुबां पर होती है। परित्यक्त, निराश्रित, खोए हुए तमाम बच्चों के बारे में आम लोगों से जो जानकारियां और सूचनाएं उर्वशी बुटालिया ने इकट्ठी की हैं, उससे इस बात की प्रतीति तो हो ही जाती है कि उन नन्हें–मुन्ने, मासूम, अबोध, अनाथ बच्चों पर क्या बीती थी। व्यथा–कथा चाहे त्रिलोक सिहं की हो या कुलवतं सिहं की या मुराद या गांधी वनिता आश्रम, जालंधर की।

एक महिला डॉक्टर की जो उसी आश्रम की ही बच्ची थी, सभी को विभाजन की विभीषिका का विषफल भागे ना पड़ा था। उस समय स्थिति यह थी कि मां हिंदू थी और किसी मुसलमान के संपर्क में आने पर यदि माँ बन गई थी तो उस बच्चे का वतन क्या होगा? भारत या पाकिस्तान। यह निश्चित नहीं हो पाया था। उसी प्रकार यदि माँ मुस्लिम थी और पिता हिंदू तो क्या उस बच्चे को भारत में रहना पड़ेगा? अनेक ऐसे बच्चे थे जिन्हें सुधार गृहों या अस्पतालों से अपहरण कर लिया गया था। कुछ सामाजिक संस्थाओं ने उनके लालन–पालन की जिम्मेदारी ली थी जहां से निःसतांन इच्छुक दंपत्ति यदि गोद लेना चाहते थे तो उन्हें दिया जाता था। बहुत सी गर्भवती स्त्रियों को गर्भपात के लिए विवश भी किया जाता था, वैसे स्वेच्छा से भी गर्भवती स्त्रियों ने अपना गर्भपात स्वयं भी करवाती थीं क्योंकि उनके सामने सवाल था कि वे अपने बच्चे को कैसे रख सकेंगी– मुसलमान बाप से पैदा बच्चे, अनचाहे बच्चे... अक्सर कोई औरत कहती, 'मैं बच्चे को अपने साथ ले जाना चाहती हूं पर मैं इसे अपने पास नहीं रख सकती। मैं कैसे रहूंगी? हर कोई मुझे 'थू–थू' करेगा।[3] बच्चों के अपहरण के संबंध में

सामाजिक कार्यकर्ताओं का यह ख्याल था कि मुसलमान परिवार द्वारा अधिक संख्या में हिंदू और सिख बच्चे उठाए गए थे।

दमयंती सहगल जो एक सक्रिय सामाजिक संगठन की सदस्या थी ने इस बात का खुलासा कुछ इस प्रकार किया है– 'मुझे बताया गया कि गुजरात में एक नवाब था जो अपने सिंहासन पर बैठता और अपहृत लड़कियों की उसके सामने परेड कराई जाती और वह उनमें से खूबसूरत लड़कियों को चुन लेता। जो जवान लड़कियां थीं उनको वहां छुआ करता, और अधिक उम्रवालियों को बांट देता। लड़कियां कुछ नहीं कर सकतीं थी– विरोध कुछ भी नहीं। वह कहता–फलां–फलां को कैटेगरी एक, कैटेगरी दो, में डालो और जो सबसे अच्छी हों, उन्हें जनाने में डालो।'' बंटवारे की कीमत तो सभी को चुकानी पड़ी जो उसके लिए तैयार भी नहीं थे यानि इन मासूम बच्चों को भी। वे मासूम तो यह भी नहीं जानते थे, कि इस बंटवारे का दुष्परिणाम इतना वीभत्स और दुर्भावनापूर्ण होगा। अमानवीय कृत्य करूण क्रंदन अत्याचार से धरती ही नहीं कापी वरन आसमान भी कांप उठा था। सभी जगहों पर अफरा–तफरी का माहौल कायम हो चुका था। दुध मुँहे बच्चों को तलवार की नांके से गोद गोदकर अग्नि के हवाले कर दिया गया। विभाजन का सबसे अधिक कहर नारी वर्ग और मासूम बच्चों पर बरसा। मासूम बच्चों की त्रासदी पर साहित्य में अनेक रचनाएं भी लिखी गई है।

सन् अड़तालीस के प्रारम्भ में अपहृत औरतों और बच्चों की बरामदगी का प्रशसनीय कार्य शुरू हो गया था। उस समय के दौरान कुछ अजीबों–गरीब घटनाएं भी घट रही थी, जैस` कुछ लड़कियां अपने मां–बाप के पास जाने से इंकार कर रही थी, कुछ मां–बाप के खौफ से आत्महत्या कर लेती हैं तो कुछ सदमों से पागल हो जाती हैं। कुछ फूले हुए पेट लेकर बरामद होती हैं। उनकी समस्या है कि इन पेटों का क्या होगा? उनमें जो कुछ भरा है, उनका मालिक कौन बने पाकिस्तान या हिन्दुस्तान। गैर–सरकारी संगठनों में राहत और बचाव कार्यों के समन्वय के लिए एडविना मांउटबटेन के नेतृत्व में बने मूल संगठन यूनाइटेड कांउसिल ऑफ रिलीफ एण्ड वैल्फेयर की रिकार्ड कलेक्टर सावित्री मखीजाने ने उस भयावह दृश्य के बारे में बताया। जब लाहौर में एक बड़ा कैम्प बन्द हुआ था। बंटवारे के कुछ महीने बाद, उस समय, वह स्कूल ऑफ सोशल वर्क, दिल्ली में थी। कैम्प बन्द होने के कुछ ही समय बाद उन्हें खबर मिली कि वहाँ कोई दर्जन–भर बच्चें थे, जो पीछे छोड़ दिए गए थे, जो किसी के भी नहीं लगते थे। अब उन बच्चों के साथ क्या किया जाता? बच्चे दिल्ली भेज दिए गए और मृदुंला सारा भाई द्वारा एक घर में रखे गए।

स्कूल ऑफ सोशल वर्क के सामाजिक कार्यकर्त्ताओं ने तब ऑल इंडिया रेडियो पर विज्ञापन दिया कि यदि कोई उन्हें गोद लेना चाहे तो लिखे। अब बड़ी संख्या में पोस्टकार्ड आने लगे। लेकिन यहाँ भी रोजमर्रा की जिंदगी की तरह हर कोई पहले लड़का ही चाहता था। उन बसे हारा लड़कियों का क्या कसूर था, जो विभाजन से अन्जान थी और इस विभाजन की त्रासदी को झेल रही थी। ऐसे बहुत से बच्चों की जानकारी लेखिका उर्वशी बुटालिया ने एकत्रित की। जब लेखिका कुलवंत सिंह से मिलती है तो कुलवंत सिंह साठ साल का था और विभाजन के दौरान की आपबीती सुनाता है। वह बताता है कि मैं छोटा था, मेरी माँ ..... जब उसने मेरे पिता को मारे जाते देखा– उन्होंने उनके सौ टुकड़े कर दिए, पहला वार उन्होंने गर्दन पर किया और तब उनके सौ टुकड़े कर दिए–उस कैंप में मैं कांप रहा था, मेरे पैरों पर कई लाशें पड़ी थी। वहां चारों और आग लगी हुई थी, मैं प्यास से मरा जा रहा था। उन्होंने मेरी आवाज सुनी–मेरी माँ ने मेरा सिर उठाया और और मेरी चाची ने मेरी टाँगे

पकड़ी, और अपनी छह महीने की बेटी, को भी पहले उन्होनें अरदास की और उसे आग में फेंक दिया और तब वे बोली बीवियों हमारी इज्जत खतरें में है, हम अपनी इज्जत बचाएंगे या अपने बच्चों की। फिर बारी–बारी से सभी ने अपने बच्चों को आग में फेंक दिया और मेरी माँ ने भी मुझे उठाया और मेरे पिता की लाश के बगल में रख दिया, जहाँ चारों आरे आग थी। कुलवंत सिंह जैसे अनेक मासूम बच्चों को विभाजन की त्रासदी को झेलना पड़ा। उनका कोई कसूर न होते हुए भी उन्हें बहुत पीड़ाएँ झेलनी पड़ी। इन बच्चों के लिए अनेक केन्द्र खौले गए और अनेक सामाजिक कार्यकर्त्ताओं द्वारा अनेक प्रयास इनकी समस्याओं को दूर करने के लिए किए गए। नवम्बर 1948 में अनीस किदवई ने दिल्ली में इर्विन अस्पताल का दौरा किया। वह ठुकराए हुए परित्यक्त बच्चों को खोज रही थी– बंटवारे के बच्चे। अनीस किदवई की मित्र जमीला बेगम सहित जामिया के लोगों का एक दल इन बच्चों को आश्रय मुहैया कराने के लिए एकत्रित हुआ था।[4]

किदवई ने भी अस्पताल में हर उम्र के बच्चे देखे – किसी के सिर में चोट थी, दूसरे की टांग टूटी हुई थी, तीसरे का हाथ। विभाजन के दौरान इन बच्चों को अनेक मानसिक व शरिरिक पीड़ाएं झेलनी पड़ी और इन पीड़ाओं ने इन मासूम बच्चों के मासूम मस्तिष्क को झकझोर के रख दिया। सरकार द्वारा एक घोषणा की गई की पहली जनवरी 1949 से पहले, अपने परिवार से अलग हो गई या हो गया है और जो किसी व्यक्ति के साथ या किसी अन्य व्यक्ति या परिवार के नियन्त्रण में रहता/रहती पाई/पाया गया है और परवर्ती मामले में कथित तिथि के बाद ऐसी किसी महिला को पैदा हुआ बच्चा भी शमिल है। दूसरें शब्दों में विभाजन के समय किसी भी समुदाय द्वारा उठाएं गए बच्चे, या इसके बाद के वर्षों में, इसी तरह अपहत औरतें और बँटवारे के बाद ऐसी औरतों को पैदा हुए बच्चे या एक ही धर्म के लोगों के साथ रहते हुए पाए गए, तो उन्हें अपहृत समझा जाएगा। लेकिन उन बच्चों का क्या होना था जो अभी पैदा होने वाले थे। बहुत–सी बरामद हुई अपहत औरतें गर्भवती थी। बच्चे के पैदा होने के समय तक उन्हें लोगों की नजर से दूर रखने का कोई मार्ग ढूंढा जाना या और तब बच्चे को उनसे अलग करना था या अगर उनका गर्भ आरम्भिक चरण में था, तो उन्हें यह फैसला करने में कि बच्चे का क्या करना है, 'सहायता' देना था।

एक सामाजिक कार्यकर्त्ता दमयत्ती सहगल बताती है कि ये सभी औरतें जो बरामद हुई थी, हमने उनके लिए होशियारपुर, जालन्धर में कैम्प खोले ..... वे जवान लड़कियाँ थी और हमें उनकी खोज का काम शुरू किए हुए एक साल से अधिक हो गया था। बहुतों को बच्चा होने वाला था। वे अपहृत लड़कियाँ गर्भवती थी। यह असली समस्या बन गई थी। अब उन औरतों को गर्भपात के लिए भी नहीं मजबूर किया जा सकता था, आखिर वे भी माएं थी। इन बच्चों के लिए सरकार ने एक स्थान, शारदा भवन (इलाहाबाद) बनाया। मुसलमान बाप से पैदा बच्चे, अनचाहे बच्चे .....। अक्सर कोई औरत कहती, मैं बच्चे को अपने साथ ले जाना चाहती हूँ, पर मैं इसे अपने पास नहीं रख सकती, मैं कैसे रहूँगी? हर कोई मुझ पर थू–थू करेगा। इस डर से भी बहुत सी मांएं अपने बच्चों को चाहते हुए भी अपने पास नहीं रखना चाहती थी। इन बच्चों के सन्दर्भ में अभी–भी बहुत बातें है जो अज्ञात है। अक्सर मन में यह विचार आता है कि पीछे छोड़े गए बच्चे, परित्यक्त या मारे गए बच्चों में कितनी लड़कियाँ थी। सामाजिक कार्यकर्त्ताओं ने कहा कि कैम्पों में छोड़े गए परित्यक्त बच्चों में ज्यादातर लड़कियाँ थी और काम के दबाव ने सम्भावित गोद लेने वालों की खोज को मुश्किल बना दिया था। तब कई लड़कियाँ घरेलू नौकरानियाँ या वेश्याएँ बन गई और जवान लड़कियों की पूरी पीढ़ी की संख्या में वृद्धि हो गई,

जिन्हें कृष्णा सोबती के शब्दों में बंटवारे पर 'बलिदान' कर दिया गया था।[5] बच्चों की वैधता या अवैधता की चिन्ता को विभाजन के समपूर्ण सन्दर्भ में रखने की आवश्यकता है।

जब से भिन्न समुदायों के बीच मतभेद दिखने शुरू हुए, तो हिन्दू और सिख धर्मों की पवित्रता की चिन्ता, विशेषकर पंजाब राज्य में महत्वपूर्ण हो गई थी। यहाँ आर्यसमाज की बढ़ती शक्ति और पंजाबी हिन्दू चेतना का क्रमशः दृढ़ीकरण मुस्लिमों और इसाईयों दोनों में धर्म–परिवर्तन के जरिए अपनी वैध पहचान को खोना, ऐसा लगता था, सबसे बड़ा खतरा था। बँटवारे से देश के शरीर का एक भाग हमेशा के लिए खो गया, प्रभावी रूप से धर्म–परिवर्तित हो गया। लेकिन औरतों और बच्चों के भीतर की सीमाएँ अनिश्चित ही रहीं। हिंदू और सिख औरतें मुस्लिम पुरूषों के साथ प्रेम और कामना, दोनों ही सम्बन्धों–स्पष्टतः जबरन, लेकिन अक्सर स्वैच्छिक समझे जानेवाले में थी। लेकिन राज्य की कुछ सहायता से उन्हें शायद हिन्दू धर्म में पवित्रिकृत रूप में वापस लाया जा सकता था। लेकिन बच्चों की देह में बहने वाला खून अंतरंग रूप से मिश्रित था। यहाँ कोई विभाजन नहीं किया जा सकता था, स्पष्ट रेखा नहीं खींची गई थी, कि इन बच्चों को कहाँ जाना चाहिए। उनके अस्तित्व की कोई सीमा तय नहीं की जा सकती थी। उस समय अपने बच्चों को खो देने वाले कई अभिभावकों ने उन्हें खोजने का प्रयास किया था।[6] उन्होनें अर्जियाँ दी, रिपोर्ट दर्ज करवाई, मौखिक सन्देश भेजे। कुरूक्षेत्र में ढेरा धुपसदी गांव की धरम कौर जैसी कुछ औरतें भाग्यशाली थी। उसने बंटवारे की हिंसा में अपने सम्बन्धी खोए थे। हिंसा के स्थान पर वापस जाकर उसने अपने रिश्तेदारों के शव देखे। बँटवारे के दौरान कुछ अभिभावक ऐसे भी थे जिन्होंने न तो अपने बच्चों की लाश मिली और न ही कभी अपने बच्चों से मिल जाए।

इस प्रकार देखा जाए तो बंटवारे की गाज सिर्फ जवान, वृद्ध, स्त्री–पुरूषों पर ही नहीं गिरी थी, बल्कि उन निरपराध, मासूम बच्चे–बच्चियों की जिंदगियां भी तबाह हो गई, जिनका बंटवारे से कोई सरोकार नहीं था। बच्चों की एक पूरी पीढ़ी को बंटवारे पर 'बलिदान' कर दिया गया। विभाजन आजादी का अंधियारा पक्ष साबित हुआ। धर्म, मजहब, भाषा और जाति के नाम पर एक ही देश को दो टुकड़ो में विभक्त किया गया। स्त्रियों की आबरू सरेआम नीलाम हुई, बच्चे 'यतीम' लावारिस और अनाथ हो गए। विभाजन की कालिमा ने सब कुछ लील लिया था। लोगों की नृशंस हत्याएँ, आगजनी, लूटपाट, बलात्कार जैसे घृणित अमानवीय, अशोभनीय बर्बर कुकृत्यों ने चारों तरफ तांडव मचा दिया। भारत का विभाजन साम्प्रदायिकता के आधार पर जो नरसंहार हुआ वह बड़ा ही कष्टदायक था।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. चन्द्र, विपिन्न, आधुनिक भारत में साम्प्रदायिकता, विकास प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984.
2. मोहन नरेन्द्र, विभाजन की त्रासदी : भारतीय कथा दृष्टि भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2008.
3. बुटालिया, उर्वशी, खामोशी के उस पार, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002.
4. किदवई, बेगम अनीस, आजादी की छांव में, नेशनल बुक ट्रंस्ट ऑफ इंडिया, नई दिल्ली।
5. सोबती, कृष्णा, सिक्का बदल गया, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. यू भास्कर राव : द स्टोरी ऑफ रिहबलिटेशन।
7. सिह, नामवर, आलोचना, त्रैमासिक, विभाजन के 70 साल।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 35-38

नागार्जुन की कविताओं में सामाजिक और राजनीतिक चेतना

अनिता
पीएच.डी. शोधार्थी, हिन्दी–विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र, हरियाणा।

सारांश :–

नागार्जुन आधुनिक हिन्दी कविता में विशेष रूप से प्रगतिवादी कवि के रूप में जाने जाते है। इनकी कविताएँ हमें देशकाल की परिस्थिति और जनसाधारण के दुःख दर्द से अवगत करती है। प्रत्येक कवि और उसके साहित्य का समाज के साथ अभिन्न संबंध होता है। उन्होंने सच्चे अर्थों में सर्वहारा समाज का प्रतिनिधित्व किया है उनका काव्य कल्पना से हट कर यथार्थ पर आधारित है।

डॉ. विशम्भर मानव के कथन अनुसार ''व्यक्तिगत दुःख पर न रूककर वे बार–बार व्यापक दुःख पर प्रकाश डालते है। अतः धरती जनता और श्रम के गीत गाने वाले इस युग के संवेदनशील कवियों में नागार्जुन का नाम सदैव अमर रहेगा।'' उन्होंने अपने काव्य में सामाजिक और राजनीतिक पक्षों का यथार्थ रूप चित्रित किया है। समाज के शोषित और पीडित लोगों के जीवन में सुधार लाने के लिए उन्होंने अनेक प्रयास किये है।

डॉ. विजय बहादूर सिंह के अनुसार : ''नागार्जुन के यहाँ निम्न वर्ग या सचमुच का सर्वहारा वर्ग कविता का नायक है। रिक्शा खीचने वाला, चटकल में काम करने वाला मजदूर, उच्च वर्ग का पुश्तैनी शिकार हरिजन और मछुआरा और महिला वर्ग जो वर्षों नहीं, शताब्दियों से भारतीय समाज की गुलामी सहने को विवश है, नागार्जुन उनके चरित्र नायक है।''

इनकी कविताओं का मुख्य उद्देश्य जन सामान्य का दुःख दर्द व्यक्त करना है इसलिए इन्हें जनकवि भी कहा गया है। इनकी कविताएँ राजनीतिक साम्यवादी विचारधाराओं के साथ ही सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती है। नागार्जुन जी ने शोषितों के प्रति सहानूभूति दिखाकर शोषकों के असली चहरे जनता के समक्ष प्रस्तुत किए है।

मुख्य शब्द :– सामाजिक, राजनीतिक, शोषित, पूँजीवादी।

नागार्जुन की कविताओं में सामाजिक और राजनीतिक चेतना :–

नागार्जुन की कविताएं सामाजिक चेतना से परिपूर्ण है उनमें जन जीवन की आकांक्षा विद्मान है। अभावों से ग्रस्त पीड़ित, शोषित वर्ग की वेदना को उन्होंने अनुभव ही नहीं किया बल्कि उस पीड़ा को कविता के माध्यम से व्यक्त कर समाज में व्याप्त अनेक बुराईयों का विरोध किया है ताकि सामाजिक विषमता की खाई को कम किया जा सके यही कारण है कि उन्होंने अपनी कविताओं में यथार्थ का चित्रण पूरी सच्चाई और नग्नता के साथ किया है। सत्यबोलना पाप है, और चापलूसी करना युग धर्म बन गया है इसी संदर्भ में नागार्जुन की

चंद पंक्तियाँ :–

''सपनों में भी सच न बोलना, वर्ना पकड़े जाओगे,
भैया, लखनऊ–दिल्ली पहुँचे, मेवा–मिसरी पाओगे।
माल मिलेगा रेत सको यदि गला मजूर–किसान का,
हम मर भुक्खों से क्या होगा, चरण गहों श्रीमान का!''

कहा जा सकता है कि कवि ने मजदूर, किसान, व्यापारी नेता और जमींदार सब पर अपनी दृष्टि डाली है। वे समाज को सूक्ष्म दृष्टि देखते और परखते थे इसलिए उनकी कविताओं में समाज के प्रत्येक कुवृति को परत–दर–परत कुरेदा गया है। देश में व्याप्त भ्रष्टाचार और राजनीतिक योजनाओं का असफल होने का यथार्थ रूप रेखांकित किया है। अकाल के बाद दीन हीन गरीबों की स्थिति से अवगत करवाया गया है।

''कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों को भी हालत रहीं शिकस्त।''

कई दिनों तक गरीब के घर चूल्हा नहीं जला उनके घर में रहने वाले जानवर भी दुःखी है मानों वे इनकी दीनहीन स्थिति से दुःखी हो। समाज में व्याप्त अनेक अप्रकाशित विषयों पर भी उनकी दृष्टि की पकड़ रही है। जमींदारी सत्ता व्यवस्था पर व्यंग्य करते हुए।

''जमींदार है, साहुकार है, बनिया है, व्यापारी है
अन्दर–अन्दर विकट कसाई, बाहर खद्दरधारी है।''

'सच न बोलना' नामक कविता से उद्धत नागार्जुन की काव्य पंक्तियां। उन्होंने समाज में चेतना उत्पन्न करने के लिए अनेक ऐसी कविताएं लिखी है जिसमें शोषित जीवन के दुःखों और कष्टों को देखा जा सकता है। उनको अभावग्रस्त जीवन जीने के लिए कौन मजबूर कर रहा है। राजनीतिक सत्ता व्यवस्था एवं पूंजीवादी का वास्तविक चेहरा वह लोगों के सामने लाते है।

निःसंदेह नागार्जुन की कविताओं में समाज के अनेक दुःख–दर्द को व्यक्ति किया है और जनमानस से जुड़ी अनेक पहलुओं का वर्णन उनकी कविताओं में मिलता है।

नागार्जुन ने अपनी कविताओं के माध्यम से देश की राजनीतिक क्षेत्र में चल रही उथल–पुथल के बीच पिसती हुई जनता की स्थिति को उजागर किया है। उन्होंने राजनीति के क्षेत्र में होने वाले भ्रष्टाचार पर तीखे व्यंग्य किये है किस प्रकार एक नेता दूसरे नेता को भ्रष्ट साबित कर सत्ता की कुर्सी को हथिया कर अपनी तिजोरी भराना चाहते है। जिस कारण आम जनता महँगाई से परेशान है।

''मन करता है
नंगा होकर आग लगा, जो पहन रखा है उसमें भी फिर बनूँ
दिगम्बर बम भोला
नंगा होकर विषवान करूँ सागर तट पर
ओ कालकूट तू कहाँ गया?

ओ हलाहल तू कहाँ गया?
अत्येष्टि करूँ, लकड़ी तो बेहद महंगी है।
इस बालू में दफना दूँ
नंगा करके।''

आजादी के इतने वर्षों बाद भी देश की जनता उन्नति की राह देख रही है आम जनता महंगाई, भ्रष्टाचार से परेशान है। देश की स्थिति दिनों दिन जर्जर होती जा रही है। नेता, पूंजीवादी और अधिकारी लोग भ्रष्टाचार में डूबे हुए है और वे शोषित, निम्न वर्ग और गरीब लोगों का शोषण करते है। यही कारण है कवि ने आमजनता के दुख दर्द का दोषी भ्रष्टाचारी नेताओं को माना है और जनता के समक्ष राजनेताओं का असली चेहरा प्रस्तुत किया है।

''पेट–पेट में आग लगी है, घर–घर में फाका
यह भी भारी चमत्कार है, कांग्रेसी महिमा का
सूखी आंतों की ऐंडन का हमने सुना धमाका
यह भी भारी चमत्कार है, कांग्रेसी महिमा का
महज विधानसभा का सीमित, जन तन्त्री खाका
यह भी भारी चमत्कार है कांग्रेसी महिमा का
तीन राज में तेरह जगहों पर पड़ता है डाका
यह भी भारी चमत्कार है कांग्रेसी महिमा का।''

इन काव्य पंक्तियों के द्वारा नागार्जुन ने सरकारों के भ्रष्टाचारी तंत्र का स्पष्ट शब्दों में विरोध किया है जन कवि होने के नाते उन्होंने हमेशा जनता के हित में ही कार्य कर राजनीति पहलुओं से अवगत करवाया है। राजनेताओं के इशारों पर नाचती पुलिस तंत्र–

'जिनके बूटों से कीलित है भारत माँ की छाती
जिनके दीपों में जलती है अरूण आँत की बाती
ताजा मुंडों से करते है जो पिशाच का पूजन
है असह्य है जिनके कानों में बच्चों का कूजन।''

नागार्जुन की कविताओं में देश और राजनीति की समझ है उनका साहित्य वर्तमान समय में भी प्रासंगिक है जो अपने समय के समाज की अनेक उलझनों और संघर्षो को जनता के समक्ष प्रस्तुत करते है।

''झूठ–मूठ सुजला–सुफला के गीत न अब हम गायेंगे
दाल–भात तरकारी, जब तक नहीं भर पेट पायेगे''।

इससे स्पष्ट है कि जिन नीतियों से आम जनता का कल्याण नहीं हो सकता वह नीतियाँ हमारे देश में किसी काम की नहीं है इन झूठी घोषाणाओं से भला जनता का पेट कैसे भरेगा? राजनेताओं की इसी स्वार्थी प्रिय नीति पर व्यंग्य किया गया है। भारत के बदलते यथार्थ की विडम्बनाओं को कविता के माध्यम से जनता के सामने प्रस्तुत किया गया है।

निष्कर्ष :–

नागार्जुन की कविताओं में हमें सामाजिक और राजनीतिक चेतना की मिली–जुली स्थिति देखने को मिलता है उनके साहित्य में भ्रष्टाचार, जाति–प्रथा, ऊँच–नीच, आदि सामाजिक कुरीतियों पर चोट की गई है। राजनीति की गरिमा और भ्रष्टाचारी नेताओं के मायावी जाल को नष्ट करते हुए उनके वास्तविक चेहरों को जनता के सामने रखा है। उन्होंने सामाजिक जीवन को बेहतर बनाने के लिए कल्पना से हटकर वास्तविकता को अपने काव्य में स्थान दिया है राजनीति लोग जनता को भ्रमित कर अपनी तिजोरियाँ भरते है।

''आश्वासन की मीठी वाणी भूखों को भरमाती
पाला पड़ता है लेकिन वह नंगों को गरमाती
जनमन तो आडम्बर प्रिय है, प्रिय है उसको नाटक
खोल दिये है तुमने कैसे इंद्र सभा के फाटका।''

नागार्जुन की इन काव्य पक्तियों ने राजनीति व्यवस्था की पोल खोल कर जनता के समक्ष रख दी गई है उन्होंने समाज में व्याप्त विद्रूपताओं का कड़ा विरोध किया है वह सदा शोषित– उपेक्षित वर्ग की आवाज बन रहे है। डॉ. रामविलास शर्मा का कथन है। ''यह सही है कि ..... साहित्य और राजनीति में उनका सही मार्ग दर्शन करने वाले अपनी रचनाओं के प्रत्यक्ष उदाहरण से उन्हें शिक्षित करने वाले, उनके प्रेरक और गुरु होंगे कवि नागार्जुन।''

अतः कहा जा सकता है कि नागार्जुन की लेखनी एक ओर जहाँ निचले तबके के आँसू पोंछने में लगी हुई थी वही दूसरी ओर समाज की बुरी प्रवृतियों को जड़ से उखाड़ने का कार्य भी कर रहे थी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डॉ. विजय प्रकाश मिश्र, हिन्दी के प्रतिनिधि कवि, पृ. 256
2. सुरेश चन्द्र त्यागी, नागार्जुन, विजय बहादूर सिंह : सामान्य जन के महाकवि, पृ. 110–111
3. संपादक शम्भू बादक : आज की विविध कविताएँ, आदित्य पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, पृ. 42
4. संपादक नामवर सिंह, डॉ. राम विलास शर्मा का कथन, नागार्जुन : प्रतिनिधि कविताएं, राजकमल प्रकाशन, पृ. 80
5. संपादक नामवर सिंह, डॉ. रामविलास का कथन, नागार्जुन की प्रतिनिधि कविताएं राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1984
6. नागार्जुन, चुनी हुई रचनाएँ, नई दिल्ली, 1985, पृ. 3738
7. नागार्जुन, चुनी हुई रचनाएँ, नई दिल्ली, 1985, पृ. 96–97
8. गुंजन राम निहाल, नागार्जुन रचना प्रसंग और दृष्टि, नीलाभ प्रकाश, पृ. 58
9. नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएँ, राजकमल प्रकाशन, पृ. 101
10. नागार्जुन, अब तो बंद करो देवी चुनाव प्रहसन, 1942
11. डॉ. रामविलास शर्मा, ''नयी कविता और अस्तित्ववाद, नई दिल्ली, 1978, पृ. 154–155

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 39-43

धूमिल के काव्य में समकालीन बोध के आयाम

रेनु
पीएच०डी० शोधार्थी, हिन्दी–विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र, हरियाणा।

सारांश :–

समकालीन काव्य का हिन्दी साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। इस काव्य के अंतर्गत कवि तत्कालीन समाज के प्रत्येक पहलू को पाठक के सामने प्रस्तुत करता है। समकालीन स्थितियों, परिस्थितियों और गतिविधियों का प्रभाव हमेशा साहित्य पर रहा है। तत्कालीन देश, काल और वातावरण का प्रभाव साहित्यकार के संवेदनशील हृदय पर पड़ता रहता है। समकालीनता संबंधी कवियों की दृष्टि विविध संदर्भों से प्रेरित होती रही है। कवियों की इस श्रेणी में कवि 'धूमिल' की दृष्टि अत्यंत व्यापक है। इनका पूरा नाम 'सुदामा पांडेय धूमिल है। इन्होंने जिन परिस्थितियों को भोगा और जिन मनःस्थितियों से वे गुजरे, उसे उन्होंने अपने अनुरूप लेखनबद्ध किया। धूमिल का जीवन अत्यंत सरल व संघर्षपूर्ण रहा है। उसने समाज के हर क्षेत्र को नजदीक से देखा व परखा था।

एक आम आदमी की आवाज उनके काव्य में देखी जा सकती है। उनके काव्य संग्रह 'संसद से सड़क तक', 'कल सुनना मुझे' तथा 'सुदामा पाण्डे का प्रजातंत्र' अपना अलग–अलग अस्तित्व बनाए हुए हैं। इनमें अधिकांश काव्य कवि की स्वयं की अनुभूतियों एवं पारिवारिक विवशता को दर्शाता है। इनका काव्य सामाजिक व्यवस्था व जनतान्त्रिक व्यवस्था के यथार्थ का भी परिचायक है। समकालीन चेतना से सम्बन्धित ये रचनाएँ कालचेतना की संवेदना या प्रतिक्रिया को पाठक के समक्ष प्रस्तुत करती हैं।

मुख्य शब्द :– समकालीनता, जनतंत्र, राजनैतिक दृष्टिकोण, औद्योगिकरण, धार्मिक पक्ष, पूंजीवाद।

समकालीन शब्द का अर्थ एवं परिभाषाएं :–

समकालीन शब्द अंग्रेजी भाषा के 'कन्टेम्परेरी' शब्द का हिन्दी पर्याय है। मूल शब्द काल में 'सम' उपसर्ग व 'इन' प्रत्यय लगाने से इस शब्द की उत्पत्ति हुई है। 'कन्टेम्परेरी' में 'कंटेंट' और 'टेम्परेरी' भाव निहित हैं। जिनका अर्थ हुआ वर्तमान कालखंड में होने वाली विभिन्न घटनाओं, पीड़ाओं व अनुभूतिजन्य वेदनाओं की अभिव्यक्ति का प्रयास। इस प्रकार समकालीन शब्द का आशय है एक ही समय का, समव्यस्क या अपने समय का होता है।

परिभाषाएँ :–

बलदेव वंशी के अनुसार, ''समकालीनता वह चेतना है, जो सामयिक संदर्भों, दबावों और तकाजों के तहत विशिष्ट रूप धारण करती है।''

डॉ. नरेन्द्र मोहन के अनुसार, ''समकालीन कविता का अर्थ किसी कालखण्ड या दौर में व्याप्त स्थितियों

और समस्याओं का चित्रण, निरूपण या बयान भर नहीं है। बल्कि उनको ऐतिहासिक अर्थ में समझना, उनके मूल स्त्रोत तक पहुँचना और निर्णय ले सकने का विवेक अर्जित करना है।''

समकालीनता को अभिव्यक्त करते हुए धूमिल कहते हैं– ''समकालीनता क्या है? रूप रंग और अर्थ के स्तर पर आजाद रहने की, सामने बैठे आदमी की गिरफ्त में न आने की एक तड़प, एक आवश्यक और समझदार इच्छा, जो आदमी को आदमी से जोड़ती है, मगर आदमी को आदमी की जेब में या जूते में नहीं डालती।''

'धूमिल' के काव्य में समकालीन बोध के आयाम :-

समकालीन कवि धूमिल के काव्य को अनेक घटकों ने प्रभावित किया है। इनके काव्य में शुरू से अंत तक शोषकों की स्वार्थ वृति तथा आम आदमी के शोषण का चित्रण किया गया है। धूमिल के समकालीन परिवेश में समाज अनेक समस्याओं से घिरा हुआ था। मानव की दुर्दशा को देखकर धूमिल आम आदमी को जगाने के लिए आह्वान करते हुए कहते हैं कि :–

''उठो और अपने भीतर
सोये हुए जंगल को
आवाज दो।
उसे जगाओ और देखो
कि तुम अकेले नहीं हो
और न किसी के मोहताज हो
लाखों हैं जो तुम्हारे इन्तजार में खड़े हैं।''

आम आदमी इन सामाजिक परिस्थितियों से बहुत ज्यादा निराश और परेशान था। पैसों के लालच के सामने मानव अपने आदर्शों को भूलता जा रहा था। मानव की ऐसी स्थिति को देखकर कवि अपने काव्य में कहता है–

''मेरे पास रोज एक आदमी आता है
जिससे शालीनता इतनी ज्यादा टपक चुकी है
कि वह एक तैरता हुआ पत्थर है।''

औद्योगिकरण के परिणामस्वरूप आदमी से आदमी के संबंधों में अन्तर आया है। कवि ने अपने आस–पास के परिवेश में अनेक समस्याओं को देखा था। इन समस्याओं के खिलाफ उन्होंने अपनी आवाज बुलंद की थी, परन्तु किसी ने भी सत्ता के डर के मारे उनका साथ नहीं दिया–

''मैने हरेक को आवाज दी है
हरेक का दरवाजा खटखटाया है
मगर बेकार ..... मैंने जिसकी पुँछ
उठायी है उसका मादा पाया है।''

भारतीय समाज में आम आदमी के शोषण व पिछड़ने का एकमात्र कारण अनपढ़ता रही है। निरक्षरता के परिणामस्वरूप हम उन सुख–सुविधाओं और खुशियों से कोसों दूर हैं जिनके हम हकदार हैं। गुलामी की बेड़ियाँ तोड़ने के बाद भी भारत में वे मानवीय मूल्य नहीं पनप सके जिनकी कल्पना समाज कर रहा था। नगरीकरण,

मशीनीकरण व औद्योगिकरण के साथ–साथ देश–विभाजन, जनसंख्या वृद्धि और आर्थिक विषमताओं आदि के कारण देश की सामाजिक स्थिति में आमूलचूल परिवर्तन हुए जिनका विपरित प्रभाव व्यक्ति, परिवार और समाज पर पड़ा। मानव पीड़ा संत्रास और अजनबीपन आदि में अपना जीवन व्यतीत करने को मजबूर हो गया था।

''हर अच्छे नागरिक की तरह
खतरे का सायरन बजते ही
मैंने अपनी खिड़कियों के पर्दे गिरा दिये हैं
खतरा इन दिनों
बाहर का नहीं बल्कि भीतर की रोशनी से है।''

समाज में फैली पशुवृति पर धूमिल ने ऐसे अनेक चेहरों को बेनकाब किया, जिन्होंने मानवतावादी होने का ढोंग किया था। वे ऐसे लोगों का विरोध करते हैं। अपने काव्य के माध्यम से कवि समाज में जागृति लाना चाहते थे।

समकालीन कवियों में राजनीतिक पक्ष के प्रति सचेतना है। समकालीन कवियों में 'धूमिल' ही एक ऐसे कवि हैं जिनके काव्य में राजनैतिक पक्ष को नये अंदाज में प्रस्तुत किया है। इनका राजनीतिक दृष्टिकोण तीक्ष्ण, स्पष्ट, विस्तृत और विद्रोही रहा है। इन्होंने राजनेताओं के घिनौने चेहरों को बेनकाब किया है। कवि राजनैतिक षड्यंत्रों के दृष्टा के साथ ही साथ भोक्ता भी थे। आजादी को लेकर भारतवासियों ने जो सपने देखे थे, वे भ्रष्ट राजनीति के कारण पूर्ण न हो सके। धूमिल इन राजनेताओं तथा भारतीय प्रजातंत्र की पोल खोलते हुए लिखते हैं–

''उनको समझा दिया गया है कि यहां
ऐसा जनतंत्र है जिनमें
जिन्दा रहने के लिए
घोड़े और घास को
एक जैसी छूट है।''

जनतंत्र जनता की सुख समृद्धि व विकास के लिए होता है लेकिन यहां जनतंत्र सत्ताधारियों का सहायक तथा आम आदमी का शोषक नजर आता है। डॉ. सुधाकर शेडगे धूमिल के काव्य में व्याप्त राजनीतिक दृष्टिकोण के बारे में कहते हैं, ''जहाँ तक धूमिल की कविताओं का सवाल है। धूमिल की कविता का मूल स्वर ही राजनीतिक चेतना रहा है। उन्होंने अपने काव्य में राजनीतिक यथार्थ का चित्रण पूरी ईमानदारी के साथ किया है। धूमिल ने स्थितियों को केवल देखा ही नहीं था सहा भी था। गाँवों और शहरों में राजनीतिक व्यवस्था ने जो समस्याएं पैदा की उन पर धूमिल ने विस्तारपूर्वक विचार किया। धूमिल की सहानुभूति सदा समाज के दलित पीड़ित लोगों के साथ रही है।'' देश में चारों ओर रोटी की समस्या को देखते हुए कवि उत्तरोत्तर स्थिति के विकराल रूप से क्षुब्ध है। यहां धूमिल राजनेताओं के प्रति रूष्ट होने के साथ–साथ युवा पीढ़ी की दिशाहीनता पर भी व्यंग्य करता है। तभी वह कहता है–

''मैं उन्हें समझाता हूँ
वह कौन–सा प्रजातान्त्रिक नुस्खा है

कि जिस उम्र में
मेरी माँ का चेहरा
झुर्रियों की झोली बन गया।''

अनेक कविताओं में वह समाज में गिरते मूल्यों को व्यक्त करता है। वह सामाजिक, राजनीतिक अव्यवस्था को मूल रूप में समाप्त करने पर बल देता है। धूमिल व अन्य समकालीन कवियों के अनुसार राजनीति और नेताओं के प्रति क्षोभ की अभिव्यक्ति दर्शायी गई है, ''समकालीन हिन्दी कवि अगर किसी चीज से सबसे अधिक प्रभावित है तो वह है समकालीन राजनीति, अनेक स्तरों पर राजनीति के कारण ही समाज में अव्यवस्था फैल रही है। देश की उत्तरोत्तर ह्रासोन्मुखी स्थिति के लिए कवि भ्रष्ट नेताओं को ही दोषी मानता है क्योंकि इनकी क्षुद्र राजनीति केवल कुर्सी तक ही सीमित है, इनका दीन–ईमान सब कुर्सी है। कुर्सी के लिए वे अपना धर्म ईमान सब बेचने के लिए तैयार हो जाते हैं और स्वार्थ के लिए दल–बदल करने से भी नहीं चूकते। नेताओं में नैतिक बोध का अभाव देखकर बदलाव के लिए समकालीन कवि एक छटपटाहट है।'' नारी की शिक्षा को लेकर इन्होंने अपना अलग ही दृष्टिकोण स्पष्ट किया है। धूमिल कहीं नारी के माँ, प्रिया, देवी तथा सहचरी रूप का चित्रण करते हैं तो कहीं–कहीं नारी के विकृत रूप को दर्शाया गया है। वे नारी को सम्मान की दृष्टि से देखते थे–

''तु मेरी
हम बिस्तर नहीं
मेरी हमसफर है।''

धर्म के नाम पर की जा रही राजनीति, मारकाट, दंगा–फसाद व आमजन का शोषण आदि का धूमिल ने विरोध किया है। राजनेता अपने फायदे के लिए आमजन को धार्मिक भावनाओं से जोड़कर दंगे फसाद रूपी आग में अपने स्वार्थ की रोटियाँ सेंकते हैं। धर्म के नाम पर लूट धूमिल के समय में भी थी और आज भी यह समस्या निरन्तर विकट होती जा रही है। आजकल धार्मिक स्थलों पर धर्म के नाम पर अनेक गलत काम किये जा रहे हैं। जिससे मानव जाति शर्मसार हुई है। ऐसे धर्म स्थलों की वास्तविकता दिखलाते हुए धूमिल जी कहते हैं–

''मैंने अचरज से देखा कि दुनिया का
सबसे बड़ा बौद्ध मठ
बारूद का सबसे बड़ा गोदाम है।''

इस प्रकार के धार्मिक स्थलों को देखकर लोगों का ईश्वर व धर्म पर विश्वास उठने लगा है। आजकल आम आदमी की सोच में बदलाव आ रहा है। वह प्रत्येक पक्ष को वैज्ञानिक दृष्टि से जांचने परखने का आग्रह करता है।

भारत में पूंजीवाद के कारण औद्योगिकरण को बढ़ावा मिला है। देश में औद्योगिकरण के परिणामस्वरूप धन को अधिक महत्त्व दिया जाने लगा। इस पैसा कमाने की होड़ में मानव मूल्यों का ह्रास हुआ है। कवि ने अपने काव्य में आम आदमी की आर्थिक स्थिति और उनकी दीन–हीन दशा का चित्रण किया है–

''गरज यह कि घण्टे–भर खटखटाता है
मगर नामा देते वक्त
साफ नट जाता है।

शरीफों को लूटते हो, वह गुर्राता है
और कुछ सिक्के फेंककर
आगे बढ़ जाता है।''

बढ़ती महंगाई, राजनीतिक अस्थिरता, बेकारी, अकाल तथा बढ़ती जनसंख्या के कारण आम आदमी शोषण की चक्की में पिसता चला गया। समकालीन परिवेश में पूँजीपति आमजन का चारों तरफ से शोषण कर रहे थे और हम सब इस शोषण को आँख मूंदे ढ़ोते जा रहे थे।

निष्कर्ष :–

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि काव्य के अनुभव के धरातल पर कवि के सामने अपने पक्ष की प्रस्तुति के अनेक आयाम हैं। वह अपने उद्देश्य की पूर्ति समस्या को प्रस्तुत करके नहीं समझता बल्कि अपनी समझ से जागरूकता व चेतना का मन्त्रोच्चार भी करता है। यही कारण है कि हमें धूमिल की काव्य चेतना में मूलतः सड़क व संसद, व्यक्ति व समाज के माध्यम से राजनीतिक समझ एवं सामाजिक दायित्व की प्रतीति होती है। राजनीतिक मूल्यों के गिरने का सबसे बड़ा कारण नेताओं के व्यक्तित्व का दोहरा चित्रण है। उनके द्वारा किए गए चुनावी वायदों में दिन–रात का अन्तर होता है। देश में व्याप्त नेताओं की कालाबाजारी व देशवासियों में फैला उनके प्रति असन्तोष कवि को लिखने एवं सोचने पर विवश करता है। समकालीन कवि अनुभव करता है कि वर्तमान में समस्त साहित्य का बोध और संवेदना में बड़ा परिवर्तन आ गया है। समय के अनुसार काव्य में परिवर्तन आमजन को जागरूक करने के लिए जरूरी होता है। अतः समकालीन काव्य मूलतः युग बोध का सार्थक व यथार्थ बोध का काव्य है। कवि धूमिल इस काव्यधारा के एक सशक्त हस्ताक्षर हैं और वे अपने काव्य की वास्तविकता का बोध कराते हुए स्वयं को 'आदमी' से जोड़े रखते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. बलदेव वंशी, समकालीन कविताः वैचारिक आयाम, पृ. 17
2. डॉ. नरेन्द्र मोहन, कविता की वैचारिक भूमिका, पृ. 23
3. धूमिल, भाषा की रात में, धूमिल की भूमिका, कल सुनना मुझे, सम्पादक राजशेखर, वाराणसी, युगबोध प्रकाशन, प्रथम संस्करणः 1977, पृ. 1
4. डॉ. न.पू. काले, धूमिल और नारायण सुर्वे की कविता का अनुशीलन, पृ. 50
5. धूमिल, संसद से सड़क तक, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सातवीं आवृतिः 2009, पृ. 55
6. वही, पृ. 126
7. वही, पृ. 73
8. धूमिल, कल सुनना मुझे, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, आवृतिः 2010, पृ. 86
9. डॉ. सुधाकर शेंडे, धूमिल की काव्य कला, पृ. 77
10. धूमिल, संसद से सड़क तक, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सातवीं आवृतिः 2009, पृ. 20
11. सं. डॉ. सरोजिनी शर्मा, समकालीन हिन्दी कविता के विविध आयाम, सुकीर्ति प्रकाशन, कैथल (हरियाणा) संस्करणः 2012, पृ. 23–24
12. धूमिल, सुदामा पाण्डे का प्रजातंत्र, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण : 2001, पृ. 47
13. धूमिल, संसद से सड़क तक, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, सातवीं आवृति : 2009, पृ. 12
14. वही, पृ. 29

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 44-49

सामाजिक मानसिकता व तृतीयक लिंगी समुदाय

(एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण)

डॉ० परेश द्विवेदी, शोध पर्यवेक्षक एवं सहायक आचार्य,
उन्नति शर्मा, शोधार्थी
समाजशास्त्र विभाग, भूपाल नोबल विश्वविद्यालय, उदयपुर।

मुख्य सार :-

तृतीयक लिंगी समुदाय अपनी कुछ मान्यताओं के साथ अपनी साामजिक अस्मिता की तलाश करता है तो दूसरी और सभ्य समाज अपने द्वारा बनाये गये पूर्वाग्रहों को लेकर इनके प्रति घृणा और तिरस्कार का भाव रखता है। हमारे समाज में इनके प्रति जो मान्यताएँ है जिनमें कुछ लोग इन्हें शुभ मानते है तो दूसरों और इन्हे अशुभ भी माना जाता है कि ये नाराज हो या बददुआ किसी को दे देते है तो अनिष्ट हो जायेगा। किन्नरों के प्रति समाज की यह मान्यता अजीबो–गरीब और विडम्बना पूर्ण है।

प्रस्तुत अध्ययन में किन्नर समुदाय की प्राचीन परम्पराओं व उनके प्रति धारणाओं का अध्ययन कर वर्तमान समय में समाज उनके प्रति धारणा रखता है का विश्लेषण करना है।

कुंजी शब्द :- तृतीयक लिंगी, सभ्य समाज, तिरस्कार मान्यताएं, शुभ, अशुभ।

परिचय :-

ऐतिहासिक रूप से प्रसिद्ध ट्रांसजेंडर समुदाय शुरू से ही भारत की सामाजिक व्यवस्था का हिस्सा रहा है, लेकिन इसे कभी भी समाज के प्रतिष्ठित हिस्से के रूप में मान्यता नहीं दी गई है। हिजरा पारंपरिक रूप से दक्षिण–पूर्व एशिया में ट्रांसजेंडर महिलाओं के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला शब्द है जो पुरुष पैदा हुए थे और मोटे तौर पर नपुंसक या हेर्मैफ्रोडाइट में अनुवाद करते हैं। पवित्र हिंदू ग्रंथों के अनुसार इस समुदाय की भूमिका और मूल्य सौभाग्य के लिए विवाह और जन्म समारोहों में आशीर्वाद के प्रदर्शन के लिए संघनित है। 19वीं शताब्दी में ब्रिटिश राज के आगमन के साथ, 'क्रॉस–ड्रेसिंग' के कृत्यों को एक आपराधिक अपराध के रूप में दर्ज किया गया था और यदि बार–बार ऐसे अपराध किए जाते थे, तो कारावास का पालन किया जाता था। इस प्रकार, हिजड़ों का अपराधीकरण शुरू हुआ।

आज, हालांकि पहले के समय की तुलना में कानूनी रूप से समर्थित और सामाजिक रूप से सशक्त हैं, हिजड़े अभी भी ट्रांसफोबिक भेदभाव–संबंधी हिंसा, गरीबी और अलगाव के अधीन हैं। अप्रैल 2014 के सुप्रीम कोर्ट के फैसले ने गति में इस समुदाय की स्वीकृति का मार्ग निर्धारित किया। पहली बार, आधिकारिक दस्तावेज में हिजड़ों को कानूनी रूप से तीसरे लिंग के रूप में मान्यता दी गई थी। नए परिभाषित तीसरे लिंग के नागरिकों

के लिए नौकरी और शैक्षिक अवसरों तक पहुंच बढ़ाने के लिए सरकार द्वारा निर्धारित कोटा प्रदान किया गया था अनुमानित आधा मिलियन–दो मिलियन आबादी। इसका मतलब अनुदान और कल्याणकारी लाभों और भारतीय पुलिस सेवा द्वारा कथित सुरक्षा के माध्यम से सामाजिक देखभाल में बेहद महत्वपूर्ण बदलाव भी था। बेशक, यह भारतीय कानून के भीतर एक बड़ा विकास था और विश्व स्तर पर ट्रांस कम्युनिटी के लिए एक जीत थी। लेकिन सदियों पुराने पूर्वाग्रहों के अधीन एक अलग–थलग समुदाय के लिए, संवैधानिक दृश्यता ने सामाजिक सहिष्णुता को कितना प्रोत्साहित किया? अधिकांश भाग के लिए, यह नहीं किया। जाहिर है, नीति और वास्तविकता के बीच हमेशा अंतर होता है। अदालत के फैसले द्वारा निर्धारित तृतीय लिंग कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रमों और कॉलेज छात्रवृत्ति की आवंटित संख्या में, एक साल से अधिक समय बाद लगभग सभी सरकारी और शैक्षणिक संस्थान इन्हें व्यवहार में लाने में विफल रहे थे। हाल की रिपोर्टों का अनुमान है कि लगभग 80 प्रतिशत अभी भी नृत्य, सेक्स वर्क या भीख मांगने पर निर्भर हैं। रोजगार के किसी भी व्यवहार्य साधन से बाहर होने का मतलब है कि वे समाज के बहुत हाशिये पर बने रहे – अभी भी गरीबी, जबरन वसूली और हिंसा की चपेट में हैं।

अनुसंधान उद्देश्य :–

निम्नलिखित शोध पत्र ट्रांसजेंडर समुदाय, उनके सामने आने वाली समस्याओं और उनकी स्थिति की जमीनी हकीकत पर ध्यान केंद्रित करना जारी रखता है। इस समुदाय द्वारा सामना की जाने वाली समस्याएं सामाजिक स्थिति, वित्तीय सुरक्षा और यहां तक कि चिकित्सा आवश्यकताओं जैसे कई आधारों पर हैं। शोध का उद्देश्य देश के तथ्यों और कानूनी प्रक्रियाओं की मदद से इन समस्याओं का समाधान करना है ताकि बेहतर विकल्पों का पता लगाया जा सके जो उनकी जीवन शैली में सुधार के लिए उनके सामने रखे जा सकते हैं। वर्तमान को जानने के लिए और भविष्य की संभावनाओं पर काम करने के लिए, इतिहास को पूरी तरह से जांचना चाहिए जिसने समकालीन परिदृश्य को आकार दिया है। समाज से समावेश और बहिष्करण और इस समुदाय के प्रति सामाजिक सहिष्णुता की जांच करने की आवश्यकता है। साथ ही, लंबे समय से चली आ रही रूढ़िवादिता के खिलाफ विरोधाभासों को फिर से जांचने की जरूरत है।

इतिहास :–

प्राचीन भारत के शुरुआती लेखन में 'तीसरे लिंग' या पुरुष या महिला लिंग के अनुरूप व्यक्तियों की मान्यता का ऐतिहासिक प्रमाण नहीं था। भगवान राम, महाकाव्य रामायण में, 14 साल के लिए राज्य से निर्वासित होने पर जंगल में जा रहे थे, अपने अनुयायियों के पास जाते हैं और सभी 'पुरुषों और महिलाओं' को शहर लौटने के लिए कहते हैं। उनके अनुयायियों में, अकेले हिजड़ों ने इस दिशा से खुद को बंधा हुआ महसूस किया और उनके साथ रहने का फैसला किया। उनकी निष्ठा से प्रभावित होकर, राम ने उन्हें जन्म और विवाह जैसे शुभ अवसरों पर लोगों को आशीर्वाद देने की शक्ति प्रदान की, और उद्घाटन समारोह में भी, जो बधाई की प्रथा के लिए मंच तैयार करने वाला था, जिसमें हिजड़े गाते, नाचते और देते थे। आशीर्वाद का। महाभारत में अर्जुन और नागकन्या के पुत्र अरावन, कुरुक्षेत्र युद्ध में पांडवों की जीत सुनिश्चित करने के लिए देवी काली को बलि देने की पेशकश करते हैं, उन्होंने केवल एक ही शर्त रखी थी कि वह अपने जीवन की अंतिम रात विवाह में बिताएं। चूँकि कोई भी महिला किसी ऐसे व्यक्ति से शादी करने को तैयार नहीं थी जिसे मार डाला गया था, कृष्ण ने

मोहिनी नामक एक सुंदर महिला का रूप धारण किया और उससे शादी की। तमिलनाडु के हिजड़े अरावन को अपना पूर्वज मानते थे और खुद को अरावनी कहते थे। मुगल शासन काल में महत्वपूर्ण पदों पर इस समुदाय का चित्रण देखा गया और उन्होंने राजनीतिक सलाहकारों, प्रशासकों, जनरलों के साथ–साथ हरम के संरक्षक की जिम्मेदारी संभाली। भरोसेमंद माने जाने वाले, वे सभी जगहों तक पहुंच रखते थे और एक चतुर तरीके से उसी का प्रबंधन करते थे, इस प्रकार बेहद वफादार होते हुए मुगल साम्राज्य और राजनीति के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। हिजड़ों ने इस्लामी धार्मिक संस्थानों में भी उच्च पदों पर कब्जा कर लिया, विशेष रूप से मक्का और मदीना के पवित्र स्थानों की रखवाली करने वाले भरोसेमंद व्यक्ति, वे राज्य के फैसलों को प्रभावित करने में सक्षम थे और राजाओं और रानियों के सबसे करीबी होने के लिए बड़ी मात्रा में धन भी प्राप्त करते थे। इस प्रकार हिजरा अक्सर उस अवधि में उनकी स्थिति की भूमिका बताता है।

सामाजिक सहिष्णुता :–

वंचित और वंचित समूहों द्वारा सामना किए जाने वाले मुद्दों और समस्याओं को उजागर करने के लिए सामाजिक बहिष्करण ढांचे का तेजी से उपयोग किया जा रहा है। हिजड़ों/टीजी महिलाओं के लिए सामाजिक बहिष्करण ढांचे को अपनाना, कोई यह समझ सकता है कि कैसे टीजी समुदायों को सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में प्रभावी रूप से भाग लेने से बाहर रखा गया हैय अर्थव्यवस्थाय और राजनीति और निर्णय लेने की प्रक्रिया।

सामान्य तौर पर परिवार और समाज से बहिष्करण, भारतीय संस्कृतियों, धर्मों, भाषाओं और रीति–रिवाजों में व्यापक अंतर को सहन, स्वीकार और सम्मान करते हैं। भारतीय समाज की स्वीकार्यता और सहिष्णुता के सामान्य माहौल के बावजूद, ऐसा प्रतीत होता है कि समलैंगिक यौन अभिविन्यास और ऐसे लोगों के बारे में सीमित सार्वजनिक ज्ञान और समझ है जिनकी लिंग पहचान और अभिव्यक्ति उनके जैविक सेक्स के साथ असंगत है। भारत में ट्रांसजेंडर समुदायों सहित यौन अल्पसंख्यकों के खिलाफ मानवाधिकारों के उल्लंघन को व्यापक रूप से प्रलेखित किया गया है। अधिकांश परिवार यह स्वीकार नहीं करते हैं कि उनका लड़का उन तरीकों से व्यवहार करना शुरू कर देता है जिन्हें स्त्रैण या अपेक्षित लिंग भूमिका के लिए अनुपयुक्त माना जाता है। नतीजतन, परिवार के सदस्य अपने बेटे/भाई को लड़की या महिला की तरह व्यवहार करने या कपड़े पहनने से धमका सकते हैं, डांट सकते हैं या यहां तक कि हमला भी कर सकते हैं। कुछ माता–पिता समाज के निर्धारित लिंग मानदंडों को पार करने और एक लड़के से अपेक्षित भूमिकाओं को पूरा नहीं करने के लिए अपने बच्चे को स्पष्ट रूप से अस्वीकार कर सकते हैं और बेदखल कर सकते हैं। ऐसा करने के लिए माता–पिता कई कारण बता सकते हैं, परिवार के लिए अपमान और शर्मिंदगी लाना या उनके बच्चे की भविष्य में एक महिला से शादी करने की संभावना कम हो जाती है और इस तरह उनकी पीढ़ी समाप्त हो जाती है (यदि उनके पास केवल एक लड़का है) और अपने बच्चे की ओर से लेने में असमर्थता महसूस की परिवार की देखभाल।

इस प्रकार, बाद में ट्रांसजेंडर महिलाओं को संपत्ति में अपने हिस्से का दावा करना या कानूनी रूप से उनका अधिकार प्राप्त करना भी मुश्किल हो सकता है। कभी–कभी, बच्चा या किशोर परिवार से दूर भागने का फैसला कर सकता है, भेदभाव को बर्दाश्त नहीं कर पाता है या अपने परिवार को शर्मसार नहीं करना चाहता है। उनमें से कुछ अंततः हिजड़ा समुदायों के लिए अपना रास्ता खोज सकते हैं। इसका मतलब है कि बहुत से

हिजड़े पढ़े–लिखे या अशिक्षित नहीं हैं और इसके परिणामस्वरूप नौकरी पाना मुश्किल हो जाता है। इसके अलावा, हिजड़ा/टीजी लोगों को रोजगार देने वाले लोगों को ढूंढना मुश्किल है। स्वास्थ्य सेवाओं में भी हिजड़ों को भेदभाव का सामना करना पड़ता है। अक्सर, स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं को शायद ही कभी यौन विविधताओं को समझने का अवसर मिलता है और उन्हें यौन अल्पसंख्यकों के स्वास्थ्य संबंधी मुद्दों के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं होती है। इस प्रकार, सार्वजनिक या निजी स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँचने में टीजी लोगों को अद्वितीय बाधाओं का सामना करना पड़ता है। एचआईवी परीक्षण, एंटीरेट्रोवाइरल उपचार और यौन स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँचने में बाधाओं को अच्छी तरह से प्रलेखित किया गया है।

राजनीतिक भागीदारी :–

राजनीतिक भागीदारी से बहिष्करण और कानूनी मान्यता की कमी के कारण सरकारी राशन (खाद्य–मूल्य सब्सिडी) दुकान कार्ड, पासपोर्ट और बैंक खाता प्राप्त करने में महत्वपूर्ण परिणाम होते हैं। ट्रांसजेंडर लोगों के पास अब महिला या 'अन्य' के रूप में वोट देने का विकल्प है। कानूनी मुद्दे उन लोगों के लिए जटिल हो सकते हैं जो लिंग बदलते हैं, साथ ही साथ उनके लिए भी जो लिंग–भिन्न हैं। कानूनी मुद्दों में उनकी लैंगिक पहचान, समान–लिंग विवाह, बच्चे को गोद लेना, विरासत, वसीयत और ट्रस्ट, आव्रजन स्थिति, रोजगार भेदभाव और सार्वजनिक और निजी स्वास्थ्य लाभों तक पहुंच की कानूनी मान्यता शामिल है। विशेष रूप से, एक महिला या ट्रांसजेंडर महिला के रूप में लिंग पहचान की कानूनी मान्यता प्राप्त करना एक जटिल प्रक्रिया है। हालांकि, किसी की लिंग पहचान की पुष्टि के संबंध में मतदाता पहचान पत्र की कानूनी वैधता स्पष्ट नहीं है। हिजड़ों ने पूर्व में चुनाव लड़ा था। यह प्रलेखित किया गया है कि एक चुनाव में लड़ने वाले एक ट्रांसजेंडर व्यक्ति की जीत पलट गई थी क्योंकि उस व्यक्ति ने एक 'महिला' के रूप में चुनाव लड़ा था, जिसे इस प्रकार धोखाधड़ी और अवैध माना गया था। इस प्रकार, चुनाव लड़ने का अधिकार अभी तक महसूस नहीं किया गया है।

आर्थिक भागीदारी :–

आर्थिक भागीदारी से बहिष्करण और सामाजिक सुरक्षा की कमी, हिजड़ा/टीजी समुदायों को विभिन्न सामाजिक सुरक्षा मुद्दों का सामना करना पड़ता है। चूंकि अधिकांश हिजड़े घर से भाग जाते हैं या बेदखल कर दिए जाते हैं, वे लंबे समय में अपने जैविक परिवार से समर्थन की उम्मीद नहीं करते हैं। बाद में, उन्हें बहुत सारी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, खासकर जब वे कमाने की स्थिति में नहीं होते हैं या स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं, रोजगार के अवसरों की कमी, या वृद्धावस्था के कारण कमाई की क्षमता कम हो जाती है।

सामाजिक सुरक्षा उपायों के संबंध में हिजड़ों/टीजी समुदायों के सामने आने वाले कुछ महत्वपूर्ण मुद्दे और चिंताएं नीचे दी गई हैं। आजीविका के विकल्पों का अभाव अधिकांश नियोक्ता योग्य और कुशल ट्रांसजेंडर लोगों के लिए भी रोजगार से इनकार करते हैं। स्व–नियोजित हिजड़ों की छिटपुट सफलता की कहानियां, जो कुछ राज्यों में खाने की दुकानें चलाते हैं, या सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित करते हैं, की सूचना मिली है। हालाँकि, वे अपवाद हैं। आजीविका विकल्पों की कमी ट्रांसजेंडर लोगों के एक महत्वपूर्ण अनुपात के लिए यौन कार्य को चुनने या जारी रखने का एक प्रमुख कारण है – इसके संबद्ध एचआईवी और स्वास्थ्य संबंधी जोखिमों के साथ।

मामले का अध्ययन :-

किन्नर समुदाय की वास्तविकताओं के बारे में बेहतर जानकारी के लिए अजमेर जिले के किन्नर समुदाय से कुछ समहो से मिला गया। और उस के समूह के एक व्यक्ति संजना (परिवर्तित नाम) जी से मुलाकात हुई है। संजना अजमेर जिले के एक छोटे से गाँव में मध्यम वर्गीय परिवार में जन्मी तीन भाई–कहिनों ने दूसरे नम्बर की संतान है। प्रारम्भ से इन्हें लड़के की तरह पालन–पोषण किया गया। परन्तुअ जैसे–जैसे यह बडे हुए अनका झुकाव लडकियों की तरह दिखाने में या एक लड़के के रूप में अपनी पहचान को रखना इनके लिए असहज था। जैसे–जैसे व्यवहार में बलाव आ रहा था आस पडोस व स्कूल में अनका मजाक उड़ाया जाता था। मीठा, छक्का, हिजडा आदि नामों से बुलाया जाता था परिवार को उनके इस रूप से तथा समाज के ताने–बाने से शर्मिन्दगी महसूस होने लगी थी तथा परिवार में तनाव का वातावरण बनने लगा था। इन हलातों में संजना 9 वीं कक्षा तक शिक्षा प्राप्त कर सकी क्योंकि विद्यालय जाना मुश्किल हो रहा था। इन सबसे परेशान होकर संजना ने परिवार को छोड़ने का निर्णय किया। और वह किन्नर समुदाय के पास जाकर रहने लगी। वहाँ इन्हें नया नाम मिला नये लोग जिनसे नये सम्बन्ध स्थापित हुए। वहाँ की परम्पराओं को सीखने का अनुभव इनके लिए सुखद था।

क्योंकि संजना को बचपन से संजने सवंरने का शौक था नृत्य का शोक था इसलिए संजना को नई परम्परा को सीखना आयान था गुरु–शिष्य की परम्परा को सीखना आसान था। गुरु यिाष्य की परम्परा संजना को सुखद व अपनेपन की भावना महसूस करा रही थी। उससे लिए परिवार, मित्र व पडौस को भूलना आसान था क्योंकि यहाँ उसे बदनामी, नफरत व हंसी का पात्र समझा गया। एक ओर जहाँ जन्म मूलक परिवार ने उसे स्वीकार करने से मना कर दिया वही दूसरी ओर तृतीयक लिंगी समूह से उसे प्रेम, सम्मान दिया गये संबंधी मिले तथा संजना आज आत्म निर्भर है। बधाई लेने जाने के अलावा संजना कई धार्मिक गतिविधियों में भाग लेती है जैसे भजन संध्या आदि। कई प्रतिष्ठित व्यक्तियों व संस्थाओं द्वारा इन्हें अतिथि के रूप में आंमत्रित किया जाता है। तृतीयक लिंगी समूह में आने के बाद संजना अपना दूसरा जन्म मानती है। उन्हें अपने तृतीयक लिंगी पहचान से कोई शिकायत नहीं परन्तु किसी दूसरे अवसरों पर संजना को मलाल रहता है वह सोचती है कि उसकी भी किसी से शादी होती है, परिवार होता, उसके संतान होती। परन्तु वह जानती है कि तृतीयक लिंगी कभी संतान को जन्म नहीं दे सकती तथा अपना स्वयं का परिवार स्थापित नहीं कर सकते।

तृतीयक लिंगी व्यक्ति के जीवन के दर्द व दुख जन्म से ही प्रारम्भ हो जाता है क्योंकि न इन्हें परिवार का साथ मिलता है न समाज का सहयोग। गुरु और समुदाय के प्रति समर्पण के साथ समायोजित हो गयी है जहाँ प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे का सम्मन करता है और एक दूसरे की परवाह करता है।

कठिनाईयों को समायोजित करने और स्वीकार करने का एक मजबूत विश्वास और उसके पास जो कुछ है उससे संतुष्ट दिखती है, लेकिन यह सिर्फ इसलिए है क्योंकि यह सोचती है कि कोई बेहतर मदद प्रदान नहीं की जा सकती है और उसके गुरू व बहने ही परिवार है जो उसे मिला है वह वैसे भी उम्मीद करती है और अपने जैसे सभी व्यक्तियों के लिए बेहतर भविष्य की आशा करती है।

निष्कर्ष :-

गहन अवलोकन और तथ्यों और ग्रंथों को पढ़ने के बाद यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि हमने

जो कुछ सुना और देखा है, वह व्यापक अवलोकन पर समुदाय की व्यक्तिगत राय के साथ कठोर विपरीतता को दर्शाता है। अनगिनत मुद्दे ट्रांसजेंडर समुदाय की लैंगिक पहचान से जुड़ रहे हैं जैसे कि भेदभाव, कलंक का बने रहना, शैक्षिक सुविधाओं की कमी, बेरोजगारी, आश्रय की कमी, एचआईवी देखभाल और स्वच्छता जैसी चिकित्सा सुविधाओं की कमी, अवसाद, हार्मोन की गोली का दुरुपयोग, तंबाकू और शराब का दुरुपयोग और शादी, संपत्ति, चुनावी अधिकार, गोद लेने, परिवार और समाज से अलगाव, संवेदनशीलता की कमी, असुरक्षित जीवन, जबरन सेक्स वर्क और भीख मांगना। सामाजिक कलंक में ऐसे सदस्यों के प्रति लेबलिंग और नकारात्मक सामान्यीकृत रवैये के कारण अक्षम होना शामिल है, जिन्हें सेक्स वर्कर या सेक्स सॉलिसिटर के रूप में काम करने के लिए मजबूर किया जाता है। कानूनी नीतियों और आवश्यक सामाजिक जागरूकता के पर्याप्त कार्यान्वयन के बिना, ट्रांसजेंडर का हाशियाकरण नहीं बदला जाएगा।

संदर्भ :–

1. सामाजिक–सांस्कृतिक बहिष्करण और भारत में ट्रांस–जेंडरों का समावेश, के. देलिवाराराव और सी. हैगिंग (2018) जे समाज, अनुसूचित जाति प्रबंधित करना। वॉल्यूम 2, 5, अंक –1m 10–17
2. http://itequals.com/gender/social.status.indias.hijra.community/
3. https://en.wikipedia

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 50-60

समाज में उत्तर भारतीय संगीत की महान महिला संगीतज्ञों का योगदान

जया मींड, पीएच.डी. शोधार्थी, संगीत विभाग (कंठ)
डॉ. पुनीता श्रीवास्तव, शोध पर्यवेक्षक एवं सह–आचार्य
राजकीय कला कन्या महाविद्यालय, कोटा विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

प्रस्तावना :–

संगीत के इतिहास का पर्यवेक्षण करने से यह ज्ञात होता है कि नारी की प्रेरणा से ही संगीत में सौन्दर्य एवं माधुर्य की स्थापना हुई है। वास्तव में गीत, वाद्य एवं नृत्य तीनों सांगीतिक अंगों के विकास एवं माधुर्य की स्थापना में नारी की प्रेरणा अविस्मरणीय है। गायन के अन्तर्गत गीत के प्रकारों में श्रृंगार रस के वर्णन में नारी की भावनाओं का प्रदर्शन किया गया है, यद्यपि इन गीत प्रकारों के रचयिता पुरूष ही रहे है। कुछ विद्वान संगीतज्ञों ने नारी से प्राप्त प्रेरणा एवं शिक्षा को उन्मुक्त रूप से स्वीकार नहीं किया है परन्तु फिर भी संगीत के क्षेत्र में इस सत्य को कोई भी झुठला नहीं सकता कि पुरूष की प्रेरणा स्त्रोत नारी ही है। इसके अतिरिक्त यह सर्वविदित है कि संगीत में मधुरता की स्थापना एवं उत्पत्ति भगवती तत्व की देन है, यह स्वीकार किया गया है। संगीत की तीनों विधाओं–गीत, वाद्य एवं नृत्य में माधुर्य का महत्वपूर्ण स्थान है। माधुर्य के अभाव में संगीत चेतना विहीन हो जाता है। अतः यह तथ्य पूर्णतया सत्य ही है कि चाहे गायन हो, वादन हो अथवा नृत्य हो, माधुर्य के अभाव में माधुर्यविहीन गायन केवल कंठ का व्यायाम, माधुर्यविहीन वादन केवल हस्त संचालन की चातुर्यता एवं नृत्य भी केवल व्यायाम का ही रूप धारण कर लेता है यदि उसमें महत्वपूर्ण आंगिक, वाचिक एवं मानसिक भावों की अभिव्यक्ति का अभाव है।

माधुर्य के कई अर्थ है उदाहरण स्वरूप – मिठास, लावण्य एवं सहज–सुन्दरता। व्यवहारिक दृष्टिकोण से भी समाज में वह व्यक्ति अधिक प्रसिद्ध एवं लोकप्रिय होता है जिसकी वाणी में मिठास होती है, जो मृदुभाषी होता है। इसलिये कहा भी गया है :–

तुलसी मीठे वचन ते, सुख उपजत चहुँ ओर।
वशीकरण इक मंत्र है तजि दे वचन कठोर।।

अर्थात यदि कंठ में मधुरता हो, कही जाने वाली बात भी हितकर, मधुर हो, शब्द संयोजन भी मधुर हो तो इस प्रकार की माधुर्य पूर्ण त्रिवेणी संगम को अनुपम प्रयागराज ही कहा जा सकता है। भारतीय दृष्टिकोण से विचार करने पर यह तथ्य ज्ञात होता है कि चेतन, अचेतन, दृश्य–अदृश्य सम्पूर्ण जगत माधुर्य का ही परिणाम

है। भारतीय कलाओं के निर्माण का मुख्य उद्देश्य यही रहा है कि इसके माध्यम से उस आनन्द स्वरूप परमात्मा की रसानुभूति के रूप में जन साधारण को भी इसकी अनुभूति हो सके एवं इस आनंदानुभूति के पश्चात् वे परमानन्द की खोज हेतु लालयित हो। इस रसानुभूति को 'बह्मानन्द सहोदय' कहा गया है। ब्रह्मानन्द को अनुभव करने वाले ही इसे ब्रह्मानन्द सहोदय कह सकते है इसलिए माधुर्यता (जो भगवती शक्ति ही है) अनिवार्य तत्व के रूप में संगीत, साहित्य आदि समस्त ललित कलाओं में विद्यमान रहती है एवं इसकी प्राप्ति नारी–शक्ति के माध्यम से ही सम्भव है।

अतः इस शोध पत्र में वर्तमान समय में विख्यात गायन के क्षेत्र में सफल महिला कलाकारों का वर्णन किया गया है। सर्वप्रथम हिन्दुस्तानी संगीत के क्षेत्र में शास्त्रीय गायन के अन्तर्गत विभिन्न संघर्षो के पश्चात् अपना स्थान बनाने वाली महिला कलाकारों का वर्णन निम्न वर्णित है :–

1. सुलोचना बृहस्पति :–

रामपुर घराने एवं आचार्य कैलाश चन्द्र देव बृहस्पति की संगीत परम्परा को आगे बढ़ाने वाली सुलोचना बृहस्पति संगीत–जगत का एक बहुचर्चित नाम है। सुलोचना जी का जन्म इलाहबाद के एक संगीतमय एवं शैक्षणिक–सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि वाले महाराष्ट्रियन परिवार में 7 नवम्बर 1937 को हुआ। उनके पिता का नाम श्री पढ़रिकर कालेकर व माता का नाम श्रीमती विमला बाई कालेकर है। सुलोचना जी ने अंग्रेजी विषय में परास्नातक तक शिक्षा ग्रहण की, परन्तु उनकी संगीत शिक्षा विद्यालयीन शिक्षा काल से ही प्रारम्भ हो गई थी। सर्वप्रथम इलाहाकाद के पं0 भोलानाथ भट्ट जी से तत्पश्चात् रामपुर के प्रसिद्ध उस्ताद मुश्ताक हुसैन खाँ जी से शिक्षा प्राप्त की परन्तु सुलोचना जी की वर्तमान संगीत उपलब्धियाँ उनके पति आचार्य बृहस्पति जी की देन है। आचार्य बृहस्पति संगीत क्षेत्र के प्रसिद्ध विद्वान एवं रचनाकार थे।

सुलोचना जी के शब्दों में, 'स्व. उ. मुश्ताक हुसैन खाँ साहब ने मुझे स्वर–साधना की शिक्षा दी, लम्बी साँसे एवं पूरा दम भरना खाँ साहब की देन है। स्व0 पं0 भोला नाथ भट्ट ने मुझे सैकड़ों दुर्लभ बंदिशे दी एवं मेरे संग्रह में वृद्धि की आचार्य जी तक पहुँचाने का श्रेय श्री भोलानाथ भट्ट जी को ही है। इसके पश्चात् मेरे पूज्यगुरू एवं पति ने मुझे स्वर के लगाव राग के रूप एवं विस्तार, तानों के निर्माण एवं अभ्यास लय के साधिकार प्रयोग, स्वर एवं साहित्य के समन्वय, राग की रसात्मक प्रस्तुति आदि के विषय में दुर्लभ दृष्टि दी। अपने प्रत्येक कथन की पुष्टि हेतु उनके पास ज्ञान अखंडनीय एवं तर्क संगत होता था। शिष्य निष्पादन करने की कला में वे अत्यन्त निपुण थे एवं स्वयं अपने सामने बैठाकर मुझे प्रतिदिन अभ्यास कराते थे। उन्होने सैकड़ों बंदिशे बनाई जो अत्यन्त पंसन्द की गई। 'मेरे पास अनंगरंग की मुद्रण सभी बंदिशे मेरे पति एवं गुरू आचार्य बृहस्पति की ही है।'

सुलोचना जी रामपुर परम्परा की एक मात्र ऐसी प्रतिनिधि गायिका है, जिन्हें ख्याल, ठुमरी, दादरा, टप्पा, तराना एवं भजन इत्यादि कुशलतापूर्वक गाने पर समान अधिकार है। राग की शुद्धता एवं उसका क्रमिक विस्तार, लय पर असाधारण अधिकार, खुले हुये कण्ठ से बिजली जैसी तैयार एवं दानेदार ताने सुलोचना जी के ख्याल – गायन की विशेषतायें है, तो बोल–बनाव एवं 'षड्जचालन– उनके ठुमरी गान का प्रधान गुण है। वे ऑल इण्डिया रेडियो की सर्वोत्क्रष्ट श्रेणी की गायिका है एवं उन्होने देश एवं विदेश में रामपुर परम्परा का नाम

उज्जवल किया है।

स्व. उस्ताद दबीर खाँ के शब्दों में, 'सुलोचना जी के बहलावों में बीन, फिरत एवं तान के कव्वाल बच्चों की शैली, ठुमरी में सुर–ब्यौरा, सुर–भेद एवं ठाठ–भेद है। इनके पूज्य पति आचार्य बृहस्पति ने इनको रामपुर परम्परा के रहस्यों के रूप में वे आभूषण दिये है, जिनकी आभा सदैव जगमगाती रहेगी।'

सुलोचना जी अद्वितीय प्रतिभा की धनी थी। अत्यन्त अल्पायु से ही उन्हे पुरस्कार प्राप्त होने प्रारम्भ हो गये थे। सन् 1955 में आकाशवाणी द्वारा आयोजित संगीत प्रतियोगिता में प्रथम आने पर राष्ट्रपति स्व. पं. राजेन्द्र प्रसाद जी द्वारा स्वर्ण पदक प्राप्त हुआ। मरफी रेडियो द्वारा मरफी मैट्रो अवार्ड प्राप्त हुआ। सन् 1977 में 'आथर्स गिल्ड ऑफ इण्डिया' एवं फेडरेशन ऑफ इंडियन पब्लिशर्स' द्वारा उनकी पुस्तक 'खुसरो तानसेन एवं अन्य कलाकार' को पुरस्कृत किया गया तथा सन् 1984 में 'उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी' पुरस्कार प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त सुलोचना जी ने आगे चलकर स्वतन्त्र रूप से भी संगीत में शोध कार्य किया एवं सैकड़ों नई रचनाएँ प्रस्तुत की। वर्तमान समय में उनके पास राग–रागनियों का उच्च कोटि का संग्रह है। वह ख्याल, ठुमरी, दादरा, टप्पा सभी कुछ शास्त्रीय परंपरागत ढंग से गाती है। आलाप एवं ध्रुपद अंग को भी संगीत की पारम्परिक शैली में प्रस्तुत करती है। देश भर की लगभग सभी संगीत सभाओं में गाने के साथ सुलोचना बृहस्पति ने रूस, हंगरी, मंगोलिया, नेपाल, पश्चिम जर्मनी, इंग्लैण्ड एवं अन्य कई यूरोपीय देशों में भी अपने संगीत कार्यक्रम दिये है। सुलोचना जी की एक अन्य शोध पुस्तक 'राग रहस्य' विभिन्न रागों के रहस्यों पर अच्छा प्रकाश डालती है। इसके अतिरिक्त रामपुर घराने की 'सदारंग परम्परा' एवं उसके बाद 'अनंगरंग परम्परा' की एक मात्र महिला प्रतिनिधि मानी जाने वाली सुलोचना बृहस्पति को सन् 2006 में मध्य प्रदेश सरकार द्वारा 'तानसेन सम्मान' से सम्मानित किया गया। अतः वर्तमान समय में सुलोचना बृहस्पति शास्त्रीय जगत का अत्यन्त श्रद्धेय एवं विख्यात नाम है।

2. सुनन्दा पटनायक :–

सुनन्दा पटनायक हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की प्रसिद्ध गायिका है। सुनन्दा जी ग्वालियर घराने से सम्बन्धित है। सुनन्दा पटनायक का जन्म 7 नवम्बर 1934 ई. को उड़ीसा में हुआ था। सुनन्दा जी प्रसिद्ध उड़िया भाषा कवि बैकुण्डनाथ पटनायक जी की पुत्री है। सुनन्दा जी ने चौदह वर्ष की अल्पायु में सन् 1948 में कटक के आल इंडिया रेडियो से गायन का प्रारम्भ किया था। एक बार संयोगवश उड़ीसा के तत्कालीन राज्यपाल असफ अली ने रेडियो में उनका गायन सुना एवं वे उनके गायन से प्रभावित हुये तथा उन्होनें राजभवन में सुनन्दा जी को नियमित रूप से गायिका के तौर पर नियुक्त कर लिया। अतएव जब कभी भी राजभवन में राजनीतिक अतिथिगण का आगमन होता था तो स्वागत एवं सम्मान हेतु सुनन्दा पटनायक अपना गायन प्रस्तुत कर प्रशंसा एवं प्रोत्साहन प्राप्त करती थी।

इसी प्रकार एक बार पुरी की यात्रा में तत्कालीन राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र प्रसाद जी ने इनका गायन सुना एवं वे भी गायन से अत्यन्त प्रभावित हुये। एवं उन्होने सुनन्दा जी के संगीत को और अधिक परिपक्व एवं उनकी कला में निखार लाने हेतु पूना के पं0 विनायक राव पटवर्धन के सानिध्य में छात्रवृत्ति के साथ शिष्यत्व ग्रहण

कराया। सन् 1956 में पूना के संगीत विद्यालय से परास्नातक (संगीत गायन) की उपाधि प्राप्त की। सन् 1957 में कलकत्ता में अखिल भारतीय सदारंग संगीत सम्मेलन में मनमोहक प्रस्तुति दी एवं उन्हें पुरस्कार स्वरूप तेरह सोने के सिक्के प्रदान किए गए। तब से सुनन्दा जी की ख्याति राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय रूप से चारों ओर फैल गई। सुनन्दा जी विशेष रूप से अत्यन्त द्रुत लय एवं गति में तराना गायन करने में विख्यात है। वे गुरू माँ के नाम से भी जानी जाती है एवं उन्होंने सन् 1983 से वर्तमान समय तक कलकत्ता में निवास कर लोगों में कला का प्रकाश फैला रही है।

सुनन्दा पटनायक जी का संगीत के प्रति समर्पण एवं योगदान हेतु उन्हें 1970–72 में उड़ीसा संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। अतः सुनन्दा जी हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में महान कलाकारों में से एक है।

3. मीता पंडित :–

मीता पंडित हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की प्रसिद्ध गायिका है। मीता पंडित का जन्म दिल्ली में हुआ। वे सांगीतिक वातावरण में पली बढ़ी थी। उनकी माता का नाम आभा पंडित था एवं पिता का नाम पं. लक्ष्मण कृष्णराव पंडित था। वे ग्वालियर घराने से सम्बन्धित थे। एवं इनके पिता को संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार का गौरव भी प्राप्त हुआ था। मीताजी का बाल्यकाल दिल्ली में ही व्यतीत हुआ। यहाँ उन्होने सेन्ट मैरी विद्यालय से इण्टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण की एवं लैडी श्री राम कालेज दिल्ली से वाणिज्य संकाय में स्नातक की डिग्री अर्जित की। मीता जी को प्रारम्भिक संगीत की शिक्षा अपने दादा जी पद्म भूषण पं. कृष्णराव शंकर पंडित एवं अपने पिता के माध्यम से प्राप्त हुयी। जब वे मात्र तीन वर्ष की थी तभी उनके घर विभिन्न संगीत के जानकारों का उनके पिता के साथ आना जाना लगा रहता था। एवं घर पर संगीत की चर्चा हुआ करती थी।

फलस्वरूप अत्यन्त अल्पायु से ही मीता जी के अन्दर संगीत के गुण दिखायी देने लगे थे। परन्तु जब वे किशोरावस्था में पहुँची तो उनके माता–पिता ने उन्हे संगीत के क्षेत्र में करियर बनाने के अपेक्षा कोई अन्य क्षेत्र चुनने को कहा। इसका प्रमुख कारण यह था कि उनके अभिभावक यह नहीं चाहते थे कि मीता संगीत के क्षेत्र में करियर बनाने हेतु अनियमित दिनचर्या एवं प्रस्तुतियाँ देने हेतु अकेले यात्रा इत्यादि करे जो कि महिला के लिये अत्यन्त कठिन है। मीता जी के बडे भाई तुषार पंडित वस्तुतः परिवार की परम्परा को आगे बढ़ा रहे थे। वे हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में शोध भी कर रहे थे। परन्तु 1 सितम्बर 1994 को दिल्ली में एक कार दुर्घटना में घायल हो जाने के कारण वे यह कार्य न कर सके। मीता जी उस समय स्नातक की डिग्री प्राप्त कर एम0बी0ए0 करने की तैयारी कर रही थी। तब उन्होने अपनी पारिवारिक परम्परा को आगे बढ़ाने का निर्णय लिया। उन्होने संगीत विषय से परास्नातक पूर्ण किया एवं हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में शोधकार्य पूर्ण किया।

इसके पूर्व मीता जी ने अपनी सर्वप्रथम प्रस्तुति नौ वर्ष की आयु में तीन दिवसीय संगीत उत्सव, में दी जो उनके दादा जी पं0 कृष्णराव शंकर पंडित द्वारा आयोजित किया गया था। यह उत्सव भारत भवन, भोपाल में आयोजित किया गया था। एवं पन्द्रह वर्ष की आयु में वाराणसी में आयोजित संकट मोचन उत्सव में भी उन्होनें संगीत प्रस्तुति दी। यह उत्सव देश के बड़े शास्त्रीय संगीत एवं नृत्य उत्सवों में से एक है। अतः मीता जी की

प्रतिभा दिन प्रतिदिन निखर रही थी। सन् 1995 से 2005 के मध्य मीता पंडित जी ने देश विदेश में कई प्रस्तुतियाँ दी। विदेशों में उन्होनें फ्राँस, जर्मनी, लन्दन, स्विटजरलैण्ड, नार्वे, रोम, यूनाइटेड स्टेटस, रूस एवं बांग्लादेश इत्यादि में प्रस्तुतियाँ दी। सन् 2004 में सार्क सम्मेलन के दौरान मीता पंडित जी सांस्कृतिक राजदूत के रूप में भारत सरकार द्वारा नियुक्त की गई। सन् 2008 में मीता पंडित जी सांस्कृतिक राजदूत के रूप में भारत सरकार द्वारा नियुक्त की गई।

सन् 2008 में मीता पंडित जी ने 'स्वर श्रंखला' नाम से एक संगीत श्रृंखला बनाई जो कि वर्ल्ड स्पेस सेटेलाइट रेडियों पर जारी हुयी। मीता पंडित जी संगीत की विदुषी महिला कलाकार हैं। उन्हें विभिन्न घरानों के शास्त्रीय संगीत शैली का ज्ञान है। मीता जी ख्याल, ठुमरी, ठप्पा, भजन, गजल इत्यादि गाती है परन्तु उन्होने ख्याल विधा को अपना मुख्य गायन केन्द्र बनाया एवं वे अत्यन्त कुशलता से ख्याल गाने में निपुण है। उन्हे अपने सांगीतिक सफर में कई पुरस्कार एवं सम्मान प्राप्त हुए। जैसे सन् 1989 में गोल्डन वायस आफ इण्डिया पुरस्कार एवं 1992 में 'सुर मणि' पुरस्कार जो सुर सिंगार संसद द्वारा प्राप्त हुआ। 1999 में 'युवा रत्न'' पुरस्कार रोट्रेक्ट क्लब की ओर से प्राप्त हुआ। सन् 2007 में संगीत नाटक अकादमी द्वारा ''बिस्मल्लाह खाँ' पुरस्कार द्वारा सम्मानित की गई। एवं सन् 2008 में इन्दिरा गांधी प्रियदर्शी अवार्ड से मीता पंडित जी को गौरवान्वित किया गया। इसके अतिरिक्त शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में उन्हे कई सम्मान जनक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। मीता पंडित जी वर्तमान समय में भी अपनी कला का रंग बिखेर का कला प्रेमियों को लाभान्वित कर रही है।

4. पूर्णिमा चौधरी :-

कलकत्ता के एक कुलीन बंगाली परिवार की कन्या एवं काशी के एक कुलीन बंगाली परिवार की पुत्रवधु श्रीमती पूर्णिमा चौधरी का लोकप्रिय एवं चर्चित कलाकार के रूप में विशिष्ट स्थान है। सांस्कृतिक संस्थाओं, आकाशवाणी, देवालयों के सार्वजनिक संगीत उत्सवों में संगीत प्रेमियों के लिये सर्व सहयोगी कलाकार पूर्णिमा चौधरी अत्यन्त लोकप्रिय है। पूर्णिमा जी बाल्यकाल से ही संगीत के प्रति विशेष रूचि रखती थी। अतः इनकी रूचि को देखते हुये इनके अभिभावकों ने भी पूर्ण सहयोग दिया। कलकत्ता में निवास करते हुये पूर्णिमा जी ने अनेक वर्षो तक देश के सुप्रसिद्ध गायक श्री ए.टी. कानन से संगीत की शिक्षा ग्रहण की। विवाहोपरान्त कलकत्ता से काशी आने पर पतिगृह में भी पूर्णिमा जी को पूर्ण सहयोग एवं समर्थन प्राप्त हुआ। जिसके फलस्वरूप नगर के वयोवृद्ध विद्वान संगीत शिक्षक एवं लोकप्रिय कुशल गायक श्री महादेव प्रसाद मिश्र से बनारस शैली की ठुमरी, दादरा, होली, चौती, कजरी सीखने का सौभाग्य पूर्णिमा जी को प्राप्त हुआ। पूर्णिमा जी ने अपनी निष्ठा, लगन एवं सतत् अभ्यास से पं. महादेव मिश्र जी की शैली को आत्मसात करते हुये क्रमशः प्रगति के पथ पर अग्रसर होती गई एवं नगर की सांस्कृतिक संगोष्ठियों में अपने कार्यक्रम प्रस्तुत करते रहने का अवसर बराबर प्राप्त करती रही।

देश की प्रतिष्ठित गायिका गिरिजा देवी जी की प्रभावशाली गायन शैली से प्रभावित होकर पूज्य गुरू पं. महादेव मिश्र की सहर्ष स्वीकृति प्राप्त कर इन्हे श्रीमती गिरिजा देवी जी से संगीत शिक्षा प्राप्त करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। सार्वजनिक मंचों के अतिरिक्त आकाशवाणी से भी अनेक वर्षो से पूर्णिमा जी के कार्यक्रम प्रसारित होते

रहे। आकाशवाणी के 'मंगलवारीय संगीत सभा' कार्यक्रम की सफल प्रस्तुति के फलस्वरूप इन्हे शीघ्र ही आकाशवाणी एवं दूरदर्शन की प्रथम श्रेणी की कलाकार होने का गौरव प्राप्त हुआ। दिल्ली, मुम्बई, कलकत्ता, इन्दौर, भोपाल, पटना, लखनऊ, इलाहबाद, ग्वालियर, जबलपुर, गोरखपुर, वाराणसी आदि नगरों के आकाशवाणी एवं दूरदर्शन केन्द्रों पर पूर्णिमा जी के अनेक कार्यक्रम प्रसारित होते रहते है। सुरसिंगार संसद (मुम्बई), सदारंग संगीत सम्मेलन (कलकत्ता), संगीत नाटक अकादमी दिल्ली, उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी लखनऊ, लखनऊ महोत्सव, तानसेन संगीत समारोह ग्वालियर, आई0टी0सी0 संगीत समारोह (वाराणसी) इत्यादि प्रमुख संगीत समारोहों में भाग लेकर पूर्णिमा जी ने देश के संगीत प्रेमियों की प्रशंसा एवं स्नेह प्राप्त किया।

अपनी व्यक्तिगत इंग्लैण्ड यात्रा (1981–82) में उन्हे अनेक नगरों में कई सफल कार्यक्रम देने एवं बी.बी.सी. लन्दन से कार्यक्रम प्रस्तुत करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त बांग्ला भाषा फिल्म चोकरे बाली एवं हरबर्ट आदि में भी संगीत दिया। पूर्णिमा चौधरी आई0टी0सी0 रिसर्च अकादमी से भी अत्यन्त निकटता से सम्पर्क में थी। अतः पूर्णिमा चौधरी जी के सांगीतिक योगदान को देखते हुये यह कह सकते है कि अत्यन्त सहज, सरल, विनम्र, व्यवहारकुशल, हँसमुख, मिलनसार, गुरूभक्त, कुशल गृहणी एवं लोकप्रिय गायिका श्रीमती पूर्णिमा चौधरी ने संगीत के क्षेत्र में बहुमूल्य योगदान दिया है। परन्तु अब वे हमारे मध्य नहीं है, दिनांक 04 मार्च 2013 को उनका निधन हो गया। अतः संगीत के क्षेत्र में उनकी क्षति पूरी नहीं की जा सकती।

गजल गायन :

1. सोनाली राठौर :–

सोनाली राठौर, भारत की प्रसिद्ध शास्त्रीय गायिका होने के साथ–साथ गजल एवं पार्श्व गायिका भी हैं। सोनाली राठौर का जन्म मुंबई में हुआ। उनकी विद्यालयीन शिक्षा सेन्ट जेवियर्स विद्यालय में हुई। उनका विवाह प्रसिद्ध गायक अनूप जलोटा के साथ हुआ। परन्तु कुछ समय पश्चात् सोनाली जी का अपने पति अनूप जलोटा जी के साथ सम्बन्ध – विच्छेद हो गये। इसके बाद उनका दूसरा विवाह भारतीय फिल्मों के प्रसिद्ध पार्श्व गायक रूप कुमार राठौर के साथ हुआ। इस दम्पति की एक पुत्री रीना भी है। सोनाली जी ने अपनी संगीत प्रस्तुतियाँ 10 वर्ष की अल्पायु में ही देना प्रारम्भ कर दी थी। उनकी प्रथम प्रस्तुति गुजराती संगीतकार श्री पुरूषोत्तम उपाध्याय जी के निर्देशन में हुई। इसी दौरान उनका परिचय पं0 हृदयनाथ मंगेशकर जी से हुआ, तभी उन्होने शास्त्रीय संगीत की विधिवत् शिक्षा लेना प्रारम्भ कर दिया था।

उनकी शास्त्रीय संगीत की शिक्षा किराना घराने के गुरू मुबारक अली, उस्ताद मश्कूर, उस्ताद नियाज खान, उ0 फैयाज जी के नेतृत्व में हुई। सोनाली जी ने हिन्दी, गुजराती, मराठी, बंगाली, अंग्रेजी, तेलगू इत्यादि भाषा में गीत गाये। अठारह वर्ष की आयु में सोनाली जी का पहला गुजराती गीत का रिकार्ड एच0एम0वी0 कंपनी के साथ प्रसारित हुआ। सन् 1987 में पहला गजल एलबम 'आगाज' प्रसारित हुआ। इसी वर्ष उन्हे दुबई में सर्वश्रेष्ठ गजल गायिका का पुरस्कार भी प्राप्त हुआ। उन्होने विभिन्न विधाओं के संगीत में अपनी आवाज दी है। जैसे – सुगम संगीत, ख्याल, गजल, भजन, टप्पा इत्यादि। 15 अगस्त 2005 को सोनाली राठौर एवं उनके पति रूप कुमार राठौर को अतिथि के तौर पर टेलीविजन पर प्रसारित कामेडी शो साराभाई टध् साराभाई पर आमंत्रित

किया गया। यह शो भारतीय चौनल 'स्टार वन' पर प्रसारित किया गया था।

इसके पश्चात् 23 फरवरी सन् 2008 में उन्होने अपने पति रूप कुमार जी के साथ संगीत के रियलटी शो जिसका नाम उस्ताद था, प्रतिभागी के रूप में भाग लिया। एवं इस दम्पति को उस शो में 'उस्ताद जोड़ी' नाम के शीर्षक से सम्मानित किया गया। इसके अतिरिक्त इण्टरनेट के माध्यम से देखे जाने वाले कार्यक्रम में भागीदारी दी जिसका नाम 'वह विजेता है' था, यह कार्यक्रम 2011 में महिला दिवस के अवसर पर आयोजित किया गया था। सोनाली जी के अतिरिक्त इस कार्यक्रम में हेमा सरदेसाई, सुनीता राव, शिवानी कश्यप एवं कई प्रसिद्ध महिला कलाकारों ने भाग लिया। अभी हाल ही में कुछ दिनों पूर्व उन्होने रूप कुमार राठौर के साथ एक सूफी एलबम 'कलमा' के नाम से प्रसारित किया है।

अतः वर्तमान समय में भी सोनाली राठौर जी पारिवारिक दायित्वों को भली प्रकार निर्वाह करते हुये गजल गायकी के क्षेत्र में निरन्तर अपना योगदान दे रही है जो सभी महिला कलाकारों के लिये प्रेरणास्त्रोत भी है।

लोक गायिका :

1. मालिनी अवस्थी (लोक गायिका) :–

मालिनी अवस्थी भारत की प्रमुख लोक गायिकाओं में से एक है। आप मुख्यतः बुन्देलखण्डी, भोजपुरी इत्यादि भाषाओं में लोकगीत गाती है। मालिनी जी का जन्म दिनांक 11 फरवरी 1967 को कन्नौज, उत्तर प्रदेश में हुआ। मालिनी जी लोकगीत के अतिरिक्त ठुमरी एवं कजरी इत्यादि भी गाती है। मालिनी जी ने भातखण्डे विश्वविद्यालय, लखनऊ से हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में परास्नातक की डिग्री प्राप्त की। एवं विदुषी गिरिजा देवी जी (बनारस घराना) से भी गंडा बंधन कर विधिवत् संगीत की शिक्षा प्राप्त की। मालिनी जी का विवाह आई0ए0एस0 अधिकारी अविनीश अवस्थी जी के साथ हुआ। अविनीश अवस्थी जी वर्तमान समय में उत्तर प्रदेश शासन में मुख्यमंत्री के प्रमुख सचिव पद पर कार्यरत हैं मालिनी जी को अपनी कला के प्रोत्साहन हेतु अपने पति एवं परिवार का भरपूर सहयोग मिलता आया है। मालिनी जी की आवाज तार सप्तक में अत्यन्त खिलती है जो कि उनके द्वारा गायी जाने वाली प्रसिद्ध ठुमरी 'ठाड़े रहे बाँके श्याममें अत्यन्त मधुर प्रतीत होती है। वे आल इण्डिया रेडियो में 'ए' ग्रेड की कलाकार भी है। मालिनी जी टेलीविजन में कई प्रस्तुतियाँ दे चुकी है। 2012 के उत्तर प्रदेश चुनाव के दौरान चुनाव आयोग की तरफ से राजदूत के रूप में नियुक्त की गई। सन् 2013 में कुम्भ मेला में भी मालिनी जी ने मनमोहक प्रस्तुतियाँ दी। जहाँ–ए–खुसरो नामक शास्त्रीय संगीत महोत्सव जो कि अत्यन्त लोकप्रिय महोत्सव है, इस महोत्सव में मालिनी जी नियमित रूप से अपनी प्रस्तुतियाँ देती आयी है।

मालिनी अवस्थी जी के कुछ अत्यन्त प्रसिद्ध लोकगीत इस प्रकार है :–

सैया मिले लरकइयाँ', रेलया बैरन पिया को लिये जाये रे' इत्यादि। मालिनी जी भारत ही नहीं अपितु विदेशों में भी अपनी संगीत प्रस्तुतियाँ दे चुकी है। लोकगीतों के विषय में आज की युवा पीढ़ी पर जो प्रभाव है उसके विषय में मालिनी अवस्थी जी का कहना है कि, नई पीढ़ी लोकगीतों को सुनना समझना चाहती है, परन्तु इन्हें उनके सामने प्रस्तुत तो किया जाये। गलती तो हमारी पीढ़ी की ही है। आज कितने कार्यक्रम होते है स्वस्थ

लोकगीतों के? कितनी प्रस्तुतियाँ है मंच पर? लोकगीत कभी घर–घर में गाये जाते थे परन्तु हमने ही इन्हें पुराना कह दिया। गलती हमने की है तो खामियाजा भी तो हम ही भुगतेंगे। रेडियों, दूरदर्शन एवं सरकार ने प्रोत्साहन दिया परन्तु हमने नई पीढ़ी को बोल दिया कि सीखना है तो फिल्मी सीखो। आवश्यकता है इस हीनभावना से बाहर निकलने की कि लोक कलाकारों के साथ भेदभाव होता है या सबसे नीचे पायदान पर होते है लोकगीत। अतः मालिनी जी को कई फिल्मों में भी स्वर देने के प्रस्ताव प्राप्त हुये जैसे – 2015 में आयी फिल्म 'दम लगा के हईशा' के गीत 'सुन्दर सुशील' में इन्होनें अपनी आवाज दी।

इस गीत का संगीत निर्देशन फिल्म जगत के प्रसिद्ध संगीत निर्देशन अनु मलिक जी ने किया था। इसके पूर्व के वर्षो में आई फिल्म एजेन्ट विनोद, इश्क, चार फुटिया छोकरे इत्यादि में भी मालिनी जी ने गायन किया। लोक परम्परा के प्रति उनके योगदान को दृष्टिगत रख कर इन्हें अब तक विभिन्न पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है जैसे – सन् 2003 में सहारा की तरफ से 'अवध सम्मान' इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा 'यश भारती पुरस्कार, 'नारी गौरव' एवं 'कालिदास' सम्मान के अतिरिक्त राष्ट्रीय अलंकरण 'पदमश्री' सन् 2016 में उन्हें प्राप्त हुआ। जो एक कलाकार के लिये अत्यन्त गौरव की बात है। अतः वर्तमान समय में भी मालिनी अवस्थी जी अपनी विधा के प्रति पूर्णतया सक्रिय है एवं इनसे संगीत जगत को अत्यन्त आशा है।

चित्रपट संगीत :

1. लता मंगेश्कर (पार्श्व गायिका) :–

स्वर–साम्राज्ञी लता मंगेश्कर जी का नाम वर्तमान समय में सुरीली आवाज का पर्यायवाची माना जाता है। लता जी का नाम भारतीय फिल्म संगीत के साथ इस सीमा तक जुड़ गया है कि उनके समक्ष आज तक अन्य कोई भी नाम स्थिरता प्राप्त नहीं कर सका है। भारतीय चित्रपट संगीत में जो स्थान लता जी ने अपनी साधना एवं लगन से प्राप्त किया है वह अद्वितीय है। हिन्दी सिने जगत में एक से बढ़कर एक सुरीले एवं भावपूर्ण स्त्री स्वर सुनने को मिले परन्तु इतनी लम्बी अवधि तक स्वर–साम्राज्य की एकछत्र साम्राज्ञी बने रहना लता जी को ही संभव हुआ। उनकी यह उपलब्धि गिनीज बुक आफ रिकाडर्स में भी दर्ज की गई। सुर साम्राज्ञी लता मंगेश्कर जी का जन्म 28 सितम्बर 1929 ई. को मध्य प्रदेश के इन्दौर जिले में हुआ।

इनके पिता का नाम दीनानाथ मंगेशकर था। शास्त्रीय संगीत की शिक्षा लता जी ने अपने पिता द्वारा ही प्राप्त की थी। लता जी के अतिरिक्त उनके चार भाई बहन थे। आशा भौंसले, ऊषा मंगशकर, मीना मंगेशकर तीन बहने एवं हृदयनाथ मंगेश्कर भाई थे। इन सभी ने संगीत के क्षेत्र में अच्छी ख्याति प्राप्त की। परन्तु लता जी सफलता के जिस शीर्ष पर पहुँची उसे कोई स्पर्श न कर सका। लता जी के पिता जी ने इन्दौर छोड़कर गोवा के मंगेशी गाँव में निवास स्थान बनाया। वहाँ की कला–संगीत की उपजाऊ भूमि विशेष सहायक सिद्ध हुई। संगीत वहाँ धार्मिक भावनाओं का एवं समर्पण का प्रतीक माना जाता है, प्रातः काल सोकर उठते समय, घर में खेत में, काम करते समय, अवकाश के समय, गोवानी लोग प्रायः संगीत के सुर–ताल में मग्न रहते है। ऐसे वातावरण में एक गरीब पुजारी परिवार की पुत्री लता मंगेशकर को संगीत विरासत में प्राप्त हुआ। इनके दादा जी भी संगीतज्ञ थे। पिता मास्टर दीनानाथ जी मराठा रंगमंच एवं संगीत के एक अग्रणी कलाकार थे। इनके पिता

प्रसिद्ध गायक सहगल के प्रशंसक थे। लता जी को भी वे सहगल के गीत सुनवाया करते थे। दीनानाथ जी ने जीवन पर्यन्त मराठी रंगमंच के विकास में योगदान दिया। अभिनय एवं संगीत को उन्होने कला साधना के रूप में ही लिया इसे धन अर्जित करने का माध्यम नहीं समझा। यही कारण था कि सन् 1942 में उनके निधन के बाद परिवार आर्थिक संकट से घिर गया एवं चौदह वर्ष की किशोरी लता पर चार छोटे भाई–बहनों के भरण पोषण का दायित्व आ पड़ा। परिवार का खर्च चलाने हेतु लता जी ने मराठी फिल्मों में अभिनय एवं पार्श्व गायन प्रारम्भ किया। तत्कालीन प्रसिद्ध मराठी अभिनेता एवं निर्माता मास्टर बाबूराम विनायक ने लता जी को भरपूर सहयोग दिया। उनके प्रत्येक चित्रपट में लता जी ने गाया एवं अभिनव किया।

कुछ दिनों बाद बाबूराम विनायक जी भी चल बसे एवं लता जी पुनः संघर्ष में आ फँसी, परन्तु अब तक वह परिस्थिति को झेलने में समर्थ हो चुकी थी। उनकी पहली फिल्म पार्श्व गायिका के रूप में आयी 'आपकी सेवा में'। यह फिल्म दत्ता डावजेकर जी के संगीत निर्देशन में सन् 1946 में आयी थी। इस फिल्म में उन्होनं 'पाँव लाँगू कर जोरी रे' गीत गाया। परन्तु इस फिल्म से उनके संघर्ष का अन्त नहीं हुआ अपितु आरम्भ हुआ। उनकी आवाज पतली एवं चीखती हुई घोषित की गई। शशि धर मुखर्जी ने लता जी की आवाज को अस्वीकृत कर दिया, तब विख्यात संगीत निर्देशक हैदर जी ने मुखर्जी से कहा, 'आप गलती पर है। इस आवाज को जरा निखार देकर देखिये, यही कल को गजब ढायेगी।' संगीत निर्देशन नौशाद जी भी यह बात सुन रहे थे। उन्होने इस बात को गम्भीरता से लिया एवं लता जी को बुलावा भेजा। इस प्रकार संघर्ष के आरम्भ में ही राह भी निकल आई। संभवतः लता जी के भाग्य का सूरज चमक रहा था एवं भविष्य की स्वर कोकिला की कला को पहचान लिया गया था। नौशाद जी के संगीत निर्देशन में फिल्म चाँदनी रात' के गीतों के लिये अनुबंध हुआ। रिकार्डिंग के लिये आवाज पतली घोषित की गई परन्तु इससे लता जी निराश नहीं हुई, उन्हे अपनी साधना पर पूर्ण विश्वास था एवं नौशाद जी को उनकी प्रतिभा पर। लता जी ने खूब मेहनत कर रियाज किया एवं स्वर निखरता चला गया।

उसके बाद जो क्रम चला वह कभी रूका नहीं एवं देखते–देखते लता जी का नाम फिल्म जगत के साथ–साथ जनता के एवं संगीत प्रेमियों के हृदय को स्पर्श करता गया। तथा आज के युग में प्रत्येक भारतीय के जुबान पर लता जी का नाम है। परन्तु यहाँ तक पहुँचने के लिये लता जी को कष्ट एवं संघर्ष का लम्बा मार्ग तय करना पड़ा है। कला की साधना में पारिवारिक सुखों का बलिदान संभवतः ही किसी और गायिका ने इस प्रकार किया हो, जैसा कि लता जी ने किया। जिस समय लता जी ने फिल्म जगत में पार्श्व गायिका के रूप में प्रवेश किया उस समय कई पार्श्व–गायिकायें फिल्म जगत में छाई हुई थी। परन्तु धीरे–धीरे लता जी सबको पीछे छोड़ती गई। लता जी ने लगभग सभी संगीतकारों के साथ गीत गाये है। सभी प्रकार की धुनों का लता जी ने अपने स्वर द्वारा एक – एक भाव स्पष्ट कर दिया है। लता जी के हजारों गीत रिकार्ड किये गये। 36 प्रादेशिक भाषाओं एवं विदेशी भाषाओं में वे गीत गा चुकी है। लता मंगेशकर मूलतः धार्मिक प्रवृत्ति की है। अपनी गायन–प्रतिभा को, अपनी प्रत्येक सफलता को वह ईश्वर की देन मानती है एवं अपने हर काम को पूजा –भाव से ग्रहण करती है।

लता जी के अनुसार, 'भगवान तक पहुँचने के लिये संगीत से बढ़कर दूसरा कोई माध्यम नहीं है।' इसलिये जब यह आस्था से जुड़े गीत गाती है तो उनके पैर में चप्पल नहीं होती, चाहे वह लंदन की सर्दी में विदेशी भूमि पर ही क्यों न खड़ी हो। परन्तु धार्मिक गायन में उनके लिये हिन्दु, मुस्लिम, सिख, ईसाई का कोई

भेदभाव नहीं रहता। यह सभी धर्मो की गीत, भजन समान उत्साह से एवं पूरी श्रद्धा से गाती है। उनके विचार में भगवान एक है, पूजा पद्धति चाहे जो भी हो। इन्ही आध्यात्मिक विचारों के कारण ही लता जी सफलता के शीर्ष पर पहुँची है। लता जी के द्वारा गाया गया फिल्म 'मधुमति' के लिये गीत, जिसने उन्हे फिल्म फेयर पुरस्कार प्रदान कराया। इसके बाद 'बीस साल बाद' फिल्म में 'कहीं दीप जले कही दिल' इस गीत पर उन्हे 1962 में पुनः इस पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इसके बाद फिल्म 'खानदान' के एक गीत पर 1966 में तीसरी बार भी उन्हे फिल्म फेयर पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इसके पश्चात् तो दिन–प्रतिदिन बढ़ती उनकी लोकप्रियता के साथ ही उन्हे मिलने वाले पुरस्कारों–सम्मानों की संख्या बढ़ती गई।

1969 ई. में पद्मभूषण पुरस्कार 1989 में दादा साहब फाल्के पुरस्कार, 1997 में महाराष्ट्र भूषण पुरस्कार, 1999 में एन.टी.आर. नेशनल अवार्ड से लता जी को सम्मानित किया गया। लता जी को सर्वोच्च राष्ट्रीय अलंकरण 'सुर साम्राज्ञी' की उपाधि से भी उन्हें सम्मानित किया गया। एवं संगीत नाटक अकादमी की फैलोशिप भी प्रदान की गई। लता मंगेशकर जी 'फिल्म फेयर' लाइफ टाइम अचीवमेन्ट पुरस्कार का भी गौरव प्राप्त कर चुकी है एवं 2001 में 'भारत रत्न' से उन्हें सम्मानित किया गया। सरकार द्वारा लगभग उन्हे हर राष्ट्रीय महत्व के अवसर पर सम्मान के साथ आमंत्रित किया जाता है। एवं वे गाती रही है चाहे 'ऐ मेरे वतन के लोगों जरा आँख में भर लो पानी, जो शहीद हुये हैं उनकी जरा याद करो कुर्बानी' हो या 'सत्यमेव जयते' जैसे राष्ट्रीय आमुख गीत हो।

अतः लता जी अद्वितीय प्रतिभा की धनी महिला कलाकार है। परन्तु आज के दौर में फिल्मी गीत– संगीत से लता जी असंतुष्ट ही नहीं श्रुब्ध भी है। उनका कहना है कि अव्वल दर्जे के संगीतकार अब हमारे बीच रहे भी कहाँ ? संगीत अनुभूति भी जैसे मशीनी बन गयी है। संगीतकार, गायक कोई भी तो संगीत को, गायन को सृजनात्मक रूप में नहीं ले रहा है। हमने तो अच्छा गाने के लिये जीवन खपा दिया, खूब–2 मेहनत करके। अब 'रेडीमेड' धुनों पर गाये जाने वाले गीत बिकाऊ तो हो सकते है, टिकाऊ नहीं। – लता मंगेशकर

संभवतः इसीलिये पिछले कुछ वर्षो से लता जी ने फिल्मों में गाना भी कम कर दिया है। लता जी राज्य सभा की सम्मानित सदस्य भी रही है। अतः सभी कला जगत के प्रेमियों के लिये लता मंगेशकर जी आजीवन प्रेरणास्त्रोत बनी रहेगी।

निष्कर्ष :–

सृष्टि के निर्माण से लेकर मानव सभ्यता के विकास तक सभी में महिलाओं का विशेष योगदान रहा है उसी प्रकार कला के क्षेत्र में भी महिलाओं का विशेष योगदान रहा है। इन सभी कलाओं में से हम यदि संगीत कला को देखे तो हम पायेगें की वास्तव में गीत, वाद्य एवं नृत्य तीनों सांगीतिक अंगों के विकास एवं माधुर्य की स्थापना में नारी की प्ररेणा अविस्मरणीय है। गायन के अन्तर्गत गीत के प्रकारों में श्रृंगार रस के वर्णन में नारी की भावनाओं का प्रदर्शन किया गया है, यद्यपि इन गीत प्रकारों के रचयिता पुरूष ही रहे है। इसी के आधार पर रसास्वाद को 'बह्मानन्द सहोदय' कहा गया है। ब्रह्मानन्द को अनुभव करने वाले ही इसे ब्रह्मानन्द सहोदय कह सकते है इसलिए माधुर्यता (जो भगवती शक्ति ही है) अनिवार्य तत्व के रूप में संगीत, साहित्य आदि समस्त ललित कलाओं में विद्यमान रहती है एवं इसकी प्राप्ति नारी–शक्ति के माध्यम से ही सम्भव है।

अतः इस शोध पत्र में वर्तमान समय में विख्यात गायन के क्षेत्र में सफल महिला कलाकारों का वर्णन

किया गया है तथा उनके व्यक्तित्व के बारे में सम्पूर्ण जानकारी का वर्णन देते हुए उनके द्वारा प्राप्त संगीत के क्षेत्र में उपलब्धियों को इस शोध पत्र के माध्यम से बता कर पत्र की सार्थकता को सिद्ध किया गया है।

संदर्भ सूची :–

1. नारी कलाकार : आशारानी व्होरा, पृ. 79
2. हमारे संगीत रत्न : लाष्मी नारायण गर्ग, पृ. 407
3. ठुमरी एवं महिला कलाकार : डॉ. पूर्णिमा द्विवेदी, पृ. 249
4. ठुमरी एवं महिला कलाकार : डॉ. पूर्णिमा द्विवेदी, पृ. 265
5. स्मारिका पत्रिका, ललित कला अकादमी कानपूर द्वारा जारी।
6. महिला संगीत अंक (जनवरी–फरवरी 1986) पृ. 155
7. हमारे संगीत रत्न : लक्ष्मी नारायण गर्ग, पृ. 564
8. भारत के संगीतकार : लक्ष्मी नारायण गर्ग, पृ. 133

Email: jayameend@gmail.com,

Mob : 9024314398

Email: drpunitasrivastava@gmail.com

Mob: 9352600082

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 3-4
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 61-63

वाग्येकार सादल्लाह मेव के "पंडुन का कड़ा" की आकर्षक परम्परा

रोशनी बानो, पीएच.डी. शोधार्थी, संगीत विभाग (कंठ)
डॉ. रौशन भारती (शोध पर्यवेक्षक), सह–आचार्य,
राजकीय कला कन्या महाविद्यालय कोटा, कोटा विश्वविद्यालय, कोटा राजस्थान।

प्रस्तावना :–

सदियों से महाभारत की अपनी ही एक अलग आकर्षक विविधता रही है 'पंडुन का कड़ा' रचना भी वाग्येकार सादल्लाह का एक ऐसा ही रूपांतरण है। इस रचना में गायन तथा साहित्य दोनों ही महत्वपूर्ण है अर्थात श्रोताओं को कहानी के साथ–साथ गायकी का लुफ्त भी उठाने को मिलता है।

'पंडुन का कड़ा 'रचना मात्र मनोरंजन का साधन नहीं है अपितु यह मेवात संप्रदाय का एक विशेष एवम् अनूठा साहित्य स्त्रोत भी है। इसे मेवात के लोगों के पूर्वजों का यश रूपी गुणगान साहित्य, के रूप में भी जाना जाता है। 'पंडुन का कड़ा' साहित्य रचना महाभारत पर आधारित हैं। इसलिए इसमें महाभारत घटना का उल्लेख है जिसे कहानी स्वरूप एक अलग एवं विचित्र ढंग से वाग्येकार सादल्लाह द्वारा रचा गया है।

गायन और कहानी सुनाने की परंपराओं में कलाकार सर्वप्रथम दोहा सुनाते हैं और फिर मुख्य रूप से धानी गाते हैं अर्थात इन्हीं दोहों को गायक द्वारा गा–बजाकर भी पेश किया जाता है। यह गायन शैली दुहा धानी गायन शैली के नाम से भी प्रचलित है। यह रस प्रधान गायन–साहित्य रचना है इसलिए इन दोहों में रागों का भी समावेश मिलता है। क्योंकि यह युद्ध विवरण आधारित रचना है इसलिए इसमें वीर रस की प्रधानता है यद्यपि इसमें कहीं–कहीं करुण व श्रृंगार रस भी पाया जाता है। मेवात के जोगी एवं मेंव समुदाय के लोग मुख्यता इसका गायन वादन और बखान करते हुए मिलते हैं। इनके अनुसार इसमें 2500 से अधिक दोहों का संकलन है। यूं तो मेवात क्षेत्र का सीमांकन करने वाली कोई अधिकृत सीमा नहीं है फिर भी मोटे तौर पर हरियाणा में फरीदाबाद, नूहू मेवात एवं राजस्थान के अलवर व भरतपुर जिले भी शामिल है। राजस्थान के अलवर तथा जयपुर की सीमा से लगकर विराटनगर (बैराठ नगर) शहर की इस साहित्य में विशेष भूमिका है क्योंकि पांडवों ने अपना एक बरस का अज्ञातवास इसी नगर में बिताया था। अतः बैराठ नगर पांडवों के इतिहास का जीवंत उदाहरण है। इसी तरह हरियाणा राज्य का कुरुक्षेत्र शहर भी इसी श्रंखला में शामिल है क्योंकि यह स्थान महाभारत की युद्ध भूमि थी।

क्योंकि मेवात क्षेत्र हरियाणा एवं राजस्थान से जुड़ा हुआ है। अतः यहां की भाषा में हरियाणवी तथा

राजस्थानी दोनों भाषाओं का प्रभाव देखने को मिलता है। इन दोनों भाषाओं से मिलाजुला एक अपभ्रंश रूप इस साहित्य की भाषा में भी समावेशित है।

जब पहले के समय में 'पंडुन का कड़ा' साहित्य का कथावाचन किया जाता था तो उत्तर भारत की ही कई कथावाचन परंपराओं की तरह लोगों का जमावड़ा हो जाता था। आमतौर पर मेवात में इसका कथावाचन या प्रस्तुति शादी–ब्याह, जन्मोत्सव (छूंचक) इत्यादि अवसरों पर होता था। जहां कथावाचक को उसकी प्रस्तुति से खुश होकर इनाम (पारितोषिक) प्रोत्साहन स्वरूप दिया जाता था। कभी–कभी तो प्रोत्साहन की परंपरा में मेवात के अमीर समुदाय के लोग जमींदार इत्यादि अपनी जागीर में से भूमि का कुछ हिस्सा या सोना–चांदी इत्यादि भी शायर या कथावाचक को प्रोत्साहन स्वरूप भेंट करते थे।

'पंडुन का कड़ा' साहित्य के उल्लेख से संबंधित लिखित सामग्री कहीं भी प्राप्त नहीं हुई है। यह परंपरागत तौर पर पीढ़ी–दर–पीढ़ी मौखिक रूप से ही अब तक चली आ रही है। यह एक अनुमान लगाया जा सकता है कि कवि सादल्लाह जी ने 16वीं शताब्दी के मध्य में पहली बार 'पंडुन का कड़ा' साहित्य को कागज पर उतारा, हालांकि इस साहित्य की पांडुलिपि के कोई ज्ञात रिकॉर्ड स्पष्ट प्राप्त नहीं हुए हैं।

'पंडुन का कड़ा' साहित्य का प्रस्तुतीकरण जोगीनाथ और मेवात समुदाय के मिरासी जाति के लोगों द्वारा किया जाता है ऐसी परंपरा चली आ रही है। किंतु दोनों की गायकी के प्रस्तुतीकरण में दिन–रात का अंतर सामने आता है। जोगी समुदाय के लोग लोक भजनों के समान ही मात्र 3–4 स्वरों के अंतर्गत ही भपंग वादन के साथ इसका कथावाचन करते नजर आते हैं। उन्होंने इसे रिदम प्रदान बनाया हैं जिसमें रागों का संकलन देखने को नहीं मिलता है। वहीं दूसरी ओर मेवात समुदाय में जिसमें से मिरासी जाति के लोग इसे रागों के अंदर गाते बजाते हैं। हालांकि अधिकांश लोगों को रागों का विशेष ज्ञान नहीं होता है वह गाते जरूर है लेकिन उन्हें इसकी जानकारी बिल्कुल नहीं होती हैं कि वह किन–किन रागों का संकलन करते हैं फिर भी कुछ गायक जो रागों की जानकारी रखते हैं वह लोग यमन, बिलावल, खमाज, बिहाग, भूपाली इन 5 रागों के अंग में इस साहित्य सामग्री को गाते बजाते नजर आए हैं।

इस रचना का प्रस्तुतीकरण पूर्णता गायक पर निर्भर है और गायक रसानुकूल रागों का चयन कर अपनी प्रस्तुति देता है। फिर भी जिन लोगों को रागों की समझ भी नहीं होती वह भी अधिकतर यमन राग में अपना प्रस्तुतीकरण करते हुए नजर आते हैं।

चित्र 4. 1985 में संगीत नाटक अकादमी, लखनऊ में गफरूद्दीन जी अपने भाई तैय्यब खान (बाएं), और उनके बेटे शाहरुख खान (बीच में) के साथ पांडून का कड़ा करते हुए (सौजन्य: स्वयंभू फाउंडेशन और गफरूद्दीन मेवाती जोगी)

किंतु अब वर्तमान समय में अधिकांश जोगी समुदाय के लोग अधिकतर प्रस्तुतीकरण करते हुए नजर आते हैं। मेवात में गाने बजाने को बुरा माना जाता है अतः जिन बुजुर्गों को यह विधा आती थी उन्होंने भी नमाज को अपनाने के बाद अपना गाना बजाना ही छोड़ दिया हैं जिस कारण से यह विधा विलुप्त होती गई है फिर भी कुछ लोग हैं जो आज भी प्रचलन में है। वर्तमान समय में अब जोगी

समुदाय के लोग ही इस परंपरा को आगे बढ़ाने में अग्रसर है।

निष्कर्ष :-

यह रोमांचक परंपरा महाभारत के सबसे आकर्षक और वास्तविक स्वरूप में से एक है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों और समुदायों में किस्से, कहानियां तथा कथाओं को कहने एवम् सुनने की परंपरा सदियों से चली आ रही हैं। इसी श्रंखला में महाभारत की भी कहानियों तथा कथाओं को फिर से कहने की परंपराओं में से एक परंपरा 'पंडुन का कड़ा' भी हैं।

मेवात के मेव समुदाय द्वारा 'पंडुन का कड़ा' साहित्य का सुना जाना और आनंद लेने का एक कारण यह भी है कि वह कहीं बाहर से आए हुए मुस्लिम नहीं है। बल्कि बाहरी आक्रमणकारियों द्वारा धर्म परिवर्तन का स्वरूप है। मेवात के मुस्लिम अपने आपको कृष्ण तथा पांडव इत्यादि के वंशज मानते हैं इसका साक्ष्य मेंव समुदाय के लोगों के गोत्र का हिंदू धर्म के गोत्रों से मिलना है। मेवात की मेव जाति के लोग वर्तमान में प्रचलित मीणा जाति का ही परिवर्तित स्वरूप माना जाता है। मेवात की मेव जाति समुदाय के कई लोग अपने आपको पांडवो यानी तंवर वंशी मानते हैं, वह अर्जुन को अपना पूर्वज मानते हैं।

हर राष्ट्र के निर्माण में उसके साहित्यिक इतिहास का महत्वपूर्ण योगदान होता है। राष्ट्र की नींव में दबे छोटे से छोटे एवं बड़े से बड़े किस्से, कहानियां, कविताएं इत्यादि देश की संस्कृति के निर्माण में अपना योगदान देते हैं। इसी पहल में मेवात संस्कृति ने भी अपनी भूमिका निभाई है। बस अफसोस यह है कि इससे जुड़ी साहित्यिक सामग्री उपलब्ध नहीं हो पाई, क्योंकि यह साहित्य सामग्री आज भी मौखिक तौर पर भी उपलब्ध है। इस कारण यह वर्तमान में प्रायः विलुप्त होती जा रही है। भावी पीढ़ी को भी इसका लाभ मिल सके, उन्हें अपने समाज का इतिहास पता हो यह सरकार के साथ–साथ हमारा भी नैतिक कर्तव्य है। इसके लिए हमें निश्चित करना होगा कि कला व साहित्य को विस्तृत एवम् समृद्ध क्षेत्र, अवसर तथा मंच उपलब्ध हो पाए ताकि इस विधा से जुड़े कलाकार, शायर, कथावचक इत्यादि के प्रस्तुतिकरण के माध्यम से यह विधा नवीन तथा अनवरत बनी रहे, यह सब देखना सरकार के साथ–साथ हमारा भी मौलिक कर्तव्य है।

संदर्भित स्त्रोत :-

1. लेखक अनिल जोशी, मेवात का उद्भव – विकास, अलवर कैलाश प्रकाशन।
2. लेखक मुंशी बालोत जी, मेवात की महाभारत, अलवर रामगढ़ रवि प्रकाशन।
3. लेखक हाशिम अमीर अली, मेवात आफ मेवात, 1970, आई. बी. एच. प्रकाशन।
4. ऑनलाइन स्त्रोत, गूगल डाट कॉम, विकिपीडिया।
5. साक्षात्कार 4/2/23 लोक कलाकार रसीद खां, गांव निमली, तिजारा, अलवर।
6. साक्षात्कार 5/2/23 लोक कलाकार भपंग वादक यूसुफ खान जोगी, मुंगस्का, अलवर।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 3-4
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 64-68

'ਪਰੀ ਲੋਕ ਦੀ ਸੈਰ ਕਰਾਵਾਂ' ਪੁਸਤਕ ਵਿਚ ਮਾਨਵੀ ਸਰੋਕਾਰ

-ਡਾ. ਪਰਮਜੀਤ ਕੌਰ 'ਪਾਹੁਲ'

ਐਸੋਸੀਏਟ ਪ੍ਰੋਫੈਸਰ, ਸ੍ਰੀ ਗੁਰੂ ਨਾਨਕ ਦੇਵ ਖ਼ਾਲਸਾ ਕਾਲਜ, ਦਿੱਲੀ ਯੂਨੀਵਰਸਿਟੀ

ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਅਤੇ ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਦੇ ਜਗਤ ਵਿਚ ਡਾ. ਹਰਬੰਸ ਸਿੰਘ ਚਾਵਲਾ ਖੋਜੀ ਵਿਦਵਾਨ ਤੇ ਉੱਘੀ ਸ਼ਖ਼ਸੀਅਤ ਦੇ ਮਾਲਕ ਸਨ। ਜਿੱਥੇ ਉਹਨਾਂ ਸਿੱਖ ਇਤਿਹਾਸ ਨਾਲ ਸਬੰਧਤ ਦਰਜਨ ਤੋਂ ਵੱਧ ਪੁਸਤਕਾਂ ਲਿਖਕੇ ਮਹਾਨ ਕਾਰਜ ਕੀਤਾ ਹੈ, ਉੱਥੇ ਉਹ ਬਾਲ ਸਾਹਿਤ ਦੀ ਮਹਤਤਾ ਨੂੰ ਸਮਝਦਿਆਂ ਪਿਛਲੇ ਢਾਈ ਦਹਾਕਿਆਂ ਤੋਂ ਭਾਰਤ ਅਤੇ ਦੁਨੀਆ ਦੇ ਵੱਖ – ਵੱਖ ਦੇਸ਼ਾਂ ਦੀਆਂ ਬਾਲ ਲੋਕ ਕਹਾਣੀਆਂ ਨੂੰ ਇਕੱਤਰ ਕਰ ਆਪਣੀ ਨਿਵੇਕਲੀ ਤੇ ਸਰਲ ਭਾਸ਼ਾ ਸ਼ੈਲੀ ਰਾਹੀਂ ਪੁਨਰ ਸਿਰਜਿਤ ਕਰ ਪੰਜਾਬੀ ਬਾਲ ਲੋਕ ਸਾਹਿਤ ਦੀ ਫੁਲਵਾੜੀ ਵਿਚ ਮੁੱਲਵਾਨ ਤੇ ਨਿਗਰ ਵਾਧਾ ਕੀਤਾ।

ਭਾਵੇਂ 'ਪਰੀ ਲੋਕ ਦੀ ਸੈਰ ਕਰਾਵਾਂ' ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵੀ ਉਨ੍ਹਾਂ ਕਿਸੇ ਨਾ ਕਿਸੇ ਕਹਾਣੀ ਸੰਗ੍ਰਹਿ ਵਿਚ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਤ ਕੀਤੀਆਂ ਹਨ, ਪਰ ਬਾਲ ਮਨ ਦੀ ਮਾਨਸਿਕਤਾ ਨੂੰ ਧਿਆਨ ਵਿਚ ਰਖਦਿਆਂ ਇਸ ਪੁਸਤਕ ਦੀ ਖੂਬਸੂਰਤ ਦਿੱਖ ਅਤੇ ਅਕਾਰ ਪੱਖੋਂ ਛੋਟੀਆਂ, ਗਿਣਤੀ ਵਜੋਂ ਕੇਵਲ ਬਾਰਾਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਨੂੰ ਸੰਗ੍ਰਹਿਤ ਕਰਨਾ ਜਿੱਥੇ ਇਸ ਡਿਜੀਟਲ ਯੁਗ ਦੀ ਮੰਗ ਵੀ ਹੈ, ਉਥੇ ਇਨ੍ਹਾਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਿੱਚ ਦੇਸ਼ ਕੌਮ ਦੀ ਖਾਤਰ ਕੁਝ ਚੰਗਾ ਕੰਮ ਕਰਨ ਲਈ ਪ੍ਰੇਰਣਾ ਵੀ ਦਿਖਾਈ ਦਿੰਦੀ ਹੈ ਅਤੇ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਦੇਸ਼ ਅਤੇ ਦੂਸਰੇ ਦੇਸ਼ਾਂ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਰਾਹੀਂ ਚੰਗਾ ਜੀਵਨ ਜੀਣ ਲਈ ਇਕ ਸੁਨੇਹਾ ਵੀ ਹੈ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਰਾਹੀਂ ਲੇਖਕ ਪਰੀ ਲੋਕ ਦੀ ਸੁਪਨ-ਸੰਸਾਰ ਯਾਤਰਾ ਲਈ ਪਾਠਕ ਜਾਂ ਸਰੋਤੇ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਨਾਲ ਤੋਰ ਲੈਂਦਾ ਹੈ। ਜਿਥੇ ਫੁਲਾਂ ਤੇ ਫਲਾਂ ਨਾਲ ਭਰੇ ਰੁੱਖ ਦਿਖਾਈ ਦਿੰਦੇ ਹਨ, ਜਿੱਥੇ ਪੰਛੀਆਂ ਦੀ ਚਹਿਚਹਾਟ ਹੈ। ਹਰ ਪਾਸੇ ਹਰਿਆਵਲ ਹੈ, ਸਮੁੰਦਰ ਦੀਆਂ ਲਹਿਰਾਂ ਤੇ ਝਰਨਿਆਂ ਦਾ ਕਲ ਕਲ ਕਰਦਾ ਪਾਣੀ ਹੈ, ਪਹਾੜ ਦੀ ਚੋਟੀ ਤੋਂ ਡਿੱਗਦਾ ਸੀਤਲ ਜਲ ਵਾਤਾਵਰਣ ਵਿਚ ਇਕ ਸੰਗੀਤ ਪੈਦਾ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਜਿਥੇ ਇਸ ਧਰਤੀ ਤੇ ਮਨੁੱਖ ਨੇ ਆਪਣੇ ਹਾਲੇ ਕਦਮ ਨਹੀਂ ਰਖੇ ਉਥੇ ਅਜ਼ਾਦੀ ਨਾਲ ਉਡਦੀਆਂ ਪਰੀਆਂ ਬਾਗਾਂ ਦੀ ਸੈਰ ਕਰਦੀਆਂ ਹਨ। ਬਾਲ ਮਨ ਦੇ ਚਿਤਰਪਟ ਤੇ ਅਜਿਹੇ ਕਲਪਨਾ ਦੇ ਰਹੱਸਮਈ ਸੰਸਾਰ ਦਾ ਜਾਦੂ ਛਾ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਉਹ ਵੀ ਉਸ ਸੰਸਾਰ ਦਾ ਹਿੱਸਾ ਬਣਨਾ ਲੋਚਦਾ ਹੈ। ਜਿਥੇ ਉਸ ਨੂੰ ਪਰੀ ਰੂਪੀ ਔਰਤ ਦਾ ਕਲਿਆਣਕਾਰੀ ਰੂਪ ਦੋਸਤ, ਸਹਿਜਾਦੀ, ਪਤਨੀ, ਮਹਿਬੂਬਾ ਅਤੇ ਰਾਣੀ ਪਰੀ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਮਾਂ ਦਿਖਾਈ ਦਿੰਦੀ ਹੈ।

ਲੇਖਕ ਇਨ੍ਹਾਂ ਲੋਕ ਕਹਾਣੀਆਂ ਰਾਹੀਂ ਔਰਤ ਦੇ ਇਸੇ ਰੂਪ ਨੂੰ ਚਿਹਨਿਤ ਕਰ ਮਾਨਵੀ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਨੂੰ ਅਗਰਭੂਮਿਤ ਕਰਨ ਦੀ ਵਕਾਲਤ ਕਰਦਾ ਹੈ।

ਇਸ ਪੁਸਤਕ ਦੀ ਪਹਿਲੀ ਕਹਾਣੀ 'ਚਿੱਟੀ ਪਰੀ ਤੇ ਗੁਲਾਬੀ ਪਰੀ' ਕਹਾਣੀ ਵਿਚ ਦੋ ਵਿਰੋਧੀ ਸੁਭਾਅ ਦੀਆਂ ਪਰੀਆਂ ਦੇ ਬਿਰਤਾਂਤ ਰਾਹੀਂ ਚਿੱਟੀ ਪਰੀ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਸੁੰਦਰਤਾ ਤੇ ਚਤੁਰਾਈ ਤੇ ਮਾਣ ਹੰਕਾਰ ਹੈ, ਜਦ ਕਿ ਗੁਲਾਬੀ ਪਰੀ ਸਰਬ ਗੁਣ ਸੰਪੰਨ ਹੋਣ ਤੇ ਵੀ ਆਪਣੇ ਆਪ ਤੇ ਮਾਣ ਨਹੀਂ ਕਰਦੀ। ਰਾਣੀ ਪਰੀ ਦੁਆਰਾ ਹਰ ਸਾਲ ਆਪਣੇ ਜਨਮ ਦਿਨ ਦੀ ਖੁਸ਼ੀ ਦੇ ਜਸਨਾ ਮੌਕੇ ਕਰਵਾਏ ਜਾਂਦੇ ਨਾਚ ਗਾਣਿਆਂ ਤੇ ਖੇਡ ਮੁਕਾਬਲਿਆਂ ਵਿਚ ਗੁਲਾਬੀ ਪਰੀ ਦੀ ਜਿੱਤ ਨਾਲ ਚਿੱਟੀ ਪਰੀ ਈਰਖਾ ਵਸ ਉਸ ਨਾਲ

ਮਿਤਰਤਾ ਤੋੜ ਲੈਂਦੀ ਹੈ। ਪਰ ਉਪਕਾਰੀ ਸੁਭਾਅ ਦੀ ਗੁਲਾਬੀ ਪਰੀ ਆਪਣੀ ਦੋਸਤ ਨੂੰ ਮੁਸੀਬਤ ਵਿਚ ਫਸਿਆ ਦੇਖ ਕੇ ਸਾਧੂ ਦੁਆਰਾ ਦਿੱਤੇ ਸਰਾਪ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਸਿਰ ਲੈਣ ਲਈ ਤਿਆਰ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਪਰ ਸਾਧੂ ਉਸ ਦੇ ਨੇਕ ਤੇ ਰਹਿਮ ਦਿਲ ਸੁਭਾਅ ਦੀ ਕਦਰ ਕਰਦਾ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਮੇਰਾ ਫਰਜ ਤਾਂ ਬੁਰਾਈ ਨੂੰ ਖਤਮ ਕਰਨਾ ਹੈ ਚੰਗਿਆਈ ਨੂੰ ਨਹੀਂ। ਉਹ ਗੁਲਾਬੀ ਪਰੀ ਦੇ ਸਿਰ ਤੇ ਹੱਥ ਰੱਖ ਕੇ ਆਸੀਰਵਾਦ ਦਿੰਦਾ ਦੋਨਾਂ ਨੂੰ ਪਰੀ ਲੋਕ ਵਿਚ ਵਾਪਸ ਪਰਤਣ ਤੇ ਖੁਸ਼ੀ ਖੁਸ਼ੀ ਰਹਿਣ ਲਈ ਕਹਿੰਦਾ ਹੈ।

ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ 'ਚਿੱਟੇ ਪਰਾਂ ਵਾਲੀ ਨੰਨ੍ਹੀ ਪਰੀ' ਲੋਕ ਕਹਾਣੀ ਵਿਚ ਭਾਰਤ ਦੇ ਜਗੀਰਦਾਰੀ ਪ੍ਰਬੰਧ ਵੱਲੋਂ ਉੱਤਰ ਪ੍ਰਦੇਸ਼ ਦੇ ਜਾਲਮ ਜ਼ਿਮੀਂਦਾਰ ਨੂੰ ਸਬਕ ਸਿਖਾਉਣ ਲਈ ਨੰਨ੍ਹੀ [1]ਪਰੀ ਸਾਧੂ ਦੇ ਭੇਸ ਵਿਚ ਉਥੋਂ ਦੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਜਾਦੂਈ ਸ਼ਕਤੀਆਂ ਨਾਲ ਖੁਸਹਾਲ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਦੂਰਗਾ ਵਰਗੀ ਅਨਾਥ ਬੱਚੀ ਦਾ ਸਹਾਰਾ ਬਣਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਕਹਾਣੀ ਦੇ ਕਥਾ ਸਾਰ ਤੋਂ ਇਹ ਸਿੱਧ ਹੁੰਦਾ ਹੈ ਕਿ ਜਦੋਂ ਵੀ ਧਰਤੀ ਤੇ ਜੁਲਮ ਦੀ ਅਤਿ ਹੁੰਦੀ ਹੈ, ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਜਾਲਮ ਤੋਂ ਵੱਧ ਤਾਕਤਵਰ ਸ਼ਕਤੀਆਂ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਕਿਸੇ ਪਰਉਪਕਾਰੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਧਰਤੀ ਤੇ ਜਰੂਰ ਭੇਜਦਾ ਹੈ।

ਇਕ ਹੋਰ ਕਹਾਣੀ 'ਕਾਲੀ ਪਰੀ' ਦੇ ਸੰਦੇਸ਼ ਰਾਹੀਂ ਲੇਖਕ ਧਰਤੀ ਤੇ ਅਕਾਸ਼ ਵਿਚਲੀ ਉਸ ਸੁੰਦਰ ਨਗਰੀ ਦੀ ਗਾਥਾ ਬਿਆਨ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਜਿਸ ਨੂੰ ਲੋਕ ਪਰੀਆਂ ਦੀ ਨਗਰੀ ਨਾਲ ਜਾਣਦੇ ਸਨ। ਜਿਥੇ ਤਰ੍ਹਾਂ-ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਰੰਗਾਂ ਵਾਲੀਆਂ ਪਰੀਆਂ ਬੜੇ ਪਿਆਰ ਤੇ ਮੁਹਬਤ ਨਾਲ ਸੁਖ ਸ਼ਾਂਤੀ ਵਿਚ ਰਹਿੰਦੀਆਂ ਸਨ। ਪਰ ਅਚਾਨਕ ਨੀਲੀ ਪਰੀ ਦੇ ਘਰ ਕਾਲੇ ਰੰਗ ਦਾ ਬੱਚਾ ਪੈਦਾ ਹੁੰਦਾ ਹੈ, ਕਾਲਾ ਰੰਗ ਬਦ ਸਗਨੀ ਦਾ ਸੂਚਕ ਹੈ। ਨਤੀਜਾ ਕੋਈ ਵੀ ਉਸ ਬੱਚੇ ਨਾਲ ਨਹੀਂ ਖੇਡਦਾ, ਬੱਚਾ ਇਕੱਲੇਪਨ ਦਾ ਸ਼ਿਕਾਰ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਇਹ ਦੇਖ ਉਸ ਦੀ ਮਾਂ ਤੇ ਬੱਚਾ ਉਦਾਸ ਰਹਿਣ ਲੱਗਦੇ ਹਨ। ਜਿਸ ਦਾ ਅਸਰ ਸਾਰੀ ਨਗਰੀ ਤੇ ਪੈਂਦਾ ਹੈ। ਹੌਲੀ ਹੌਲੀ ਕਰਕੇ ਉਸ ਨਗਰੀ ਦੇ ਫਲ-ਫੁੱਲ ਸੁਕ ਜਾਂਦੇ ਹਨ, ਪੰਛੀਆਂ ਦੀ ਚਹਿਚਹਾਟ ਖਤਮ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਭਾਵ ਧਰਤੀ ਦਾ ਸਵਰਗ ਕਹੀ ਜਾਂਦੀ ਨਗਰੀ ਵੀਰਾਨ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਕੁਦਰਤ ਦੀ ਰਾਣੀ ਪਰੀਆਂ ਦੀ ਰਾਣੀ ਨੂੰ ਫਰਿਆਦ ਕਰਦੀ ਹੈ, ਤਾਂ ਸਾਰੀ ਵਿਥਿਆ ਸੁਨਣ ਤੋਂ ਬਾਅਦ, ਉਹ ਇਹ ਕਹਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਜਰੂਰ ਤੁਸੀ ਕਿਸੇ ਮਾਸੂਮ ਬੱਚੇ ਦਾ ਦਿਲ ਦੁਖਾਇਆ ਹੋਵੇਗਾ। ਇਸ ਕਹਾਣੀ ਰਾਹੀਂ ਪ੍ਰਤੀਕ ਰੂਪ ਵਿਚ ਇਸ ਗੱਲ ਦਾ ਸੰਚਾਰ ਹੋ ਰਿਹਾ ਹੈ ਕਿ ਸਾਨੂੰ ਰੰਗ, ਭੇਦ, ਨਸਲ, ਜਾਤੀ ਕਰਕੇ ਕਿਸੇ ਮਨੁੱਖ ਨਾਲ ਕੋਈ ਵਿਤਕਰਾ ਨਹੀਂ ਕਰਨਾ ਚਾਹੀਦਾ ਕਿਉਂਕਿ ਕੁਦਰਤ ਦੀ ਸਾਰੀ ਕਾਇਨਾਤ ਉਸ ਇਕ ਪ੍ਰਭੂ ਪਿਤਾ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦਾ ਪਸਾਰਾ ਹੈ। ਗੁਰਬਾਣੀ ਵੀ 'ਏਕ ਪਿਤਾ ਏਕਸ ਕੇ ਹਮ ਬਾਰਕ'[1] ਦਾ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੰਦੀ ਹੈ।

ਇਸ ਤਰ੍ਹਾਂ ਇਕ ਹੋਰ ਪਰੀ ਕਥਾ ਨੂੰ ਬਿਆਨ ਕਰਦਾ ਲੇਖਕ ਅੰਡੇਮਾਨ-ਨਿਕੋਬਾਰ ਦੀ ਰਾਜਧਾਨੀ ਪੋਰਟ ਬਲੇਅਰ ਦੇ ਹੈਲਵਲੋਕ ਟਾਪੂ ਵਿਚ ਲੈ ਜਾਂਦਾ ਹੈ ਜਿਸ ਨੂੰ ਪਰੀਆਂ ਦੇ ਟਾਪੂ ਨਾਲ ਵੀ ਜਾਣਿਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।

ਇਸ ਵਿਚ ਇਕ ਅਜਿਹੇ ਸ਼ਹਿਜਾਦੇ ਦੀ ਕਹਾਣੀ ਹੈ ਜਿਸਨੂੰ ਨਵੇਂ ਨਵੇਂ ਦੇਸ਼ਾਂ ਦੀ ਸੈਰ ਕਰਨ ਦਾ ਸ਼ੌਕ ਸੀ, ਕਈ ਦੇਸ਼ਾਂ ਦੀ ਸੈਰ ਕਰਨ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਉਹ ਸਮੁੰਦਰ ਦੇ ਇਸ ਟਾਪੂ ਵੱਲ ਵਧਦਾ ਹੈ ਕਿ ਅਚਾਨਕ ਸਮੁੰਦਰ ਵਿਚ ਤੂਫਾਨ ਆ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਨਾਲ ਉਸ ਦੇ ਨਾਲ ਆਏ ਉਸ ਦੇ ਨੌਕਰ ਚਾਕਰ ਸਾਰਾ ਸਾਜੋ ਸਮਾਨ ਸਮੁੰਦਰ ਵਿਚ ਡੁਬ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਅਤੇ ਸ਼ਹਿਜ਼ਾਦਾ ਪਾਣੀ ਦੇ

[1] ਗੁਰੂ ਗ੍ਰੰਥ ਸਾਹਿਬ ਅੰਗ 611

ਵਹਾਅ ਨਾਲ ਬਹੋਸ਼ੀ ਦੀ ਹਾਲਤ ਵਿਚ ਪਰੀਆਂ ਦੇ ਟਾਪੂ ਪਹੁੰਚ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਪਰੀ ਸ਼ਹਿਜਾਦੀ ਉਸ ਨੂੰ ਜ਼ਖ਼ਮੀ ਹਾਲਤ ਵਿਚ ਦੇਖ ਕੇ ਆਪਣੇ ਮਹਿਲਾਂ ਵਿਚ ਲਿਜਾ ਕੇ ਉਸ ਦਾ ਇਲਾਜ ਕਰਦੀ ਹੈ। ਉਸ ਨੂੰ ਨਵਾਂ ਜੀਵਨ ਦਿੰਦੀ ਹੈ, ਇਸੇ ਦੌਰਾਨ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਆਪਸ ਵਿਚ ਪਿਆਰ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ। ਕਈ ਮਹੀਨੇ ਬੀਤ ਜਾਣ ਤੇ ਸ਼ਹਿਜ਼ਾਦਾ ਆਪਣੇ ਮਾਂ ਬਾਪ ਭੈਣ ਭਰਾਵਾਂ ਨੂੰ ਮਿਲਣਾ ਚਾਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਅਤੇ ਛੇਤੀ ਹੀ ਵਾਪਸ ਆਉਣ ਦਾ ਵਾਅਦਾ ਕਰਦਾ ਹੈ। ਪਿਆਰ ਵਿਚ ਬੇਵਿਸ਼ਵਾਸੀ ਦੀ ਕੋਈ ਥਾਂ ਨਹੀਂ ਹੁੰਦੀ। ਪਰ ਸ਼ਹਿਜ਼ਾਦਾ ਪਰੀ ਨੂੰ ਧੋਖਾ ਦੇ ਕੇ ਉਸ ਦੇ ਖੰਭ ਮੰਗਵੇਂ ਲੈ ਕੇ ਆਪਣੇ ਦੇਸ਼ ਪਰਤ ਜਾਂਦਾ ਹੈ, ਕਿ ਉਹ ਆਪਣੇ ਵਿਆਹ ਲਈ ਮਾਂ ਬਾਪ ਦੀ ਇਜ਼ਾਜਤ ਲੈਣ ਚਲਿਆ ਹੈ। ਪਰ ਉਹ ਕਦੇ ਵੀ ਵਾਪਸ ਪਰਤ ਕੇ ਨਹੀਂ ਆਉਂਦਾ। ਬੇਈਮਾਨ ਤੇ ਧੋਖੇਬਾਜ਼ ਲੋਕ ਅੱਜ ਵੀ ਭੋਲੇ-ਭਾਲੇ ਲੋਕਾਂ ਨਾਲ ਧੋਖਾ ਕਰਦੇ ਆ ਰਹੇ ਹਨ। ਪਰੀ ਸਹਿਜ਼ਾਦੀ ਵਰਗੀਆਂ ਮਾਸੂਮ ਕੁੜੀਆਂ ਪ੍ਰਦੇਸੀ ਪਤੀਆਂ ਦਾ ਸਾਰੀ ਉਮਰ ਇੰਤਜਾਰ ਕਰਦੀਆਂ ਪੇਕਿਆਂ ਦੇ ਘਰ ਸਮਾਜ ਦੇ ਤਾਹਨੇ-ਮੇਹਣੇ ਸਹਿਣ ਕਰਦੀਆਂ ਉਦਾਸ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਜੀਉਣ ਲਈ ਮਜਬੂਰ ਹਨ। ਉਧਰ ਪਤੀ ਕਈ-ਕਈ ਵਿਆਹ ਕਰਕੇ ਧੋਖੇ ਧੜੀਆਂ ਨਾਲ ਵਿਦੇਸ਼ ਵਿਚ ਲੈ ਕੇ ਜਾਣ ਦੇ ਲਾਲਚ ਦੇ ਕੇ ਨਿੱਤ ਨਵੀਆਂ ਜਿੰਦਗੀਆਂ ਬਰਬਾਦ ਕਰਦੇ ਹਨ।

ਪਰੀ ਲੋਕ ਕਥਾਵਾਂ ਬਾਰੇ ਆਮ ਧਾਰਨਾ ਹੈ ਕਿ ਉਹ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਮੁਸੀਬਤ ਵਿਚੋਂ ਕਢਣ ਲਈ ਦੁਸਟਾਂ ਦਾ ਨਾਸ਼ ਕਰਨ ਵਾਲੀਆਂ ਪਰਉਪਕਾਰੀ ਸੁਭਾਅ ਦੀਆਂ ਆਦਰਸ਼ ਪਾਤਰ ਹੁੰਦੀਆਂ ਹਨ। ਪਰ ਰੂਸੀ ਲੋਕ ਕਹਾਣੀ ਵਿਚ 'ਬਰਫ ਦੇ ਪਿੰਡ ਵਾਲੀ ਪਰੀ' ਇਕ ਜਾਲਮ ਤੇ ਦੁਸ਼ਟ ਰਾਖ਼ਸਸ ਬਿਰਤੀ ਵਾਲੀ ਪਰੀ ਹੈ। ਜੋ ਵੀ ਉਸ ਦੀ ਨਗਰੀ ਵਿਚੋਂ ਲੰਘਦਾ ਪਸੂ ਪੰਛੀ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਬਰਫ ਦਾ ਬੁਤ ਬਣਾ ਦਿੰਦੀ ਹੈ। ਲੋਕ ਉਸ ਦੇ ਜੁਲਮ ਤੋਂ ਤੰਗ ਆ ਕੇ ਚੰਗੀ ਪਰੀ ਅੱਗੇ ਫਰਿਆਦ ਕਰਦੇ ਹਨ, ਜੋ ਆਪਣੀ ਜੁਗਤੀ ਰਾਹੀਂ ਉਸ ਦੇ ਜ਼ੁਲਮ ਦੇ ਸਾਮਰਾਜਿਆਂ ਨੂੰ ਖਤਮ ਕਰਕੇ ਲੋਕਾਂ ਨੂੰ ਉਸ ਦੀ ਕੈਦ ਵਿਚੋਂ ਆਜ਼ਾਦ ਕਰਵਾਉਂਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਕਹਾਣੀ ਰਾਹੀਂ ਇਹ ਸੰਦੇਸ਼ ਦਿੱਤਾ ਜਾ ਰਿਹਾ ਹੈ ਕਿ ਹਰ ਸਮਾਜ ਵਿਚ ਚੰਗੇ ਮਾੜੇ ਸਭ ਤਰ੍ਹਾਂ ਦੇ ਲੋਕ ਹੁੰਦੇ ਹਨ। ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਬੁੱਧ ਵਿਵੇਕ ਰਾਹੀਂ ਚੰਗੇ ਬੁਰੇ ਲੋਕਾਂ ਦੀ ਪਹਿਚਾਣ ਕਰਨ ਦੀ ਸੋਝੀ ਹੋਣੀ ਚਾਹੀਦੀ ਹੈ। ਲੋਕ ਜਨ ਕਲਿਆਣਕਾਰੀ ਪ੍ਰਵਿਰਤੀ ਰਾਹੀਂ ਮਨੁੱਖ ਨੂੰ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਪਸੂ ਪੰਛੀਆਂ ਤੇ ਜਾਨਵਰਾਂ ਦੀ ਸਹਿਹੋਂਦ ਨੂੰ ਸਵੀਕਾਰ ਕਰਕੇ ਜੀਵਨ ਜੀਉਣਾ ਚਾਹੀਦਾ ਹੈ।

'ਜਲਪਰੀ' ਲੋਕ ਕਹਾਣੀ ਰਾਹੀਂ ਇਹ ਸੰਦੇਸ਼ ਦੇਣ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਕੀਤੀ ਗਈ ਹੈ ਕਿ ਬੰਦੇ ਨੂੰ ਆਪਣੇ ਘਰ ਦੇ ਭੇਦ ਕਦੇ ਬਾਹਰ ਨਹੀਂ ਦੱਸਣੇ ਚਾਹੀਦੇ, ਸ਼ਰਾਬ ਜਾਂ ਨਸ਼ੇ ਦੀ ਹਾਲਤ ਵਿਚ ਜੋ ਲੋਕ ਅਪਣੇ ਘਰ ਦੇ ਭੇਦ ਖੋਲ ਦਿੰਦੇ ਹਨ। ਗਰੀਬ ਮਛਿਆਰੇ ਦੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਵਿਚ ਜਲਪਰੀ ਰਾਹੀਂ ਖੁਸ਼ਹਾਲੀ ਆਉਣ ਤੇ ਬਾਕੀ ਸਾਥੀਆਂ ਦਾ ਉਸ ਨੂੰ ਈਰਖਾ ਵਸ ਬਰਬਾਦ ਕਰਨਾ, ਇਸ ਨਸ਼ੇ ਦੀ ਭੈੜੀ ਵਾਦੀ ਕਾਰਣ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਜਿਸ ਨਾਲ ਉਸਦਾ ਹੱਸਦਾ ਵਸਦਾ ਪਰਿਵਾਰ ਵੀ ਤਬਾਹ ਹੋ ਜਾਂਦਾ ਹੈ।

ਚੀਨ ਦੇਸ਼ ਨਾਲ ਸਬੰਧਤ ਇਕ ਹੋਰ ਲੋਕ ਕਹਾਣੀ 'ਤਸਵੀਰ ਚੋਂ ਨਿਕਲੀ ਪਰੀ' ਇਕ ਗਰੀਬ ਚਰਵਾਹੇ ਹੂ-ਮਿਨ ਦੀ ਜਿੰਦਗੀ ਨਾਲ ਸਬੰਧਤ ਹੈ ਜੋ ਗਰੀਬੀ ਅਤੇ ਅਨਾਥ ਕਾਰਣ ਘਰ ਗ੍ਰਹਿਸਥੀ ਦੇ ਸੁਖ ਤੋਂ ਵਾਂਝਾ ਰਹਿ ਇਕੱਲ ਭੋਗਣ ਲਈ ਮਜ਼ਬੂਰ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਉਹ ਸੋਚਦਾ ਜੇ ਕਰ ਉਸ ਕੋਲ ਵੀ ਜੀਵਨ ਦੀਆ ਮੁੱਢਲੀਆਂ ਲੋੜਾਂ ਪੂਰੀਆਂ ਕਰਨ ਜੋਗੇ ਪੈਸੇ ਹੁੰਦੇ ਤਾਂ ਉਸ ਦਾ ਵੀ ਵਿਆਹ ਹੋ ਜਾਂਦਾ, ਉਸ ਦੇ ਬੀਵੀ ਬੱਚੇ ਤੇ ਪਰਿਵਾਰ ਹੁੰਦਾ। ਇਹ ਸੋਚ ਕੇ ਉਹ ਉਦਾਸ ਰਹਿਣ ਲਗ ਪਿਆ। ਪਰ ਇਕ ਦਿਨ ਮੇਲੇ ਵਿਚ ਵਰਿਆਂ ਦੇ ਜੋੜੇ ਪੈਸਿਆਂ ਨਾਲ ਪਰੀ ਸ਼ਹਿਜ਼ਾਦੀ ਦੀ ਸੁੰਦਰ ਤਸਵੀਰ ਖਰੀਦ ਲਿਆਉਂਦਾ ਹੈ। ਹੁਣ ਤਸਵੀਰ ਹੀ ਉਸ ਦੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦਾ ਸਹਾਰਾ ਹੈ, ਉਹ ਆਪਣੇ ਖਾਣ ਤੋਂ ਪਹਿਲਾਂ ਦੁੱਧ ਚੌਲਾਂ ਦਾ ਕਟੋਰਾ ਤਸਵੀਰ ਅੱਗੇ

ਰੱਖ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਹੁਣ ਤਸਵੀਰ ਵਾਲੀ ਪਰੀ ਉਸ ਦੀ ਅਸਲ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਵਿਚ ਆ ਕੇ ਉਸ ਦੇ ਘਰੋਂ ਜਾਣ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਸਾਰੇ ਘਰ ਦੇ ਕੰਮ ਕਰ ਦਿੰਦੀ ਹੈ। ਇਸ ਭੇਦ ਨੂੰ ਜਾਨਣ ਲਈ ਉਹ ਘਰ ਦੇ ਬਾਹਰ ਛੁਪ ਕੇ ਦੇਖਦਾ ਹੈ ਤਾਂ ਬਹੁਤ ਹੈਰਾਨ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਤਸਵੀਰ ਵਿਚੋਂ ਨਿਕਲ ਕੇ ਪਰੀ, ਘਰ ਦੇ ਸਾਰੇ ਕੰਮ ਕਰਦੀ ਹੈ, ਉਹ ਚੁੱਪ ਚੁਪੀਤੇ ਉਸ ਤਸਵੀਰ ਦੇ ਕਪੜੇ ਨੂੰ ਛੁਪਾ ਦਿੰਦਾ ਹੈ। ਅਤੇ ਉਸ ਪਰੀ ਔਰਤ ਨਾਲ ਵਿਆਹ ਕਰਵਾ ਕੇ ਸੁੱਖ ਦੀ ਜਿੰਦਗੀ ਬਸਰ ਕਰਦਾ ਹੈ, ਉਸ ਦੇ ਘਰ ਧੀਆਂ ਪੁੱਤਰਾਂ ਨਾਲ ਰੋਣਕਾਂ ਲਗ ਜਾਂਦੀਆਂ ਹਨ। ਪਰ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਦਾ ਨੇਮ ਹੈ ਜੋ ਉਪਜਿਆ ਉਸ ਨੇ ਕਦੇ ਨਾ ਕਦੇ ਬਿਨਸਣਾ ਹੀ ਹੈ। ਪਰੀ ਇਕ ਦਿਨ ਉਸਦੀ ਹਸਦੀ ਵਸਦੀ ਜਿੰਦਗੀ ਤੋਂ ਅਲੋਪ ਹੋ ਜਾਂਦੀ ਹੈ।

ਇਸੇ ਤਰ੍ਹਾਂ ਇਟਲੀ ਦੇਸ਼ ਨਾਲ ਸਬੰਧਤ 'ਨੀਲੀ ਪਰੀ' ਦੇ ਬਿਰਤਾਂਤ ਰਾਹੀਂ ਇਹ ਦੱਸਿਆ ਗਿਆ ਹੈ ਕਿ ਇਕ ਅਣਜਾਣ ਮਨੁੱਖ ਆਪਣੇ ਧੰਨ ਦੌਲਤ ਦੀ ਬਿਨਾਂ ਪਰਵਾਹ ਕੀਤਿਆਂ ਸਾਗਰ ਵਿਚ ਡੁਬਦੇ ਕੁਝ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਬਚਾ ਲੈਂਦਾ ਹੈ। ਉਸ ਦੀ ਨਜ਼ਰ ਵਿਚ ਧੰਨ ਦੌਲਤ ਨਾਲੋਂ ਮਨੁੱਖੀ ਜੀਵਨ ਜਿਆਦਾ ਕੀਮਤੀ ਹੈ। ਇਟਲੀ ਦੇ ਲੋਕ ਅੱਜ ਵੀ ਸਾਗਰ ਤੇ ਬਣੇ ਉਸ ਦੇ ਬੁੱਤ ਦੀ ਪੂਜਾ ਕਰਦੇ ਹਨ।

ਇਸ ਸੰਗ੍ਰਹਿ ਦੀ ਇਕ ਹੋਰ ਮਹੱਤਵਪੂਰਨ ਲੋਕ ਕਹਾਣੀ ਜੋ ਰੂਸ ਦੇਸ਼ ਨਾਲ ਸਬੰਧਤ 'ਬਰਫ਼ ਦੀ ਪੁੱਤਰੀ ਸਨੇ ਗੂਰਕਾ' ਰਾਹੀਂ ਦੱਸਿਆ ਹੈ ਕਿ ਗ੍ਰਹਿਸਥੀ ਜੀਵਨ ਦਾ ਸੁਖ ਬੱਚਿਆਂ ਦੀ ਆਮਦ ਨਾਲ ਹੈ। ਪਤੀ-ਪਤਨੀ ਲਈ ਘਰ ਦੀਆਂ ਵਸਤਾਂ ਧੰਨ ਦੌਲਤ ਸੁੱਖ ਨਹੀਂ ਦਿੰਦੀਆਂ, ਜਦੋਂ ਉਹ ਦੂਸਰੇ ਬੱਚਿਆਂ ਨੂੰ ਬਾਹਰ ਖੇਡਦੇ ਦੇਖਦੇ ਹਨ ਉਨ੍ਹਾਂ ਨੂੰ ਬੱਚੇ ਤੋਂ ਬਿਨਾਂ ਘਰ ਸੂੰਨਾ ਸੂੰਨਾ ਲੱਗਦਾ ਹੈ। ਬੱਚੇ ਬਰਫ਼ ਵਿਚ ਖੇਡਕੇ ਸਨੋ ਮੈਨ ਬਣਾਉਂਦੇ ਹਨ। ਉਹ ਵੀ ਬਾਹਰ ਜਾ ਕੇ ਇਕ ਸੁੰਦਰ ਬੱਚੀ ਦੇ ਅਕਾਰ ਦਾ ਬਰਫ਼ ਦਾ ਪੁਤਲਾ ਬਣਾ ਕੇ ਉਸ ਦਾ ਨਾਮ ਸਨੇਗੂਰਕਾ ਰੱਖ ਦਿੰਦੇ ਹਨ, ਜਿਸ ਦਾ ਭਾਵ ਬਰਫ ਦੀ ਪੁੱਤਰੀ ਤੋਂ ਹੈ। ਬਰਫ਼ ਦੀ ਪੁਤਰੀ ਵਿਚ ਜਾਨ ਪੈ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਤੇ ਉਹ ਆਪਣੀ ਮਾਂ ਨੂੰ ਮਾਂ-ਮਾਂ ਕਹਿ ਕੇ ਗਲ ਲਗ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਹੁਣ ਪਤੀ ਪਤਨੀ ਬਹੁਤ ਖੁਸ਼ ਹਨ। ਪਰ ਇਹ ਖੁਸ਼ੀਆਂ ਦੇ ਪਲ ਥੋੜ ਚਿਰੇ ਹੁੰਦੇ ਹਨ। ਮੌਸਮ ਦੀ ਤਬਦੀਲੀ ਨਾਲ ਸੂਰਜ ਦੀਆਂ ਕਿਰਨਾਂ ਦੇ ਸੇਕ ਨਾਲ ਸਨੇ ਗੂਰਕਾ ਪਿਘਲ ਕੇ ਮਰ ਜਾਂਦੀ ਹੈ। ਇਥੇ ਵੀ ਪ੍ਰਮਾਤਮਾ ਦੇ ਗੁੱਝੇ ਭੇਦ ਮੌਤ ਦੀ ਅਟਲ ਸਚਾਈ ਬਾਰੇ ਬਹੁਤ ਹੀ ਖੂਬਸੂਰਤੀ ਨਾਲ ਬਾਲ ਮਨ ਨੂੰ ਸਮਝਾਉਣ ਦੀ ਕੋਸ਼ਿਸ਼ ਕੀਤੀ ਹੈ। ਮਾਂ-ਬਾਪ ਅਪਣੇ ਬੱਚੇ ਦੇ ਵਿਯੋਗ ਵਿਚ ਪਾਗਲ ਹੋ ਕੇ ਗਲੀਆਂ ਵਿਚ ਹਰ ਘਰ ਅੱਗੇ ਜਾਕੇ ਪੁੱਛਦੇ ਹਨ ਕਿ ਕਿਸੇ ਨੇ ਸਾਡੀ ਸਨੇ ਗੂਰਕਾ ਨੂੰ ਦੇਖਿਆ ਹੈ? ਇਹ ਕਹਾਣੀ ਕਲਾਤਮਕ ਪੱਖ ਤੋਂ ਬੜੀ ਹੀ ਮਾਰਮਿਕ ਤੇ ਮਮਤਾਮਈ ਅਹਿਸਾਸ ਨਾਲ ਲਬਰੇਜ਼ ਕਹਾਣੀ ਹੈ।

ਇਸ ਸੰਗ੍ਰਹਿ ਦੀ ਆਖਰੀ ਕਹਾਣੀ 'ਬੁਢੀ ਪਰੀ ਦਾ ਸਰਾਪ' ਯੂਰਪ ਦੇਸ਼ ਦੇ ਰਾਜ-ਘਰਾਣੇ ਨਾਲ ਸਬੰਧਤ ਹੈ। ਰਾਜੇ ਦੇ ਘਰ ਬੜੀਆਂ ਮੰਨਤਾ ਨਾਲ ਬੇਟੀ ਦਾ ਜਨਮ ਹੁੰਦਾ ਹੈ, ਉਹ ਸ਼ਹਿਜ਼ਾਦੀ ਦੇ ਜਨਮ ਦਿਨ ਦੀ ਖੁਸ਼ੀ ਵਿਚ ਸਾਰੇ ਦੇਸ਼ ਵਾਸੀਆਂ ਤੇ ਪਰੀ ਲੋਕ ਦੀਆਂ ਪਰੀਆਂ ਨੂੰ ਸੱਦਾ ਭੇਜਦਾ ਹੈ, ਪਰ ਬੁੱਢੀ ਪਰੀ ਨੂੰ ਕੋਈ ਸੁਨੇਹਾ ਨਹੀਂ ਪਹੁੰਚਦਾ, ਉਹ ਰਾਜੇ ਨੂੰ ਸਬਕ ਸਿਖਾਉਣ ਲਈ ਕਰੋਧ ਤੇ ਈਰਖਾ ਵਸ ਹੋ ਕੇ ਸ਼ਹਿਜ਼ਾਦੀ ਨੂੰ ਸਰਾਪ ਦੇ ਦਿੰਦੀ ਹੈ ਕਿ ਅਠਾਰਾਂ ਸਾਲ ਦੀ ਹੋਣ ਤੇ ਸੂਏ ਦੇ ਚੁਭਣ ਨਾਲ ਸ਼ਹਿਜ਼ਾਦੀ ਦੀ ਮੌਤ ਹੋ ਜਾਵੇਗੀ। ਰਾਜਾ ਬਹੁਤ ਉਦਾਸ ਹੁੰਦਾ ਹੈ। ਉਹ ਬਾਕੀ ਪਰੀਆਂ ਵਿਚੋਂ ਇਸ ਸਰਾਪ ਨੂੰ ਮੁਕਤ ਕਰਨ ਦੇ ਉਪਾਅ ਪੁੱਛਦਾ ਹੈ ਪਰ ਕੋਈ ਵੀ ਬੁੱਢੀ ਪਰੀ ਦੇ ਡਰ ਤੋਂ ਜੁਗਤੀ ਦੱਸਣ ਦੀ ਹਾਮੀ ਨਹੀਂ ਭਰਦੀ।

ਆਖਰ ਇਕ ਜਵਾਨ ਪਰੀ ਰਾਜੇ ਨੂੰ ਜੁਗਤੀ ਦਸਦੀ ਹੈ ਕਿ ਸੂਆ ਚੁਭੇਗਾ ਜਰੂਰ ਪਰ ਮੌਤ ਨਹੀਂ ਹੋਵੇਗੀ, ਬਲਕਿ ਸਹਿਜ਼ਾਦੀ ਸਮੇਤ ਸਾਰਾ ਰਾਜ ਮਹਲ ਸੌ ਸਾਲਾਂ ਲਈ ਡੂੰਘੀ ਨੀਂਦ ਵਿਚ ਚਲਾ ਜਾਵੇਗਾ। ਫਿਰ ਕੋਈ ਸਹਿਜ਼ਾਦਾ ਇਧਰ ਘੁੰਮਦਾ ਘੁਮਾਂਦਾ ਆਕੇ ਉਸ ਦਾ ਮੱਥਾ ਚੁੰਮੇਗਾ ਤਾਂ ਸਹਿਜ਼ਾਦੀ ਸਮੇਤ ਸਾਰੇ ਲੋਕ ਜਾਗ ਜਾਣਗੇ, ਰਾਜੇ ਦੇ ਬੜੀ ਸਾਵਧਾਨੀ ਵਰਤਣ ਦੇ ਬਾਵਜੂਦ ਹੋਣੀ ਨੂੰ ਇਹੋ ਮੰਨਜੂਰ ਸੀ। ਇਸ ਕਹਾਣੀ ਦੀ ਵਿਉਂਤ ਬੰਦੀ ਤੇ ਬਿਰਤਾਂਤਕ ਜੁਗਤਾਂ ਪੰਚ-ਤੰਤਰ ਦੀਆਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਵਾਲੀਆਂ ਹੀ ਹਨ। ਲੋਕ ਸਾਹਿਤ ਦੀ ਇਹ ਖੂਬੀ ਹੈ, ਕਿ ਇਹ ਨਿਰੰਤਰ ਗਤੀਸ਼ੀਲ ਰਹਿੰਦਾ ਹੈ।

ਅਸੀਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਕਹਾਣੀਆਂ ਦੇ ਅਧਿਐਨ ਤੋਂ ਬਾਅਦ ਦੇਖਦੇ ਹਾਂ ਕਿ ਲੋਕ ਕਹਾਣੀ ਭਾਵੇਂ ਦੁਨੀਆਂ ਦੇ ਕਿਸੇ ਦੇਸ਼ ਦੀ ਹੋਵੇ, ਪਰ ਉਸ ਵਿਚ ਬਹੁਤ ਸਾਰੀਆਂ ਗਲਾਂ ਸਾਂਝੀਆਂ ਹਨ। ਜਿਵੇਂ ਵਰ-ਸਰਾਪ ਵਾਲੀ ਪ੍ਰਵਿਰਤੀ ਭਾਰਤੀ ਮਿਥਕ-ਪਾਤਰ 'ਅਹੱਲਿਆ' ਦਾ ਕਿਸੇ ਰਿਸ਼ੀ ਦੇ ਸਰਾਪ ਨਾਲ ਪਥਰ ਹੋ ਜਾਣਾ ਅਤੇ ਫਿਰ ਰਾਮ ਦੀ ਛੋਹ ਨਾਲ ਜੀਵਤ ਹੋਣਾ ਆਦਿ ਜਾਂ ਮਨੁੱਖ ਦਾ ਰਹੱਸਮਈ ਸੁਪਨ-ਸੰਸਾਰ ਅਤੇ ਪਰਾ ਭੌਤਿਕ ਸ਼ਕਤੀਆਂ ਨੂੰ ਆਪਣੀ ਜ਼ਿੰਦਗੀ ਦੇ ਸਮਾਨੰਤਰ ਵਿਚਰਦਿਆਂ ਮਹਿਸੂਸ ਕਰਨਾ। ਇਨ੍ਹਾਂ ਲੋਕ ਕਹਾਣੀਆਂ ਦਾ ਮੂਲ ਮਨੋਰਥ ਕਲਪਨਾ ਸ਼ਕਤੀ ਰਾਹੀਂ ਰੱਬੀ ਗੁਣਾ ਵਾਲੇ ਪਰੀ ਰੂਪੀ ਇਤਿਹਾਸਕ, ਮਿਥਹਾਸਕ ਪਾਤਰਾਂ ਰਾਹੀਂ ਆਦਰਸ਼ ਜੀਵਨ ਜੀਉਣ ਦੀ ਜੁਗਤੀ ਦ੍ਰਿੜ ਕਰਾਉਣ ਦੇ ਨਾਲ ਨਾਲ ਪਾਠਕ ਤੇ ਬਚਿਆਂ ਦਾ ਮੰਨੋਰੰਜਨ ਕਰਨਾ ਵੀ ਹੈ। ਸੌਂਦਰਯ ਰਸ, ਦ੍ਰਿਸ਼ ਵਰਣਨ ਕਹਾਣੀ ਦੀ ਖੂਬਸੂਰਤੀ ਵਿਚ ਵਾਧਾ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਡਾ. ਹਰਬੰਸ ਸਿੰਘ ਚਾਵਲਾ ਇਕ ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲ ਲੇਖਕ ਹੋਣ ਦੇ ਨਾਤੇ ਔਰਤ ਦੇ ਕਲਿਆਣਕਾਰੀ ਮਾਨਵੀ ਸਰੋਕਾਰਾਂ ਨਾਲ ਸਬੰਧਤ ਰੂਪ ਧਰਤੀ ਦਾ ਦੂਜਾ ਰੱਬ ਕਹੀ ਜਾਣ ਵਾਲੀ ਔਰਤ ਨੂੰ ਅਥਾਹ ਸ਼ਕਤੀਆਂ ਦੀ ਮਾਲਕ ਦੇ ਨਾਲ ਨਾਲ ਦੁਰਗਾ ਤੇ ਕਾਲੀ ਦੇ ਰੂਪ ਵਿਚ ਦੁਸਟਾਂ ਦਾ ਨਾਸ਼ ਕਰਨ ਵਾਲੀ ਦੱਸਦਿਆਂ ਇਸ ਸੰਸਾਰ ਵਿਚ ਔਰਤ ਮਰਦ ਇਕ ਦੂਜੇ ਦੇ ਪੂਰਕ ਤੇ ਪ੍ਰਕਿਰਤੀ ਦੀ ਸਹਿਹੋਂਦ ਤੋਂ ਬਿਨ੍ਹਾਂ ਜੀਵਨ ਦੀ ਕਲਪਨਾ ਕਰਨਾ ਸੰਭਵ ਨਹੀਂ ਹੈ ਆਦਿ ਗੁਣਾਂ ਦਾ ਸੰਚਾਰ ਕਰਦੇ ਹਨ। ਇਥੇ 'ਪਰੀ ਲੋਕ ਦੀ ਸੈਰ ਕਰਾਵਾਂ' ਪੁਸਤਕ ਦੀ ਮਹੱਤਤਾ ਹੋਰ ਵੱਧ ਜਾਂਦੀ ਹੈ ਜਦੋਂ ਲੇਖਕ ਇਕ ਬੱਝਵੇਂ ਰੂਪ ਵਿਚ ਆਪਣੇ ਮੁਖ ਉਦੇਸ਼ ਦਾ ਸੰਚਾਰ ਕਰ ਰਿਹਾ ਹੈ। ਪਰੀ ਦੇ ਪ੍ਰਤੀਕ ਰਾਹੀਂ ਅਤਿ ਸੰਵੇਦਨਸ਼ੀਲ ਤੇ ਚੇਤੰਨ ਔਰਤ ਦੇ ਵਖ-ਵਖ ਰੂਪਾਂ ਨੂੰ ਪੇਸ਼ ਕਰ ਮਾਨਵੀ ਮੁੱਲਾਂ ਦਾ ਸੰਚਾਰ ਕਰਨਾ, ਇਹੋ ਹੀ ਇਸ ਪੁਸਤਕ ਦੀ ਸਾਰਥਕਤਾ ਹੈ। ਡਾ. ਹਰਬੰਸ ਸਿੰਘ ਚਾਵਲਾ ਵਧਾਈ ਦੇ ਪਾਤਰ ਹਨ। ਜਿੰਨ੍ਹਾਂ ਇਨ੍ਹਾਂ ਲੋਕ ਕਹਾਣੀਆਂ ਨੂੰ ਪੰਜਾਬੀ ਜੁਬਾਨ ਵਿਚ ਸਾਂਭਣ ਦਾ ਉਪਰਾਲਾ ਕੀਤਾ।

ਸਹਾਇਕ ਪੁਸਤਕ ਸੂਚੀ

1. ਚਾਵਲਾ ਡਾ. ਹਰਬੰਸ ਸਿੰਘ, ਪਰੀ ਲੋਕ ਦੀ ਸੈਰ ਕਰਾਵਾਂ, ਮਨਪ੍ਰੀਤ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਦਿੱਲੀ, 2019.
2. ਸੰਪਾਦਕ, ਭੁੱਲਰ ਗੁਰਬਚਨ ਸਿੰਘ, ਬਾਲ ਸਾਹਿਤ ਅਤੇ ਸੱਭਿਆਚਾਰ, ਸਿੰਘ ਬ੍ਰਦਰਜ਼, ਪੰਜਾਬ, 2019.
3. ਚਾਵਲਾ ਡਾ. ਹਰਬੰਸ ਸਿੰਘ, 65 ਬਾਲ ਲੋਕ ਕਹਾਣੀਆਂ, ਮਨਪ੍ਰੀਤ ਪ੍ਰਕਾਸ਼ਨ, ਦਿੱਲੀ, 2014.
4. ਸਿੰਘ ਪ੍ਰੋ. ਬ੍ਰਹਮਜਗਦੀਸ਼, ਕੌਰ ਪ੍ਰੋ. ਰਾਜਬੀਰ, ਪੰਜਾਬੀ ਸਾਹਿਤ ਦਾ ਇਤਿਹਾਸ, ਵਾਰਿਸ ਸ਼ਾਹ ਫਾਉਂਡੇਸ਼ਨ, ਅੰਮ੍ਰਿਤਸਰ, ਪੰਜਾਬ, 2013.

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 3-4
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 69-84

मीडिया शिक्षा और साइबर अपराध : मीडिया छात्रों के बीच साइबर अपराध के बारे में जागरूकता का एक अध्ययन

रोहताश, शोधार्थी
प्रोफेसर, (डॉ.) मनोज दयाल, शोध निर्देशक
संचार प्रबंधन और प्रौद्योगिकी विभाग, गुरुजम्भेश्वर युनिवर्सिटी ऑफ साईन्स एण्ड टेक्नोलोजी,
हिसार (हरियाणा) पिनकोड –125001

शोध सार :–

इक्कीसवीं सदी के इस युग में मीडिया शिक्षा में तेजी से बदलाव आया है और इसने नया ध्यान आकर्षित किया है। इस पत्र में साइबर अपराध और मीडिया शिक्षा के संबंध का मूल्यांकन किया गया है। हर दिन बढ़ते हुए साइबर अपराधों से मीडिया साक्षरता की भूमिका महत्वपूर्ण हो गई है। मीडिया शिक्षा द्वारा छात्रों में काफी हद तक साइबर क्राइम जागरूकता आ सकती है तथा यह संदेशों की प्रकृति, तकनीकों और प्रभावों को गंभीर रूप से समझने में सक्षम बनाता है। इस पेपर में मीडिया शिक्षा द्वारा साइबर क्राइम से जुड़े विभिन्न दृष्टिकोणों को समझने का प्रयास होगा, साथ ही यह साइबर अपराध के वैचारिक ढांचे के साथ मीडिया शिक्षा का विश्लेषण भी करेगा।

आज इन्टरनेट हम सबकी जरूरत बनता जा रहा है लेकिन इसके साथ ही साइबर अपराध भी हमारे सामने एक बड़ी चुनौती बन रहा है। आज हम पर्याप्त जानकारी ना होने की वजह से ऑनलाइन अपराधियों के आसानी से शिकार हो जाते हैं। लोग अपने मनोरंजन और लालच में आकर खुद की व्यक्तिगत जानकारी साइबर ठगों के साथ साँझा कर देते हैं। युवा जागरूकता के अभाव में सोशल मीडिया के जरिये आसानी से साइबर क्राइम के शिकार हो रहे हैं। यह सब रोकने के लिए हमें साइबर क्राइम के बारे में जागरूक होना जरूरी है।

यह शोध पत्र मुख्य रूप से मीडिया छात्रों में साइबर अपराध जागरूकता के बारे में है। इस शोध का उद्देश्य डी.एन. कॉलेज हिसार के जनसंचार छात्रों के बीच साइबर अपराध के बारे में जागरूकता के स्तर को समझना है। साइबर अपराधों के विभिन्न प्रकार और सरकारी कानूनों के बारे में कॉलेज के छात्रों में जागरूकता का भी पता लगाना है। शोध द्वारा इंटरनेट का उपयोग करते समय छात्रों द्वारा अपनाई गई विभिन्न सावधानियों का भी पता लगाना है। आवश्यक डेटा एकत्र करने के लिए हरियाणा राज्य के डी. एन. कॉलेज हिसार के जनसंचार छात्रों के बीच एक ऑनलाइन प्रश्नावली सर्वेक्षण किया गया था।

शोध से पता चला है कि मीडिया शिक्षा साइबर क्राइम जागरूकता में अहम् भूमिका निभा रही है। मीडिया शिक्षा की वजह से साइबर क्राइम के प्रति सकारात्मक परिणाम देखने को मिले है। साथ ही विद्यार्थियों के बीच

साइबर अपराध के बारे में सही प्रशिक्षण और उचित शिक्षा की कमी ने साइबर अपराध को बढ़ावा देने में बहुत योगदान दिया है। हमें साइबर अपराध से बचने के लिए इस बारे में युवाओं को और अधिक जागरूक करने की आवश्यकता है।

महत्वपूर्ण शब्द :– साइबर अपराध, युवा, जागरूकता, साइबर कानून, सावधानियां, मीडिया शिक्षा।

प्रस्तावना :–

आज सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी हमारे लिए बहुत महत्वपूर्ण हो गयी है। इसके बिना आज किसी भी का मकाहो पाना असंभव लगने लगा है। वह चीज जिसके बारे में इंसान सोच सकता है, इंटरनेट के जरिये उस तक वो पहुंच सकता है, जैसे कि सोशल नेटवर्किंग, ऑनलाइन शॉपिंग, डेटा स्टोर करना, गेमिंग, ऑनलाइन स्टडी, ऑनलाइन जॉब इत्यादि। इसके अलावा औद्योगिक, बैंकिंग, शिक्षा, रेलवे, कृषि, सांख्यिकीय, चिकित्सा, अंतरिक्ष संस्थान, बीमा, प्रशासन तथा लेखा शास्त्र इत्यादि में इंटरनेट ने एक बड़ी क्रांति ला दी है। आज इन्टरनेट का इस्तेमाल व्यावसायिक क्षेत्रों के साथ–साथ मनोरंजन तक घर–घर में बच्चे से ले के बूढ़े हर पीढ़ी कर रही है। इंटरनेट के उपयोग और इसकी जरूरत के साथ साइबर अपराधों की अवधारणा भी अस्तित्व में आई है।

हम अपने मोबाइल या कंप्यूटर के माध्यम से इंटरनेट से जुड़े रहते हैं, इसलिये साइबर अपराध के बारे में जानना अत्यंत आवश्यक हो गया है। विमुद्रीकरण के बाद से बैंकिंग इंडस्ट्री में डिजिटल लेन–देन में अत्यधिक वृद्धि हुई है। साथ ही साथ साइबर अपराध भी बढ़ा है।

टाइम्सनाउ डिजिटल, (2021) में प्रकाशित एक लेख में गृह मंत्रालय ने 5 फरवरी 2020 को संसद को सूचित किया कि "इंटरनेट को अपनाने से साइबर अपराध की घटनाओं में भारी वृद्धि हुई है, और आगे कहा गया है कि इनमें से अधिकांश मामले यौन शोषण और नफरत फैलाने से संबंधित हैं।" एक लिखित बयान में, राज्यमंत्री (गृह मामलों) जी.के. रेड्डी ने कहा, 'देश में साइबर अपराध के पीछे के उद्देश्यों में व्यक्तिगत बदला, धोखाधड़ी, यौन शोषण, नफरत भड़काना, चोरी, जानकारी चोरी करना आदि शामिल हैं।'

साइबर अपराध की भयावह को देखते हुए हमें इस बारे में जागरूक होने की अति आवश्यकता है। देश के हर नागरिक को मीडिया शिक्षा द्वारा साइबर अपराध के सचेत रहने के उपाय बताने चाहिये। "मीडिया शिक्षा दुनिया के हर देश में हर नागरिक की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और सूचना के अधिकार के मूल अधिकार का हिस्सा है और लोकतंत्र के निर्माण और उसे बनाए रखने में महत्वपूर्ण है।" (यूनेस्को, 1999)

आज पत्रकारिता में युवाओं को प्रिंट मीडिया के साथ ऑनलाइन मीडिया के बारे में भी बखूबी जानकारी दी जा रही है। काफी मीडिया पाठ्यक्रम में युवाओं को साइबर क्राइम के बारे में बताया जाता है। युवा देश का भविष्य होते है, इसलिए युवाओं को साइबर अपराध के बारे में जागरूकता होना बहुत जरूरी है। इस शोध पत्र द्वारा हम ये जानने की कोशिश करेंगे की मीडिया छात्रों में साइबर अपराध के बारे में कितनी जागरूकता है? मीडिया के विद्यार्थी साइबर अपराध से बचने के लिए किन–किन तरीकों का इस्तेमाल करते है? विद्यार्थियों को साइबर कानून के बारे में कितनी जानकारी है? और छात्र जब मीडिया के शिकार हो जाते है तो वो क्या इसकी शिकायत कहाँ करते है?

साहित्य समीक्षा :-

(श्रीहरी तथा अन्य 2018) इनके शोध पत्र में "कोच्चि के विशेष संदर्भ में साइबर अपराध के प्रति छात्रों का विशेष अध्ययन किया गया है। शोध से पता चलता है कि केवल अधिकांश उपयोग कर्ता साइबर अपराध के बारे में जानते हैं। साइबर क्राइम के बारे में उत्तरदाताओं में हैकिंग के बारे में जागरूकता का अनुपात अन्य प्रकारों की तुलना में अधिक है। यह भी पता चलता है कि इनमें से अधिकांश उत्तर दाताओं को साइबर क्राइम कानूनों के बारे में ठीक से जानकारी नहीं है।"

(कुम्भर तथा अन्य 2017), इनके शोध पत्र में "साइबर क्राइम रोकथाम और इसके प्रभाव के बारे में जागरूकता के लिए पुणे शहर में 200 उत्तरदाताओं के साथ शहर के विभिन्न हिस्सों से अनुसंधान किया गया। इसमें पाया गया की कम समय होने की वजह से ज्यादातर लोग ऑनलाइन लेन देन पसंद करते है, लेकिन ऑनलाइन लेन देन करते समय वे सुरक्षित महसूस कर रहे हैं। ऑनलाइन लेन देन के दौरान उपयोग कर्ता अपना विवरण देते समय आशंकित रहते है कि कोई उनकी जानकारी का गलत इस्तेमाल ना कर ले।"

(खान तथा अन्य 2018) इनके "शोध के निष्कर्षों के आधार पर, यह निष्कर्ष निकाला गया कि विभिन्न आयु वर्ग के युवाओं में साइबर क्राइम जागरूकता के मामले में एक महत्वपूर्ण अंतर है। परिणामों ने साइबर क्राइम को कम/रोकने के लिए जागरूकता को महत्वपूर्ण माना है। सम्पूर्ण निष्कर्ष द्वारा छात्रों के बीच साइबर अपराध पर असंतोष जनक जागरूकता का पता चलता है।"

(लस्टेड, 1991) इन्होने मीडिया शिक्षा के बारे में बताया कि "1960 के दशक से, एक नया स्कूल विषय, 'मीडिया शिक्षा' उभरा है, जो मीडिया साक्षरता को बढ़ावा देने के लक्ष्य के साथ मास मीडिया के बारे में सिद्धांतों, आलोचनाओं और बहस का अध्ययन है।"

मीडिया शिक्षा की परिभाषा के कई संस्करण हैं। कनाडा में, मीडिया साक्षरता सप्ताह (2010, P. 1) की निम्नलिखित परिभाषा है : 'मीडिया शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यक्ति मीडिया साक्षर बनते हैं–मीडिया संदेशों और प्रस्तुतियों की प्रकृति, तकनीकों और प्रभावों को गंभीर रूप से समझने में सक्षम होते हैं।'

(राठौड़ तथा अन्य 2019), "इन्होने मैडिकल छात्रों के बीच साइबर–सुरक्षा के बारे में जागरूकता का अध ययन किया। वे अक्सर ऑनलाइन लेन देन के दौरान सुरक्षित वेबसाइट के महत्व को अनदेखा करके अपने बैंक विवरणों को उजागर कर रहे हैं। कई लोग इंटरनेट से कानूनी रूप से डाउन लोड करने के बारे में जागरूक है और विश्वसनीय इंटरनेट सेवा प्रदाता का उपयोग करते है। काफी उपयोगकर्ता एंटी–वायरस द्वारा अपने सिस्टम की सुरक्षा के बारे में जानते हैं।"

(चौधरी, 2020) इन्होने अपने "शोध में हरियाणा राज्य के पांच क्षेत्रों से यादृच्छिक नमूना विधि द्वारा 500 कॉलेज छात्रों के नमूने का चयन किया गया। शोध में पता चला कि हरियाणा राज्य के कॉलेज में औसत छात्रों में साइबर अपराध के बारे में जागरूकता है। परिणामों से पता चला कि साइबर–अपराध जागरूकता के मामले में पेशेवर छात्र अपने समकक्षों की तुलना में अधिक जागरूक हैं। शोध में ये भी पाया गया कि छात्रों को जागरूक करने के लिए सेमिनार, कार्यशाला आदि आयोजित किए जाने चाहिए।"

(बेगम, 2019), इन्होने अपने "शोध में पंद्रह लेख इलेक्ट्रॉनिक डेटा बेस से प्राप्त किए जो साइबर क्राइम के विभिन्न रूपों और इसको रोकने, संभालने के उपायों के बारे में थे। शोध में पाया कि साइबर क्राइम हमेंशा

एक चुनौती रहेगी। साइबर अपराधों के खतरे को समझना अनिवार्य है क्योंकि प्रौद्योगिकी समाज की एक संपूर्ण आवश्यकता है। प्रत्येक व्यक्ति और व्यवसायों को साइबर अपराध के लिए शिक्षित होने की आवश्यकता है कि वे साइबर अपराध के अगले शिकार होने से बच सकें।

शोध उद्देश्य :–

– मीडिया शिक्षा से छात्रों के बीच साइबर क्राइम के बारे की क्या धारणा है।

– मीडिया शिक्षा द्वारा छात्रों के बीच विभिन्न साइबर अपराध के बारे में जागरूकता स्तर को समझना।

' साइबर अपराध को रोकने के लिए मीडिया शिक्षा की भूमिका जानना।

शोध प्रश्न :–

– मीडिया छात्रों के बीच साइबर क्राइम के बारे की धारणा क्या है?

– मीडिया शिक्षा द्वारा छात्रों के बीच विभिन्न साइबर अपराध के बारे में जागरूकता का स्तर क्या है?

– साइबर अपराध को रोकने के लिए मीडिया छात्रों द्वारा किन–किन सावधानियों को अपनाया जाता है?

– मीडिया शिक्षा साइबर अपराध रोकने में कितनी उपयोगी है?

शोध प्रविधि :–

इस अध्ययन के लिए हमने वर्णनात्मक शोध विधि को अपनाया है। इस शोध विधि का शिक्षा तथा मनोविज्ञान के क्षेत्र में बहुत अधिक महत्व है। इसका उपयोग मनोविज्ञान व शिक्षा के क्षेत्र में काफी किया जाता है।

जॉन डब्ल्यू बेस्ट (1997) के अनुसार, ''वर्णनात्मक अनुसंधान 'क्या है' का वर्णन एवं विश्लेषण करता है। परिस्थितियाँ अथवा सम्बन्ध जो वास्तव में वर्तमान है, अभ्यास जो चालू है, विश्वास, विचारधारा अथवा अभिवृत्तियाँ जो पाई जा रहीं है, प्रक्रियायें जो चल रही है, अनुभव जो प्राप्त किये जा रहे हैं अथवा नयी दिशायें जो विकसित हो रही है, उन्ही से इसका सम्बन्ध है।''

इस शोध के लिए हमने ऑनलाइन गूगल फॉर्म के द्वारा सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया है। इस ऑनलाइन फॉर्म में हमने बंद प्रश्नावली का उपयोग किया है। इस सर्वेक्षण में दयानंद कॉलेज, हिसार के जनसंचार विभाग से कुल 164 विद्यार्थियों में से 55 विद्यार्थियों ने अपने विचार हमसे साझा किये। इस शोध सर्वेक्षण में 18 से 35 उम्र तक के उत्तरदाताओं ने भाग लिया।

"गूगल फॉर्म (Google Forms) एक निःशुल्क सर्वेक्षण उपकरण है, जो G Suite- Google के संपूर्ण ऑफिस सूट का एक हिस्सा है (हालाँकि कुछ लोग इसे Google दस्तावेज के रूप में संदर्भित करते हैं)। गूगल फॉर्म हमें वैयक्तिकृत सवालों या सर्वेक्षण के माध्यम से लोगों से जानकारी एकत्र करने में मदद करता है। लोगों के द्वारा प्रदान की जाने वाली इस जानकारी को आप स्प्रेड शीट में इकट्ठा कर सकते हो और ये सारा काम अपने आप होता है। गूगल सप्रेड शीट में ये सारा डाटा हर एक सवाल के जवाब में अलग–अलग जमा हो जाता है। आपको कुछ भी करने की जरूरत नहीं होती है। यह Google फॉर्म के डेटा को सीधे स्प्रेड शीट में सहेजने के सबसे आसान तरीकों में से एक बनाता है।" ('गूगल फॉर्म क्या है? इसका उपयोग कैसे करे?, '2021)

दयानंद कॉलेज– परिचय :–

दयानंद कॉलेज एक बहु–संकाय, सह–शिक्षा सरकारी सहायता प्राप्त संस्थान है जो गुरु जम्भेश्वर विज्ञान

और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, हिसार से संबद्ध है। 1950 में ऐतिहासिक शहर हिसार में स्थापित, कॉलेज को डीएवी कॉलेज प्रबंध समिति, नई दिल्ली द्वारा 1962 में अपने कब्जे में ले लिया था। कॉलेज का अस्तित्व लाला ज्ञानचंद महाजन के कारण है, जो पेशे से एक शिक्षक, एक सामाजिक योद्धा और स्वभाव से एक संत थे। दयानंद कॉलेज, हिसार को नवंबर 2016 में नैक (NAAC), बेंगलुरु द्वारा 'ए' ग्रेड संस्थान के रूप में मान्यता दी गयी है।

जनसंचार विभाग की स्थापना जुलाई, 2008 में मीडिया के पेशेवर क्षेत्र में शिक्षा प्रदान करने के मिशन के साथ की गई थी। विभाग का उद्देश्य छात्रों को आज की तेजी से बदलती दुनिया में मीडिया और इसके अनुप्रयोग के बारे में शिक्षित करना है। बी0ए0 (मास कम्युनिकेशन) एक तीन वर्षीय (पूर्णकालिक) स्नातक डिग्री पाठ्यक्रम है जिसे मीडिया पेशेवरों की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए डिजाइन किया गया है।

साइबर अपराध क्या है?

साइबर अपराध से बचने के लिए सबसे पहले हमें इस बारे में कुछ सामान्य जानकारी होना जरूरी है। अगर हम साइबर अपराध के बारे में जानने की कोशिश करे तो "साइबर अपराध से आशय उन अपराधों से है, जो इंटरनेट, कंप्यूटर एवं प्रौद्योगिकी से संबंधित होते हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि सामान्यतः कोई भी ऐसा काम, जिससे कम्प्यूटर प्रतिकूल रूप से प्रभावित होता हो, साइबर क्राइम की परिधि में आता है। वस्तुतः साइबर क्राइम को एक ऐसे अपराध के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसे इंटरनेट एवं कम्प्यूटर की सहायता से किया जाता है। कहने का आशय यह है कि कोई भी ऐसा अपराध, जिसका उद्देश्य कम्प्यूटर के काम में बाधा डालना हो, साइबर अपराध है।" (शर्मा, 2020)

साइबर अपराध के मुख्य प्रकार :–

इंटरनेट, कंप्यूटर या मोबाइल के जरिये हर लोगों के साथ अपराध करने के तरीके हर दिन नये–नये आते है। शातिर लोग हर बार कोई न कोई नया तरीका खोज ही लेते है लोगों के साथ ठगी करने का फिर भी हमें कुछ साइबर अपराध के कुछ सामान्य तरीकों के बारे में पता होना जरूरी है।

पहचान की चोरी :–

जब इंटरनेट के लिए कुछ लोग हमारी पहचान की व्यक्तिगत जानकारी चुरा लेते है और फिर हमारी पहचान के जरिये हमारे साथ गलत करने की कोशिश करते है।

स्पैम :–

"जब हमारे पास ईमेल एड्रेस/मोबाइल फोन या कम्प्यूटर पर सेंडर बिना हमारी अनुमति के किसी विज्ञापन या फिर किसी प्रोडक्ट के प्रमोशन के लिए बहुत ही अधिक संख्या में हमें मेल/सन्देश या कॉल भेजता है, जो आपके किसी काम की नहीं होती है। इसे स्पैम कहा जाता है।" (बाजपेयी, 2020).

फिशिंग –

"इस प्रकार के हमले में हैकर्स द्वारा उपयोगकर्ताओं को उनके खातों या कम्प्यूटर तक पहुंच प्राप्त करने के उद्देश्य से दुर्भावना पूर्ण ईमेल अटैचमेंट या URL भेजे जाते हैं। चूँकि साइबर अपराधी तेजी से स्थापित होते जा रहे हैं एवं वे उन्नत तकनीक का उपयोग करते हैं, इसलिए इनके मेल अक्सर स्पैम के रूप में चिह्नित नहीं किये जा पाते हैं।" (उपाध्याय, 2019)

मैलवेयर दुर्भावनापूर्ण–एक ऐसा सॉफ्टवेयर और कम्प्यूटर प्रोग्राम होता है जो जिसमें उपयोग कर्ता की सहमति या जानकारी के बिना उसकी फाइल्स को और कम्प्यूटर को खराब करने के लिए बनाया जाता हैं।

ट्रोजन हॉर्स एक मैलवेयर का प्रकार है जोकि बहुत ही विध्वंसक और खतरनाक मैलवेयर है, एक बार अगर यह हमारे कम्प्यूटर में आ गया तो फिर ये हमारी फाइल्स को रिमूव और डिलीट कर देता है या फिर प्रोग्राम्स और फाइल्स की डुप्लीकेट कॉपी बना देता है।

रैन समवेयर एक इस तरह का वायरस है जो हैकर्स द्वारा हमारे कम्प्यूटर को ब्लॉक करने के तैयार किया जाता है, एक बार यह अपने कम्प्यूटर में घुस जाए तो यह पूरे सिस्टम को काम करने से बंद कर देता है।

साइबर स्टॉकिंग :–

"ऑनलाइन माध्यम से की गयी छेड़खानी को साइबर स्टॉकिंग कहा जाता है। जब ऑनलाइन माध्यम का प्रयोग करके किसी को परेशान करने के लिये ई–मेल या मैसेज भेजा जाता है तो उसे साइबर स्टॉकिंग के नाम से अभिहित किया जाता है। इस समस्या से भारत जैसे विकासशील देश ही नहीं बल्कि अमेरिका एवं ब्रिटेन जैसे विकसित देश भी पीड़ित हैं। इस समस्या के पीड़ितों में महिलाओं एवं बच्चों का प्रतिशत लगभग तीन–चौथाई (75%) है जबकि 25% पीड़ित पुरुष हैं।" (चौधरी, 2017)

भारत में साइबर कानून :–

सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 (Information Technology Act, 2000) :-

भारत का आई.टी. अधिनियम मई 2000 में भारत सरकार द्वारा पारित किया गया था। इसमें साइबर कानून के विभिन्न प्रकार शामिल हैं। यह साइबर कानून अपराध और ई–कॉमर्स से संबंधित है। यह अधिनियम संयुक्त राष्ट्र इलेक्ट्रॉनिक कॉमर्स मॉडल कानून पर आधारित है। अधिनियम का उद्देश्य भारत में सभी इलेक्ट्रॉनिक लेन देन के लिए कानूनी सुरक्षा प्रदान करना है। अधिनियम का IX अध्याय साइबर अपराध के लिए विभिन्न दंडों के बारे में बताता है। अधिनियम साइबर अपराध से प्रभावित पीड़ितों के लिए मुआवजे के बारे में भी बात करता है।

सूचना प्रौद्योगिकी (संशोधन) अधिनियम, 2008 (Information Technology Act, 2008) :–

"सूचनाप्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 को सूचना प्रौद्योगिकी संशोधन अधिनियम, 2008 के माध्यम से काफी संशोधित किया गया है, जिसे 23 दिसम्बर को भारतीय संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित किया गया था। संशोधनों के बाद इंटरनेट के जरिए अश्लीलता एवं नग्नता परोसने तथा अन्य तरह के साइबर अपराधों पर अंकुश लगाने में मदद मिलेगी। सरकार ने इस कानून में संशोधनों के जरिए साइबर नग्नता को लेकर अधिनियम में सख्त कदम उठाए हैं। कानून की धारा 67–ए में इलेक्ट्रॉनिक रूप में नग्नता के लिए दंड का उल्लेख किया गया है।" (हिन्दुस्तान टीम, 2010)

भारतीय दंड संहिता (IPC) :–

भारतीय दंड संहिता (**IPC**) :– "भारतीय दंड संहिता में साइबर अपराधों से संबंधित प्रावधान भी हैं, जो इस प्रकार हैं– ईमेल पर धमकी भरा संदेश भेजा तो धारा 503 के तहत कार्रवाई, मान हानि वाले संदेश भेजने पर धारा 499 के अंतर्गत मामला, फर्जी इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड का इस्तेमाल किया तो धारा 463 आरोपित की जाती है।" (झा, 2016)

सूचना प्रौद्योगिकी नियम, 2021 :–

"इलेक्ट्रॉनिक्स एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय ने सूचना प्रौद्योगिकी (मध्यवर्ती संस्थाओं हेतु दिशा–निर्देश और डिजिटल मीडिया आचार संहिता) नियम, 2021 को अधिसूचित किया है। ये नियम व्यापक तौर पर सोशल मीडिया, ओवर–द–टॉप (OTT) प्लेटफॉर्म और डिजिटल समाचार के नियमन से संबंधित हैं। इन नियमों का प्राथमिक उद्देश्य सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म, मैसेजिंग एप्लीकेशन, स्ट्रीमिंग प्लेटफार्म और डिजिटल समाचार प्रकाशकों के लिये एक कानून अनुपालन एवं शिकायत निवारण तंत्र प्रदान करना है।" (विजन, 2021)

शोध परिणाम :–

शोध पत्र "मीडिया शिक्षा और साइबर अपराध'' मीडिया छात्रों के बीच साइबर अपराध के बारे में जागरूकता का एक अध्ययन" के लिए हमने ऑनलाइन प्रश्नावली सर्वेक्षण किया है। इसके लिए हमने गूगल फॉर्म टूल का इस्तेमाल किया। इस दौरान कुल 164 विद्यार्थियों में से 55 विद्यार्थियों ने हमारे साथ अपने अनुभव साझा किये।

तालिका 1 – उत्तरदाता लिंग

लिंग	आवृत्ति
पुरुष	35 (63.6%)
महिला	20 (36.4%)

आंकड़ों से पता चला है कि नमूना का बड़ा प्रतिशत (55%) पुरुष थे और बाकि महिलाएं (45%)। इसमें 110 पुरुष और 90 महिलाएं थीं।

तालिका 2 – उत्तरदाताओं का आयु समूह

उम्र	आवृत्ति
18 से 24	69.1%
25 से 30	21.8%
30 से ऊपर	9.1%

शोध के दौरान अधिकांश उत्तरदाताओं की आयु 18–24 (69.1%) थी। केवल 21.8% नमूना 25–30 आयु वर्ग का था और 9.1% आयु समूह 30 से ऊपर का था।

डेटा संकलन एवं प्रस्तुति :–

इंटरनेट के उपयोग पर निष्कर्ष

चित्र संख्या 01

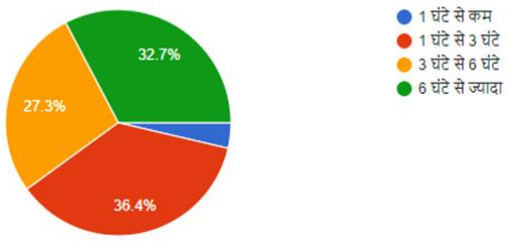

चित्र संख्या 01 के अनुसार – सर्वे के दौरान पता चला कि 32.7% उत्तरदाता इंटरनेट पर 1 घंटे से कम समय बिताते हैं। 36.4% उत्तरदाता इंटरनेट पर 1–3 घंटे खर्च करते हैं। 27.3% उत्तरदाता इंटरनेट पर 3–6 घंटे के बीच खर्च करते हैं। 32.7% उत्तरदाता इंटरनेट पर 6 घंटे से ज्यादा समय खर्च करते हैं।

चित्र संख्या 02

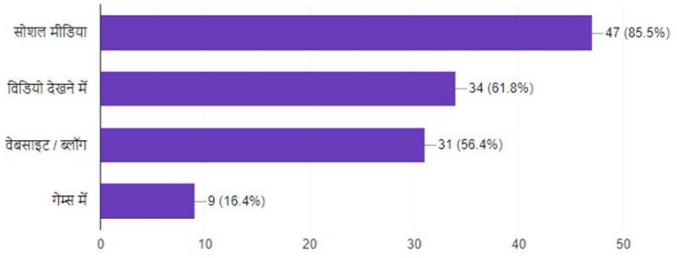

चित्र संख्या 02 के अनुसार – शोध में पता चला है कि 85.5% उत्तरदाता सोशल मीडिया पर अपना समय बिताते है. 61.8% उत्तरदाता वीडियो देखने में, 56.4% उत्तरदाता वेबसाइट या ब्लॉग पर, 16.4% उत्तरदाता गेम्स खेलने में अपना समय बिताते है।

चित्र संख्या 03

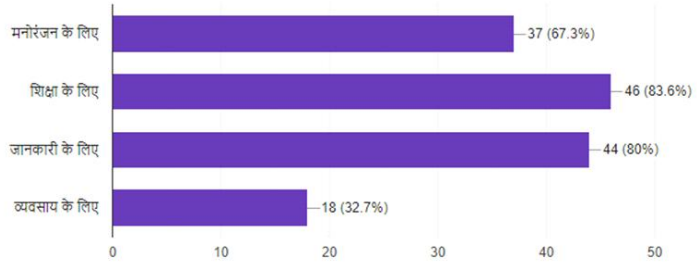

चित्र संख्या 03 के अनुसार – 67.3% उत्तरदाता मनोरंजन के लिए, 83.6% उत्तरदाता शिक्षा के लिए, 80% उत्तरदाता जानकारी के लिए, 32.7% उत्तरदाता व्यवसाय के लिए इंटरनेट का उपयोग करते हैं।

साइबर अपराध जागरूकता और सुरक्षा पर निष्कर्ष :-

चित्र संख्या 04

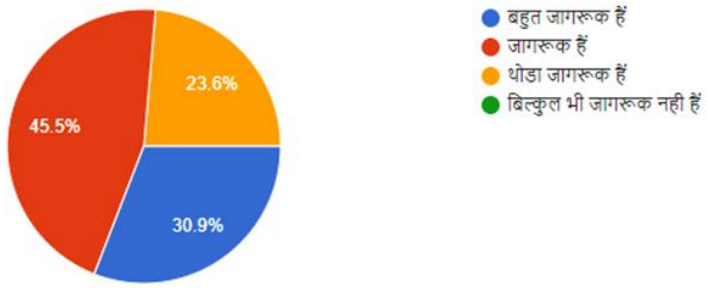

चित्र संख्या 04 के अनुसार – शोध में पता चला कि 30.9% उत्तरदाता साइबर अपराध के बारे में बहुत जागरूक हैं, 45.5% उत्तरदाता सामान्य जागरूक हैं, 23.6% उत्तरदाता थोड़ा जागरूक हैं।

चित्र संख्या 05

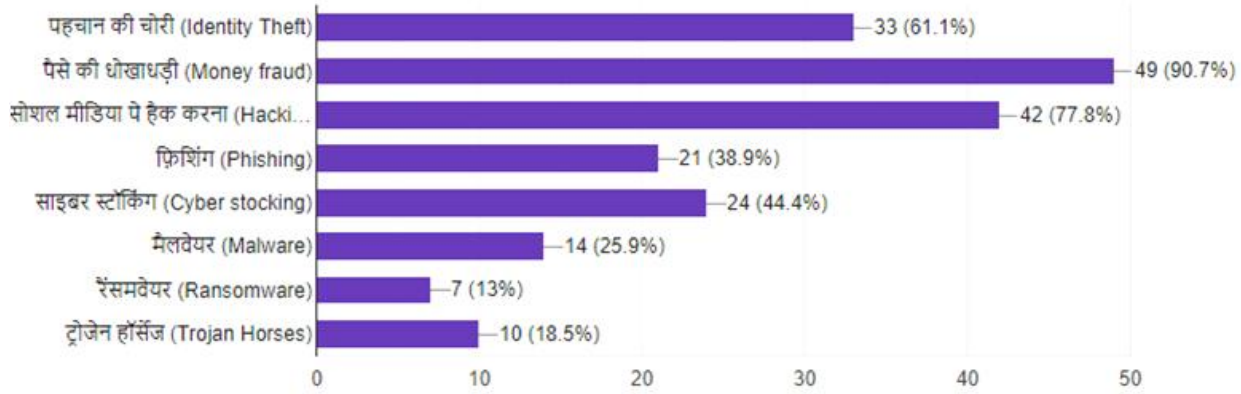

– **चित्र संख्या 05 के अनुसार** – 61.1% उत्तरदाता पहचान की चोरी, 90.7% उत्तरदाता पैसे की धोखाधड़ी, 77.8% उत्तरदातासोशलमीडियापे हैक करना, 38.9% उत्तरदाता फिशिंग, 44.4% उत्तरदाता साइबर स्टॉकिंग, 25. 9% उत्तरदाता मैलवेयर, 13% उत्तरदाता रैंसम वेयर, 18.5% उत्तरदाता ट्रोजेन हॉर्सेज साइबर अपराध के बारे में जानते है।

चित्र संख्या 06

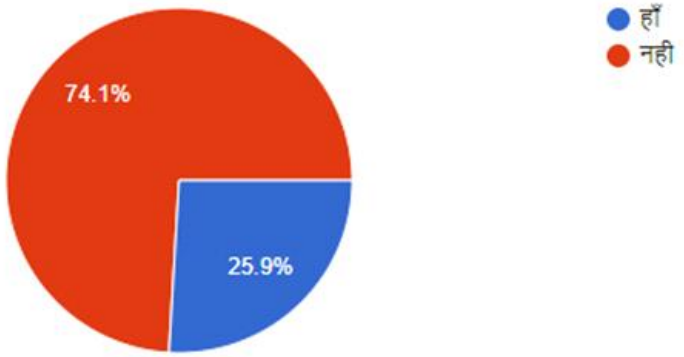

चित्र संख्या 06 के अनुसार – सर्वे से पता चला कि 74.4% उत्तरदाता कभी न कभी साइबर अपराध के शिकार हुए है।

चित्र संख्या 07

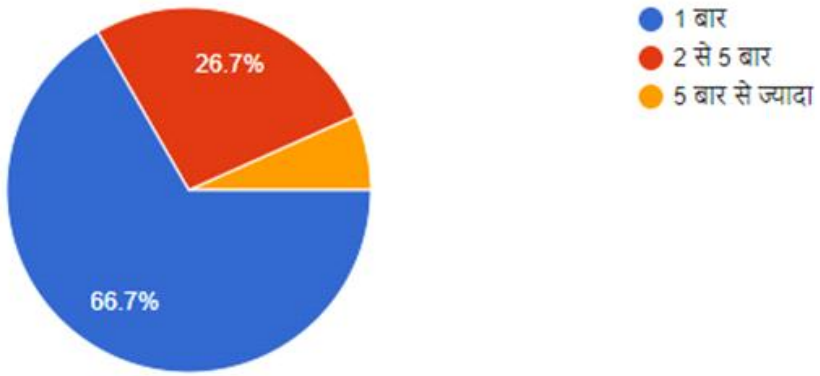

चित्र संख्या 07 के अनुसार – 66.7% उत्तरदाता 1 बार, 26. 7% उत्तरदाता 2 से 5 बार और 6. 7% उत्तरदाता 5 से ज्यादा बार साइबर अपराध के शिकार हुए है।

चित्र संख्या 08

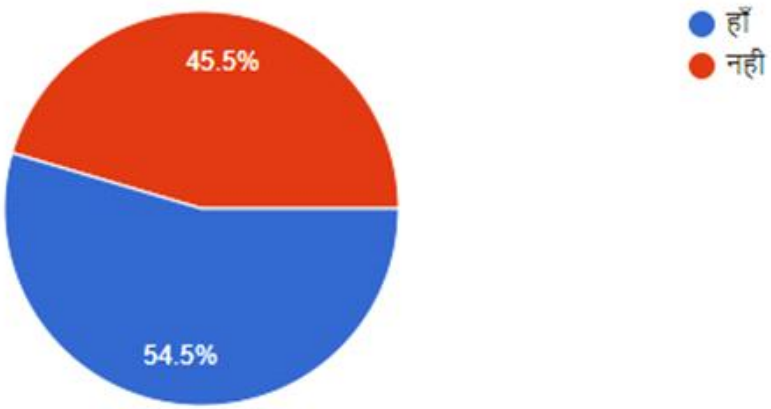

चित्र संख्या 08 के अनुसार – 54.5% उत्तरदाता के मित्र/परिवार के सदस्य साइबर अपराध के शिकार कभी हैं।

चित्र संख्या 09

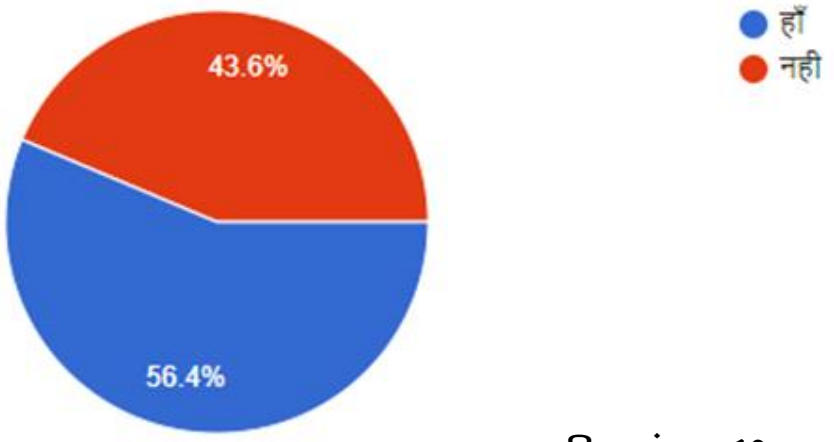

चित्र संख्या 09 के अनुसार – 56.4% उत्तरदाता साइबर अपराध से सम्बन्धित साइबर कानून के बारे में जानते हैं।

चित्र संख्या 10

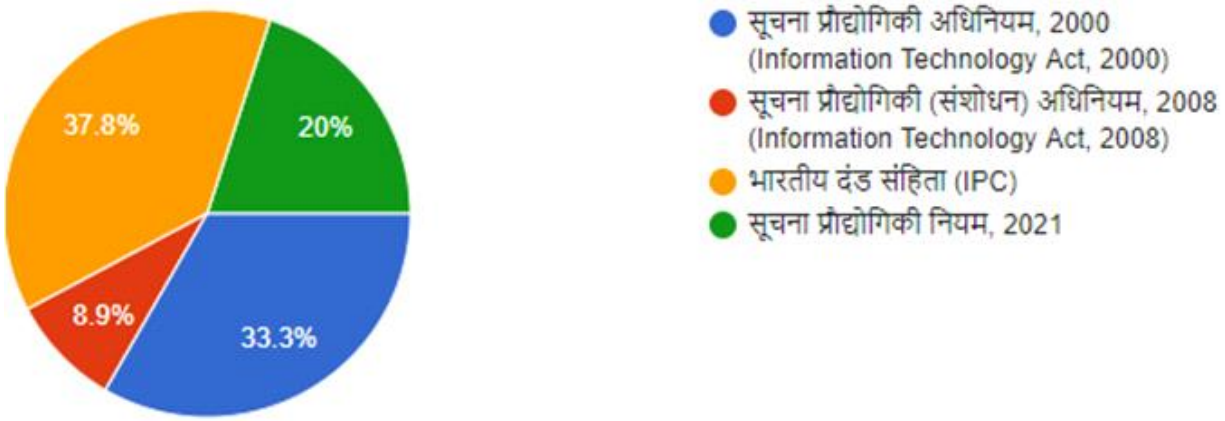

– **चित्र संख्या 10 के अनुसार** – 33.3% उत्तरदाता सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000, 8.9% उत्तरदाता सूचना प्रौद्योगिकी (संशोधन) अधिनियम, 2008, 37.8% उत्तरदाता भारतीय दंड संहिता (IPC), 20% उत्तरदाता सूचना प्रौद्योगिकी नियम, 2021 के बारे में जानते है।

चित्र संख्या 11

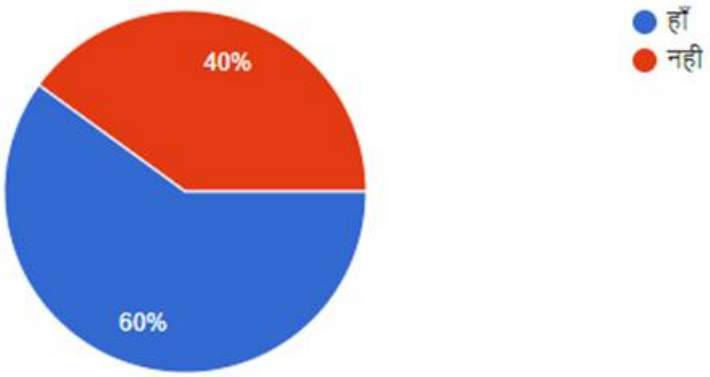

– **चित्र संख्या 11 के अनुसार** – 60% उत्तरदाता का कहना है कि उनको सरकार की तरफ से साइबर अपराध से सम्बन्धित बचने के उपाय बताये जाते है।

विद्यार्थियों द्वारा अपनाई गई साइबर क्राइम की सावधानियां :-

चित्र संख्या 12

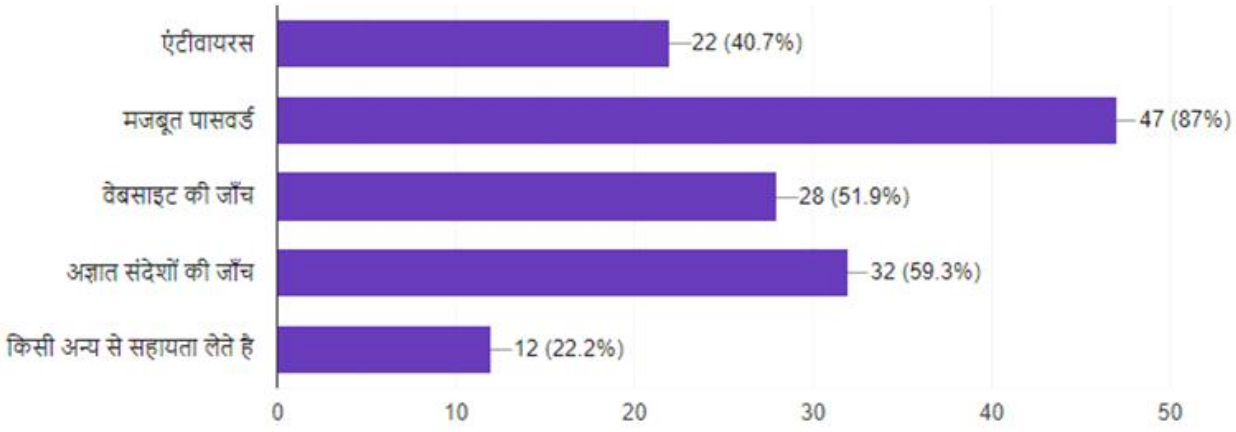

- **चित्र संख्या 12 के अनुसार** – साइबर अपराध से बचने के लिए 40.7% उत्तरदाता एंटी वायरस, 87% उत्तरदाता मजबूत पासवर्ड, 51.9% उत्तरदाता वेबसाइट की जाँच, 59.3% उत्तरदाता अज्ञात संदेशों की जांच, 22. 2% उत्तरदाता किसी अन्य से सहायता लेते है।

चित्र संख्या 13

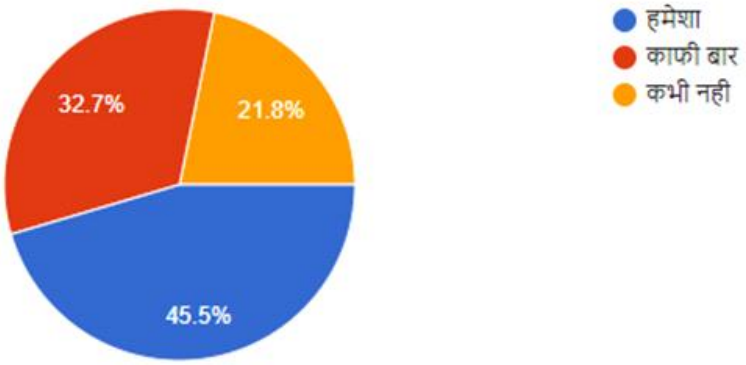

- **चित्र संख्या 13 के अनुसार** – सोशल मीडिया पर आने वाले लिंक को 45.5% उत्तरदाता हमेशा जाँच करते है, 32.7% उत्तरदाता काफी बार जाँच करते है, 21.8% उत्तरदाता कभी भी जांच नहीं करते।

चित्र संख्या 14

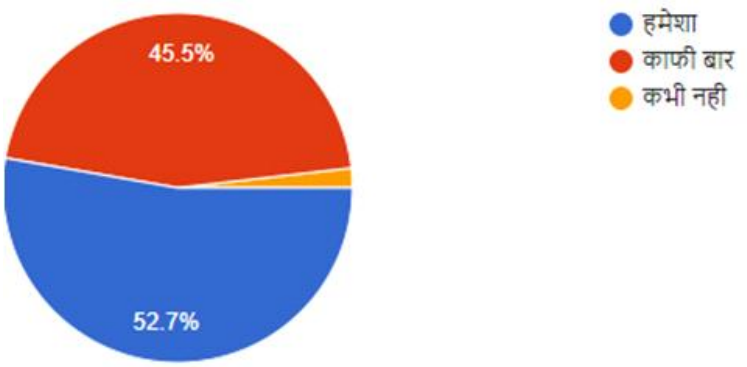

- **चित्र संख्या 14 के अनुसार** – 52.7% उत्तरदाता साइबर अपराध के बारे में पता चलने पर क्या आप दूसरों को इस बारे में हमेशा बताते है, 45.5% उत्तरदाता काफी बार, 1.8% उत्तरदाता कभी भी इस बारे में नहीं बताते।

चित्र संख्या 15

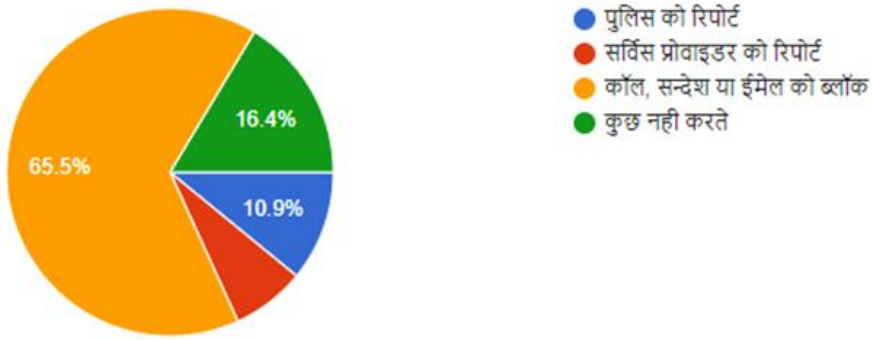

– **चित्र संख्या 15 के अनुसार** – किसी स्पैम या फ्रॉड कॉल, सन्देश या ईमेल मिलने पे 10.9% उत्तरदाता पुलिस को रिपोर्ट करते है, 7.3% सर्विस प्रोवाइडर को रिपोर्ट करते है, 65.5% कॉल/सन्देश या ईमेल को ब्लॉक करते है, 16.4% कुछ नहीं करते।

मीडिया शिक्षा और साइबर अपराध :–

चित्र संख्या 16

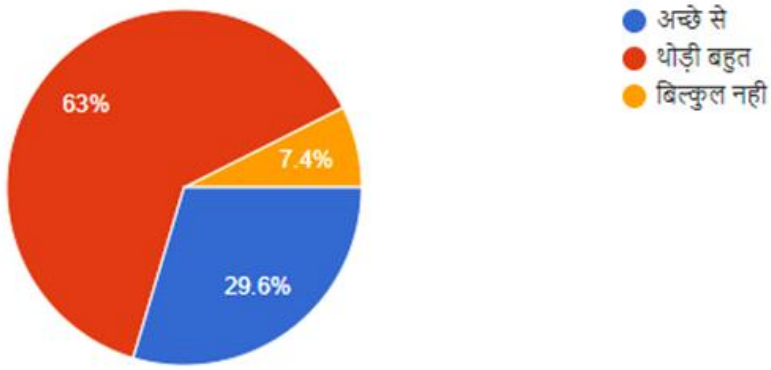

चित्र संख्या 16 के अनुसार – 63% उत्तरदाता का मानना है कि उनको मीडिया शिक्षा से साइबर क्राइम के बारे में अच्छे से जानकारी मिली है, 29.6% उत्तरदाता का मानना है कि थोड़ी बहुत, 7.4% उत्तरदाता का मानना है कि बिल्कुल नहीं जानकारी नहीं मिली।

चित्र संख्या 17

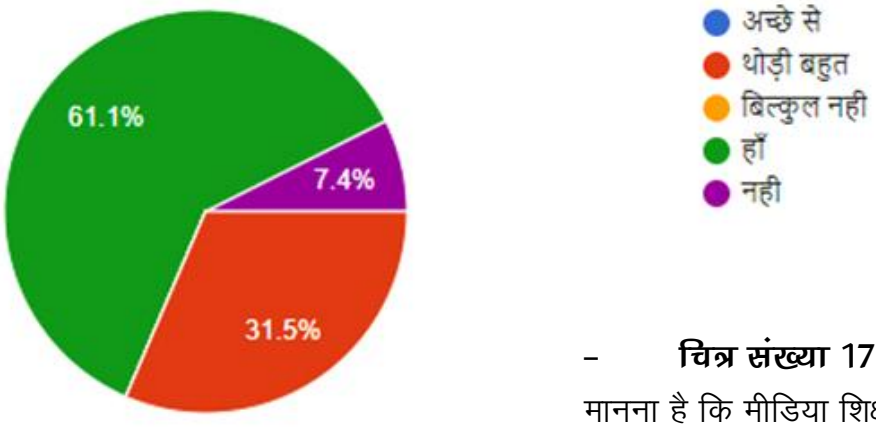

– **चित्र संख्या 17 के अनुसार** – 61.1% उत्तरदाता का मानना है कि मीडिया शिक्षा, साइबर क्राइम के बारे में जागरूक करने में अच्छे से सहायक है, 31.5% उत्तरदाता का मानना है कि थोड़ी बहुत, 7.4% उत्तरदाता का मानना है कि बिल्कुल भी सहायक नहीं है।

चित्र संख्या 18

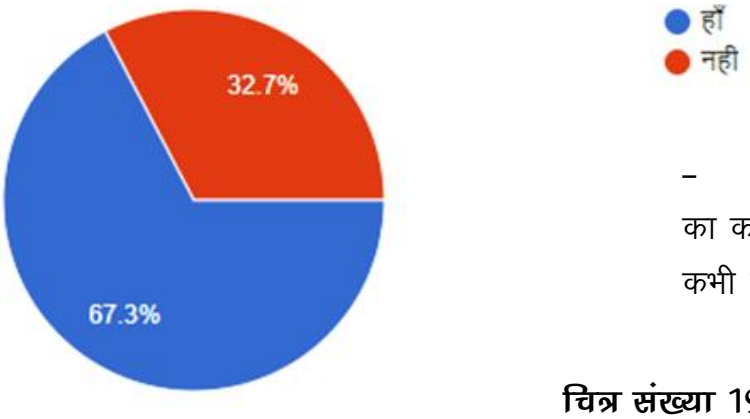

– **चित्र संख्या 18 के अनुसार** – 67.3% उत्तरदाता का कहना है कि वो मीडिया शिक्षा की वजह से आप कभी साइबर अपराध का शिकार होने से बचे है।

चित्र संख्या 19

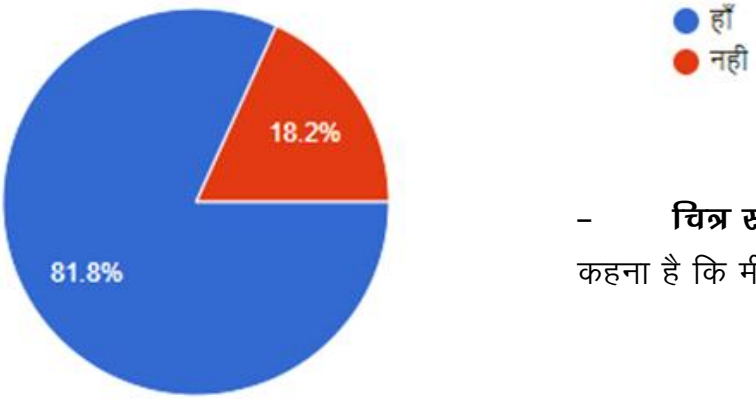

– **चित्र संख्या 19 के अनुसार** – 81.8% उत्तरदाता का कहना है कि मीडिया शिक्षा साइबर अपराध को कम करती है।

चित्र संख्या 20

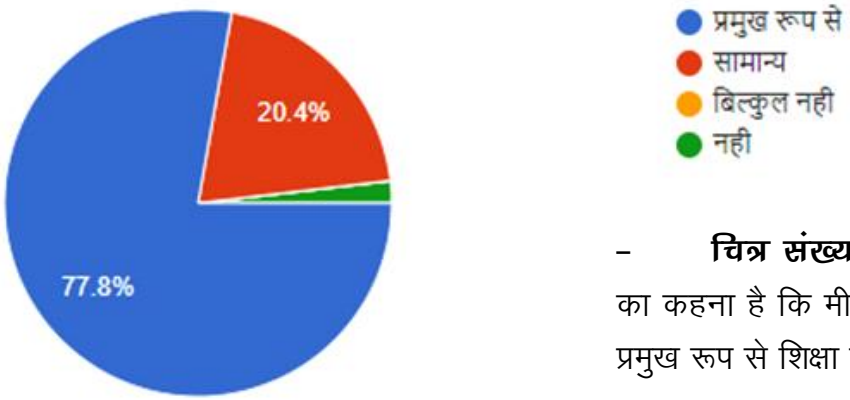

– **चित्र संख्या 20 के अनुसार** – 77.8% उत्तरदाता का कहना है कि मीडिया शिक्षा में साइबर अपराध के बारे में प्रमुख रूप से शिक्षा देने की आवश्यकता है, 20.4% उत्तरदाता सामान्य, 1.9% उत्तरदाता बिल्कुल नहीं इसकी जरूरत महसूस नहीं करते।

निष्कर्ष :–

इस शोध पत्र के जरिये हमें मीडिया शिक्षार्थियों, इन्टरनेट और साइबर क्राइम के बीच में काफी महत्वपूर्ण आकड़े देखने को मिले साथ ही हमे मीडिया छात्रों के बीच साइबर क्राइम से जुड़े विभिन्न दृष्टिकोणों के बारे

में पता चला है।

शोध से पता चलता है 32.7 प्रतिशत उत्तरदाता इंटरनेट पर 6 घंटे से ज्यादा समय खर्च करते हैं यानी आजकल युवा ज्यादातर समय इंटरनेट पर ही गुजारते है ये उनके स्वास्थ्य और साइबर अपराध के प्रति एक गंभीर विषय हो सकता है। शोध में अच्छी बात ये देखने की मिली कि 83.6 प्रतिशत उत्तरदाता शिक्षा के लिए और 80 प्रतिशत उत्तरदाता जानकारी के लिए के लिए इंटरनेट का इस्तेमाल करते है। जब हमने साइबर क्राइम जागरूकता पर सवाल किए तो पता चला की अधिकांश उपयोग कर्ता ही साइबर अपराध के बारे में जानते हैं। साइबर अपराध में पैसे की धोखाधड़ी और सोशल मीडिया पेहैक होने के बारे में ज्यादा जानते है।

मीडिया शिक्षा होने के बावजूद पाया गया कि 66.7 प्रतिशत उत्तरदाता कम से कम 1 बार साइबर अपराध के शिकार हुए है यानि मीडिया छात्रों को साइबर अपराध के बारे में सामान्य जानकारी होने के बाद भी वो इसके शिकार हो जाते है। ऐसे में सामान्य व्यक्ति के शिकार होने के संभावना बहुत ज्यादा हो जाती है। शोध में पता चला कि केवल 56.4 प्रतिशत उत्तरदाता ही साइबर अपराध से सम्बन्धित साइबर कानून के बारे में जानते हैं इसलिए मीडिया शिक्षा में साइबर कानून के बारे में और अधिक जागरूक करने की आवश्यकता है। ज्यादातर विद्यार्थी अन्य साइबर कानून की अपेक्षा भारतीय दंड संहिता (IPC) के बारे में ज्यादा जानते है इसलिए हमें मीडिया शिक्षा में साइबर कानून के बारे में भी प्रमुखता से बताना चाहिए।

मीडिया शिक्षा और साइबर क्राइम की बात करे तो शोध में 63 प्रतिशत उत्तरदाता का मानना है कि उनको मीडिया शिक्षा से साइबर क्राइम के बारे में अच्छे से जानकारी मिली है और 61.1 प्रतिशत उत्तरदाता का मानना है कि मीडिया शिक्षा, साइबर क्राइम के बारे में जागरूक करने में अच्छे से सहायक है यानी काफी हद तक मीडिया शिक्षा साइबर अपराध के प्रति जागरूकता लाने में सहायक है। 67.3 प्रतिशत उत्तरदाता मीडिया शिक्षा की वजह से आप कभी साइबर अपराध का शिकार होने से बचे है। 81.8 प्रतिशत उत्तरदाता का कहना है कि मीडिया शिक्षा साइबर अपराध को कम करती है। यानी हम कह सकते है कि मीडिया शिक्षा साइबर क्राइम जागरूकता में अहम भूमिका निभा रही है। मीडिया शिक्षा की वजह से साइबर क्राइम के प्रति सकारात्मक परिणाम देखने को मिले है। अगर मीडिया शिक्षा और साइबर क्राइम के बारे में आमजन को बताया जाये तो समाज में साइबर अपराध कम हो सकता है। इसके साथ ही हमें एक बात पे और ध्यान देने की आवश्यकता है 77.8 प्रतिशत उत्तरदाता का कहना है कि मीडिया शिक्षा में साइबर अपराध के बारे में और अधिक प्रमुख रूप से शिक्षा देने की आवश्यकता है। सरकार और विभिन्न शैक्षिक संस्थानों को मीडिया शिक्षा में साइबर अपराध के बारे में और प्रमुखता से बताना चाहिए। शोध से हमें पता चला है कि मीडिया शिक्षा और साइबर क्राइम एक दूसरे से काफी जुड़े हुए है। मीडिया शिक्षा द्वारा लोगो को साइबर अपराध के बारे में जागरूक करके काफी हद तक साइबर अपराध कम किये जा सकते है।

शोध सीमा :-

हर शोध कार्य में कुछ न कुछ सीमाएं रह जाती है। इस शोध कार्य में भी कुछ सीमाएं है। ये शोध केवल मीडिया विद्यार्थियों के लिए ही किया गया था। आज हमें साइबर क्राइम जागरूकता के बारे में समाज के सभी तरह के युवाओं पर शोधकरने की आवश्यकता है। इस शोध के लिए एक ही कॉलेज के विद्यार्थियों का चयन किया है अगर और अधिक विद्यार्थियों का चुनाव किया जाये तो और अच्छे परिणाम आ सकते है। इस शोध में

सभी तरह के साइबर अपराधों और सावधानियों के बारे में नहीं बताया गया। आज हर छोटे से बच्चे से लेकर बढ़े इन्सान तक हर कोई साइबर अपराध का शिकार हो रहा है लेकिन यह शोध मुझे रूप से 18 साल से 30 साल तक के युवाओं पर केन्द्रित है।

सन्दर्भ :–

1. Times Now Digital. (2021, February 5). तीन वर्षों में 93,000 से अधिक साइबर अपराध : जैसे–जैसे इंटरनेट की पहुंच बढ़ती है, क्या भारत साइबर अपराध से निपटने के लिए और अधिक कर सकता है? Retrieved from https://www.timesnownews.com/india/article/over&93000&cybercrimes&in&three& years& as&internet &penetration&rises&can&india&do&more&to&combat&cybercrime/716251
2. मीडिया साक्षरता सप्ताह (2010, नवंबर)। मीडिया क्या है शिक्षा? Medialiteracy.ca (मीडिया साक्षरता के लिए वेबसाइट सप्ताह)। 19 सितंबर 2010 को http://www-medialiteracyweek-ca/hi/101_whatis.ht उसे लिया गया।
3. यूनेस्को (1999). संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक वैज्ञानिक सांस्कृतिक संगठन यूनेस्को को संबोधित सिफारिश, पीपी 273–274.
4. ए, एस., के.जे, ए., एस, बी, और जयश्री (2018), कोच्चि के विशेष संदर्भ में कॉलेज के छात्रों में साइबर अपराध के प्रति जागरूकता का अध्ययन : इंटर नेशनल जर्नल ऑफ पुरे एंड एप्लाइड मैथमेटिक्स, 119(16), 1353–1360.
5. कुम्बर, एम. और गावेकर, वी., (2017) रोकथाम और इसके प्रभाव के लिए साइबर अपराध जागरूकता का एक अध्ययन : इंजीनियरिंग और अनुसंधान में हाल के रुझानों का अंतर्राष्ट्रीय जर्नल (3) 240–246
6. खानजेड, अफरोजुल्ला, (2018), एमएसडब्ल्यू छात्रों के बीच साइबर अपराध जागरूकता, स्कूल ऑफ सोशल वर्क, बेंगलुरु : जर्नल ऑफ फॉरेंसिक साइंसेज एंड क्रिमिनल इन्वेस्टिगेशन, 9.10.19080/ JFSCI-2018-09-555757-
7. लस्टेड, डी. (1991). मीडिया स्टडीज बुक : ए गाइड फॉरटीचर्स लंदन : कॉमेडिया बुक (पीपी.1–11)
8. राठौड़, पी., और पोद्दार, ए.बी. (2019). मेडिकल छात्रों में साइबर सुरक्षा के प्रति जागरूकता का अध्ययन। जर्नल ऑफ फॉरेंसिक मेडिसिन (13) 196–198.
9. चौधरी, मेनका. (2020). साइबर क्राइम अवेयरनेस अमंग हायर एजुकेशन स्टूडेंट फ्रॉम हरियाणा विद रिस्पेक्टटो वेरियस डेमोग्राफिक वेरिएबल : पालआर्च की जर्नल ऑफ आर्कियोलॉजी ऑफ इजिप्ट/इजिप्टोलॉजी, 17. 14454–14461
10. Begum, Farzana. (2020), Beware of cyber crime with awareness -A Review : International Journal of Science and Healthcare Research. 4. 135.
11. बेगम, फरजाना. (2020), बिवेयर ऑफ साइबर क्राइम विथ अवेयरनेस– एरिव्यू : इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइंस एंड हेल्थ केयर रिसर्च इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइंस एंड हेल्थ केयर रिसर्च, 4. 135.
12. रिसर्च इन एजुकेशन, इन्गल वुडक्लिफ, एन0जे0, प्रिन्टिस हाल, नई दिल्ली, 1997
13. गूगल फॉर्म क्या है? इसका उपयोग कैसे करे? (2021, February 20). Retrieved from https://tinyurl.com/ yz2ayn4x
14. शर्मा, जी. एल. (2020). भारत में साइबर सुरक्षा – सामाजिक एवं वैधानिक विवेचन, पुलिस विज्ञान, 142, 20.

15. बाजपेयी, पी. (2020, 7 अक्टूबर). साइबर अपराध कितने प्रकार के होते है? Retrieved from https://www.lawyerguruji.com/2017/12/cyber&crime&ke&prakar&various&kind&of.html
16. उपाध्याय, एस. (2019, November 21). साइबर अपराध के प्रमुख प्रकार क्या हैं और कैसे दिया जाता है इन्हें अंजाम? : 'साइबर कानून श्रृंखला' (भाग 2). Live Law Hindi. https://hindi.livelaw.in/know&the&law/cyber&crime&series&-149991
17. चौधरी, यू. (2017, June 16). साइबर स्टॉकिंग. Retrieved from https://ecyberlawyer.blogspot.com/2017/06/blog&post_32.html
18. टीम, ल. ह. (2010, January 27). इंटरनेट पर सेक्स परोसना अब नहीं होगा आसान, Retrieved from https://www.livehindustan.com/news/article1&story&93320.html
19 कानून और अधिकार : सोशल मीडिया के अपराध और कानून, (2016, August 4). Dainik Bhaskar. tinyurl.com/5k3vmr82
20. सूचना प्रौद्योगिकी नियम, 2021. (2021, March 15). Drishti IAS. tinyurl.com/vcsbt4nf

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 3-4
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 85-88

Opportunities for Exchanging Sports Batting Management Skills in Career of Youth Cricketers in Bikaner Region

Jitender Singh, Researcher
Dr. Braj Kishor Choudhary, Supervisor
Tantia University, Sriganganagar, Rajasthan.

Introduction :-

Sports Management is a noticeably new concept in India taught in only a few institutes at some stage in the Sports and video games are critical for the holistic improvement of the man or woman. Today, sports activities of several types are performed at some point of international locations and with the passage of time large portions of cash, call, reputation, glamour and media hobby have grown to be an important part of any pastime.

Sports manage is the study of making plans, supervising and organizing numerous sporting sports like international and domestic tournaments for cricket, soccer, hockey, golf, and numerous specific video games.

Cricket :-

In the game of cricket effectiveness of the player's ability to act quickly andaccurately depends upon how efficient the visual system can process theinformation.Cricket may be a bat-and-ball amusement played between two bunches of 11 playerson a field, at the central point of which may be a rectangular 22-yard long pitch. One bunchbats, endeavouring to score anything number keeps running as may well be anticipatedbeneath the circumstances whereas the other gather bowls and areas, endeavouring to dismissthe batsmen and along these lines constrain the runs scored by the batting bunch. A run isscored by the striking batsman hitting the ball with his bat, hustling to the distant edge of thepitch and reaching the wrinkle there without being removed.

Sports Management Skills :-

Before searching at any Situation as a profession preference, it is often useful to assess your talent set and person kind. The kinds of capabilities required for dealing with Sports Finance are

manifestly exclusive from those required to deal with Sports Operations. But we ought to actually enlist a few abilities important for Sports Management in famous.

Batting :-

Batsmen stay at the crease for as long as possible,sometimes for periods of over four hours. In order to occupy thisposition, a good batsman must be able to stay focused, havegood ball/eye skills, and have the strength and fitness to makeeach played shot productive. On the other hand, power comesfrom having a strong core, abdominal mid-section and theability to generate explosive upper body actions. While on theother, the kinetic energy of the ball may be used to score fourruns by the batsman by a slight change in direction.

Methodology :-

Researcher has used survey method to get the information of the present circumstances.

Sample :-

The present study will be based on 100youth cricketers who were the participants of inter-collegiate level tournament at Bikaner Region's rural and urban area.Samples will be collected from various colleges from Bikaner Region. Researcher collects data from various colleges for raw score. Total sample are 100 in which 50 rural area's player and 50 urban area's players. The selected players must have shown their ability at district level tournaments several times.

Data Collection :-

To achieve the purpose of the present study, 100youth cricketers studying in college were selected assubjects. They were between the age group of 19-24 years. The selectedsubjects were given opportunities for exchanging their sports management skill performance through pre-test and post-test. A pre-test is taken before exchange their skill and after a post-test has been taken. Researcher collects data from pre-test and post-test of youth cricketers in help of questionnaire.

Tool :-

The researchers have used Rating Scale for Evaluation of exchanging Sports Management Skills in Cricket for this study.

Objective :-

To find out the significant difference in opportunities for exchanging sports batting management skills in career of youth cricketers in Bikaner region.

Analysis of Data :-

Table showing thesignificantdifference in opportunities for exchanging sports batting management skills in career of youth cricketers in Bikaner region.

Table – 1 (Batting)

Source of Variation	N	Mean	S.D.	Df.	t-value	Level of significance
Pre Test	100	38.97	3.43	198	2.48	NS*
Post Test	100	40.20	3.59			

*Not Significant at 0.01 levels

Table 1- Significant difference in opportunities for exchanging sports batting management skills in career of youth cricketers in Bikaner region-

Description – In order to compare the batting performance among pre-test and post-testof youth cricketer's independent t-test was applied. To determine the significancedissimilarity among means of score of pre-test & post-test of youth cricketers, the level of significance was set at (0.01).

Mean score of pre-test & post-test of youth cricketer's 38.97 and 40.20 with a SD values are 3.43 and 3.59 respectively. Since the considered t value is 2.48 which are less than tabulated t value.So it was not important at (0.01) level. It possibly accomplished so as to there is no significantdifference in opportunities for exchanging sports batting management skills in career of youth cricketers in Bikaner region.

Table 1 reveals that the significant difference in opportunities for exchanging sports batting management skillsin career of youth cricketers among pre-test and post-test was 2.48 which are less than the requiredvalue.

So the null hypothesis, "There is no significant difference in opportunities for exchanging sports batting management skills in career of youth cricketers in Bikaner region" was accepted.

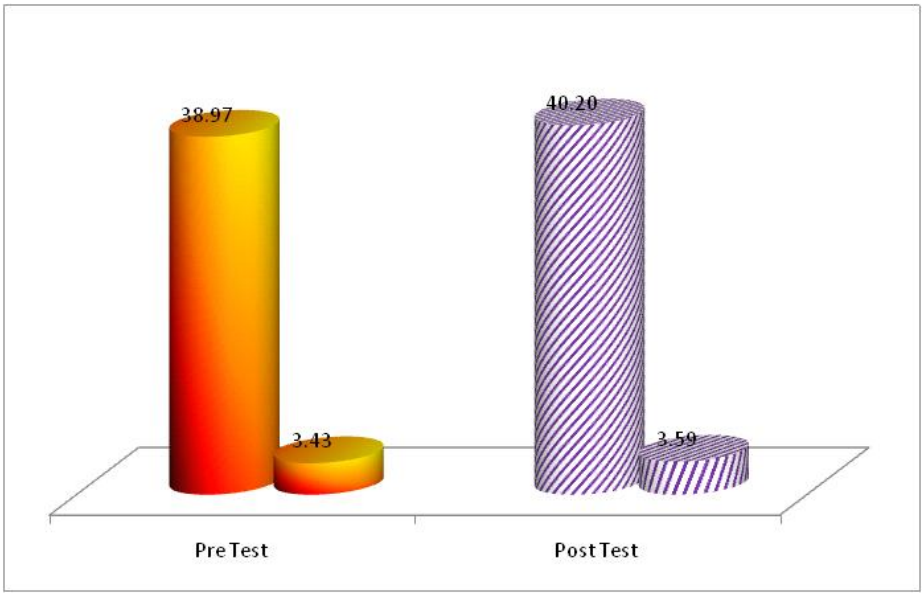

Result :-

There is no significant difference in opportunities for exchanging sports batting management skills in career of youth cricketers in Bikaner region.

Conclusion :-

The current research work was undertaken into the opportunities for exchanging sports management skills in career of youth cricketers in Bikaner region. Therefore it now becomes essential at this stage of the research work to see whether the hypothesis were rejected or accepted on the basis of data analyzed.

References :-

1. Amarnath, Mohinder (1996), Learn to Play Good Cricket. New Delhi : UBS Publishers Distribution Ltd.
2. Barrow Harold M., Man and Movement (1983), Principles of Physical Education. Third Edition, Lea aFebiger, Philadelphia, 1983, P-167.
3. Bright Jagat S. (1973), Right Way to Play Cricket, (Delhi: Universal Publication), p. 6.
4. Bucher Charles A. (1983), Foundation of Physical Education and Sports, Edition 9th, The Mosby Co. St. Louis, Toronto, P - 7.
5. Cogan, K., and Bryant. J. Cratty (1986),The self-management skills of women gymnasts. Didactica Dellomovimento, 12. p. 45-47.
6. Conrad Frederick A. (2012), "A Comparison of the Effect of Skill Practice Sessions on Vertical Jumping Ability" Completed Research in Health, Physical Education and Recreation 8 : 96
7. Elizabeth S. Bressan (2003), Effects of visual skills training, vision coaching and sports vision dynamics on the performance of a sport skill, African Journal forPhysical, Health Education, Recreation and Dance, Volume 9, No 1.
8. Felshin Jan (1972),More than Movement, an Introduction to Physical Education, (Philadelphis Lea and Febiger), p. 37.
9. Gill Manmeet, et.al., (2010), "Comparative Study of Physical Fitness Components of Rural and Urban Female Students of Punjabi University, Patiala", Anthropologist, 12(1): 17-21
10. Helsen, W.F., &Starkes, J.L. (1999),A multidimensional approach to skilled perception and performance in sport. Applied Cognitive Psychology, 13: 1–27.

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 89-95

Mughal State Formation, Ideology and Military Tactics as part of Imperialism against Rajput powers in Medieval Times : A brief Survey

Dr. Meghna Sharma

Assistant Professor in History, Maharaja Ganga Singh University, Bikaner, Rajasthan

Abstract :-

Mughal system was different from the *'absolute state'* that emerged in Europe in the fifteenth century as there was a large degree of decentralization within the Mughal Empire. Cohn shows that several layers of political organization were incorporated into the system, the imperial, the secondary, the regional and local.

Persian historiography of the period of Akbar leaves certain gaps in analysing the policy perspectives of Akbar- their motivation and the resultant reaction. The sultans of Delhi had attempted a forward policy towards the Rajput powers but during the three centuries of their rule none of the Rajput states was under the prolonged sway of the sultans for more than a dozen years. This was despite the introduction of new military technology in the shape of the introduction of the iron stirrup, iron horse-shoe and the cross-bow which made the Turkish cavalry very effective.

It will be my endeavour in this paper to examine Akbar's policy towards Mewar as a part of his larger policy towards Rajput states in the context of Mughal State formation in the sixteenth century and the strategy evolved, on the diplomatic and military front by Maharana Pratap to counter Mughal imperialism in all its blatant form. It is perhaps in the fitness of things to assert that the Mewar's response to the imperialistic designs was as calculated as the policy formulated by Akbar and the success of Pratap can only be measured by examining his prolonged struggle comprehensively in the right perspective.

Thus Haldighati becomes a temporary setback in the long protracted struggle and to the lasting credit of Pratap can be attributed the fact that, not withstanding all pious and self-righteous utterances of Persian historians, he exposed the imperialist designs of the Mughal for what they were worth.

Keywords : Absolute State, Decentralisation, Imperialism, Cavalry, Strategy, Haldighati

The scenario confronted by Maharana Pratap upon his enthronement in 1572 depended a lot on the interpretation of Mughal aims and objectives in Rajasthan. Did other rulers of Rajasthan share the same perspective of Akbar's policy as Pratap? What did Akbar stand for?

What were his professed aims and objectives in Rajasthan? Another issue which merits attention is that did the other Rajput rulers share Pratap perception of Akbar's aims in Rajasthan?

Eminent scholars like Prof. R. P. Tripathi[1] and Dr. A. L. Srivastava[2] placed great credence to Mughal Historiography as propounded by Abul Fazal and came to the conclusion that Pratap's continued hostility towards Akbar was an impediment in the noble aim of the latter in unifying the nation politically and culturally.[3] As has been stated often enough Abul Fazl had aligned himself to Akbar intellectually as well as practically and hence advocated the wielding of unreserved and unrestricted power by Akbar.[4]

Abul Fazal termed the various shifts or innovations in Akbar's religious and administrative policies as the gradual unfolding of the personality of Akbar and his transition to the status of a 'superman' or 'super being' whose policies were based on 'Sulh-i-kul' and universal kingship.[5]

It will be my endeavour in this paper to examine Akbar's policy towards Mewar as a part of his larger policy towards Rajput states in the context of Mughal State formation in the sixteenth century and the strategy evolved, on the diplomatic and military front by Maharana Pratap to counter Mughal imperialism in all its blatant form. It is perhaps in the fitness of things to assert that the Mewar's response to the imperialistic designs was as calculated as the policy formulated by Akbar and the success of Pratap can only be measured by examining his prolonged struggle in 360 degree perspective. Thus Haldighati becomes a temporary setback in the long protracted struggle and to the lasting credit of Pratap can be attributed the fact that, not withstanding all pious and self-righteous utterances of Persian historians, he exposed the imperialist designs of the Mughal for what they were.

Besides Rajasthan and Malwa were transit areas for Gujarat and were vital for the safety of trade routes between Delhi and Gujarat ports.[6]

Shail Mayaram[7] had argued that the Mughal Empire was not a Muslim state in the sense that it was grounded in ruling groups and lineages, not necessarily Muslim.

As Dr. Satish Chandra has very rightly pointed out that the Mughal state was dependent for its very survival on the support of the chieftains and zamindars, a large number of them being Rajputs. Many of them were appointed as Amirs. Besides holding their previous territory (*watan*) they were also granted *Mansabs* and received *Jagirs*. They were given important positions in the army, administration and local land revenue system and became a part of the ruling Mughal class.[8]

Mughal system was different from the *'absolute state'* that emerged in Europe in the fifteenth century as there was a large degree of decentralization within the Mughal Empire.[9] Cohn shows that several layers of political organization were incorporated into the system, the imperial, the secondary, the regional and local.[10]

Reflections on the Mughal State Formation : Horizontal and vertical command structure

The imperial state was essentially established by the Mughals who brought an end to the Turko-Afghan rule in India. During the sultanate period the Rajput states were never under prolonged and direct control of the Sultans of Delhi whose own power base occasionally shrank

to the size of a provincial kingdom. The first half of the sixteenth century saw the Afghans and Mughals occupying the centre-stage in north India. Babur had a taste of Rajput power when he faced the formidable Rajput confederacy at Khanwa (1527) led by the redoubtable Rana Sangram Singh of Mewar. Babur's victory was largely an outcome of new military strategy and tactics.[11]

Babur had the foresight and wisdom not to attempt the annexation of Mewar to the fledging Mughal Empire; subsequently Mewar witnessed a decline in its fortunes in the reign of Maharana Udai Singh (1540-1572 A.D). It was then the turn of Sur ruler Sher Shah to subdue the kingdom of Marwar after a hard fought engagement at Sumel (1544 A.D). The premature death of Sher Shah permitted Maldev to reassert himself in Marwar. Akbar must have learnt his lessons well and realised early enough that in North India, the most potent threat was posed by the Rajputs as evident from the highly difficult situation faced at Khanwa and Sumel.

Furthermore the victories did not yield long-term gains as the Rajput polity remained intact in spite of them. In recent times a lot of scholastic vigour has been expanded in trying to analyse the factors – ideological and military – which influenced the Mughal policy towards imperialism, the geo-political perspective, demands of counter balancing the nobility or trade concerns which dictated the thrust of Mughal policy towards major Rajput powers in the second half of the sixteenth century?

Persian historiography of the period of Akbar leaves certain gaps in analysing the policy perspectives of Akbar- their motivation and the resultant reaction.[12] The sultans of Delhi had attempted a forward policy towards the Rajput powers but during the three centuries of their rules none of the Rajput states was under the prolonged sway of the sultans for more than a dozen years. This was despite the introduction of new military technology in the shape of the introduction of the iron stirrup, iron horse-shoe and the cross-bow which made the Turkish cavalry very effective.[13]

It has been thus argued that the Mughal Empire did not boast of a horizontal relationship between rulers and the nobles or the higher ranking Mansabdars, instead there was a vertical command structure.[14] The stability of the Mughal Empire especially since the commencement of the latter half of the sixteenth century, was based on the induction of local elites so that their co-operation could be obtained, thus a major chunk of the Mughal empire was effectively ruled and administrated by local rulers and chiefs incorporated into the command structure. Thus in many provinces the Mughal government did not touch the peasant directly.

Mughal Policy towards Mewar --- A Reappraisal :

Akbar's policy towards Mewar cannot be separated from the ambit of his policy towards Rajput states as a whole. At the outset one does not dispute the fact that Akbar's efforts to induct the Rajput chiefs into the Mughal power structure marked a departure from the policy of his predecessors. [15]

Religion could not be the primary factor but its importance as a supplementary factor cannot be overlooked. Thus it can be safely observed that Akbar's early measures of tolerance and the abolition of the pilgrimage tax and Jiziya in the early 1560's were of little immediate

significance.[16] Significantly enough this would not explain the harsh Fathnam—i—Chittor proclaimed after the fall of Chittor[17] in 1568 and the reimposition if Jiziya[18] in 1575. Thus we are forced to seek the motives behind Akbar's attitude towards Rajputs elsewhere.

The rout of Humayun at the hands of Sher Shah and his subsequent expulsion must have forced the Mughals to do some rethinking about their stability in India. The instrument of power which was now sought to be strengthened was the nobility which was showing alarming signs of fissiparous tendencies with the dominant racial groups---the Iranis and the Turannis accounting for nearly 84% of the nobility.[19]

In the Post Bairam Khan period Rajputs and Indian Muslims (mostly Shaikhzandas), both of local origin, joined imperial service. This period also coincided with the rapid rise in the increase in the relative strength of the Irani nobles and the fading away of the Turani complexion of the nobility as well as the erosion of the Chagatai traditions and customs of state organization.[20]

That these marriages did not continue beyond the time of Farrukhsiyar (who married the Jodhpur Maharaja Ajit Singh) is an indication of the fact that in the early eighteenth century, in the changed circumstances, such marriages and alliances had outlived their utility.

Having asserted that the Mughal State was based on the principle of hegemony and was a conquering state, due to the support of Mansabdars, we witness the consolidation of this policy from the time of Akbar onwards. It was the attempt to strengthen the system of Mansabdari and to prop up the support of the local Zamindars that the Rajput appeared as the natural allies.

The recovery in Mewar was ushered in the time of Maharana Udai Singh who not only united the fragmented nobility of Mewar but also consolidated and expanded his power in the neighbouring environs of Mewar. Nainsi informs us that when Udai Singh came in conflict with Haji Khan Afghan in 1556-57, he led 10 'desppatis' in the battlefield.[21]

On the authority of Amarkavya his empire spread over Phulia, Gangarar, Bhainroad, Barod, Begun, Badnor and Khichiwara.[22] Abul Fazal informs us that the area of Sarkar Chittor was 40 Kuruh by 30 Kuruh and the strength of Rana's army was 16,000 cavalry and 40,000 infantry.[23] The Rana's influence was increasingly being felt in the neighbouring states of Hadoti and Sirohi which was sufficient cause for alarm for Akbar specially in the case of Hadoti.[24]

The Rana's decision to provide shelter to Baz Bahadur when the latter was driven out of Malwa (1562-1563) was another instance of the Mughal emperor's displeasure with Mewar.[25] The sack of Chittor in 1568 yielded the desired results for Akbar.

Prior to 1562 only the Kachhwahas of Amber and the rulers of Merta had succumbed to the *'forward foreign policy'* of the Mughals but subsequently Ranthambhor (May, 1569) Jodhpur, Bikaner and Jaisalmer (all Nov. 1570) submitted before Akbar.[26]

Post Haldighati Phase : People's War and Change in Military Strategy :

It does not bear repetition to dwell deep into the causes for the Rajput military setback at Haldighati. It is quite another issue as to what Akbar gained after Haldighati. His desired objectives remained unfulfilled. Witness his annoyance with both Mansingh and Asaf Khan

immediately afterwards.[27] one does not treat victorious generals thus. Even Abul Fazal was grudging in his estimate of the victory at Haldighati.[28]

Akbar's inability to force or induct the Maharana into the fold of his nobility must have been very disturbing to the emperor. After all this was the main point of the whole military exercise against Pratap. Inability to subdue the Maharana raised a question mark on the future of Mughal relations with states like Banswara, Dungarpur, Idar, Sirohi, Jalore, Bundi etc. For these states Pratap had filled the vacuum of leadership in Rajasthan which cried for the charismatic leader not seen since the time of Maharana Sangram Singh. Of these states Banswara and Dungarpur always remained under military pacts with Pratap.[29]

What could Akbar do after Haldighati ? The following assertion of M. Athar merits attention :*"One need not be a follower of Marx's Theory of The Unchanged-Ableness of traditional Indian society to accept the fact that there was no conscious spirit of technological innovations (and scientific enquiry) here and in the Islamic east to match the spirit already motivating a large part of European society in the seventeenth century."* [30]

"India saw no conscious attempt to design new artillery weapons; making of muskets and guns remained a mere craft, with no touch of science." [31] Irwin had rightly observed that even in the eighteenth century Mughal continued to rely upon sword wielding cavalry when its days were long over. The debacle in Karnal in 1739 at the hands of Nadir Shah such was primarily due to the latter's possession of better artillery, imitated from the Europeans and the Ottomans.[32]

The Rajput army technologically speaking was not radically different from the Mughal army in the second half of the sixteenth century. The scales were more often than not titled on the basis of better marshalling of resources. It was here that Pratap proved a better strategist than Akbar during the decade after Haldighati.

As already observed before, Akbar could not afford a protracted and prolonged war in Mewar after 1576. Pratap had come to reflect the aspirations not only of the nobility but of the masses as well. Thus, Pratap's continuance of the struggle against the Mughals was mandate from the masses for the cause—the cause being not Pratap's but Mewar's independence. Dr. G. N. Sharma has aptly put it *"for twenty years, Pratap played an important part upon the political stage, and represented with remarkable fidelity the views of the great majority of his subject."* [33]

The Bhils, past masters in the arts of Guerilla Warfare, added a new dimension to the state of warfare in this region. They forced the Mughals to lift the siege of Gogunda in September, 1576. from that time of October, 1577 Gogunda continued to change hands between that two contending forces—a situation created by ceaseless efforts of the Bhils and much to the discomfort of the Mughals, after the fall of Gogunda, Pratap switched his base of operations to Kumbhalgarh. When in 1578 the Mughals occupied it, Pratap affected another strategic retreat[34] because of ceaseless Mughal activity along the entire western tract upto 1580A.D and the restriction of Pratap to the western hilly defile of Mewar, the guerilla warfare was escalated with encouraging results. *"Guerillas never win battles, but their enemies do loose battles…..Guerrillas must operate among people like fish in water with that freedom and right temperature."*[36]

The loss of Kumbhalgarh made Pratap realise that options were running out for him in western Mewar and made him seek security south-wards. This was another strategic move aimed at isolating the Mughals in the interior of Mewar once they were drawn in the vertex of the interior of Mewar. This move brought the Maharana closer to his allies Narain Das of Idar and Rao Surtan of Sirohi.[37] The move southwards was also significant as the two southern neighbouring kingdoms of Banswara and Dungarpur were increasingly being entrenched in the imperial camp.[39] The move to set up a new capital at Chavand was also inspired by strategic considerations like its proximity to the Sirohi border where two vital trade routes passed. One was the route from Agra to Ahmedabad and the other was Delhi to Ahmedabad.[38]

In conclusion we can sum up that Akbar's forward foreign policy towards Rajput states was based on imperialistic considerations primarily and aimed at strengthening his support base by extension of his nobility to make it broad based. Pratap's counter strategy was based on ground realities and an understanding of Akbar's aims. Pratap was more successful in marshalling the resources at his disposal.

Notes and References :

1. Tripathi, R. P ; ***Rise and Fall of the Mughal Empire*** , Third Edition, Allahabad, 1963, pp. 323-325.
2. Srivastava, A. L ; ***Akbar the Great*** , Second Edition, Agra, 1972, Vol-I, p. 205.
3. Ibid.
4. Mukhiya, Harbans ; ***Historians and Historiography During the Region of Akbar***, pp. 78-84.
5. M. Athar Ali ; ***Sulh-i-Kul and the Religious Ideas of Akbar in "Studies in History"*** Vol-IV, No.1, 1982.
6. For a more recent exposition of Akbar's policy towards the Rajput principalities see S. Inayat A. Zaidi's ***Akbar and the Rajput Principalities : Integration into The Empire,*** in Irfan Habib, ed. Akbar and His India (Oxford University Press), pp. 15-24.
7. Mayaram, Shail; ***Mughal State Formation : The Mewati Counter Perspective,*** Third International Conference on Rajasthan, 14-18 Dec. 1994, Jaipur.
8. See Satish Chandra, ***Medieval India,*** Delhi : Macmillan, 1982, p.62
9. (1) Susane Ruodph and Ilyod I. Rudolph ; ***The Subcontinental Empire and the Regional Kingdom in India State Formation in Region and Nation in India.*** Ed. Paul Wallace, New Delhi : Oxford and IBH, 1985, Pp. 40-59,
   (2) Op. Cit. Shail Mayaram ; pp. 6-8.
10. ***Ibid.***
11. Sharma, Dr. G. N, ; ***Mewar and the Mughal Emperors,*** Agra, 1962, pp. 20-25.
12. Mukhia, Harbans ; ***Historians and Historiography During the Period of Akbar***, New Delhi, Vikas Publishing House, 1976, pp. 170-173.
13. Habib, Irfan ; ***Changes in Technology in Medieval India in Symposium on Technology and Society***, Indian History Congress, Waltier, 1979, pp. NA
14. Heesterman, ***The Inner Conflict of Tradition : Essays in Indian Ritual, Kingship and Society*** Chicago University of Chicago Press 1970, pp. 166-167.
15. Iqtidar Alam Khan, ; ***The Nobility under Akbar and the Development of this Religious Policy, 1560-80,*** Journal of Royal Asiatic Society (JRASO, 1960), pp. 29-36.
16. M. Athar Ali ; ***Sulh-i-Kul and the Religious Ideas of Akbar in "*** Studies in History", Vol-IV, No. I, 1982.
17. Khan, I.A; Op.cit, p. 32.
18. ***Ibid.***
19. Abul Fazl, ***Akbarnama***, Vol-I, pp.342.

20. Khan, I.A; Op.cit, pp. 32-34.
21. ***Nainsi-ri-Khyat,*** Vol-I, pp. 59-60.
22. Amarkarya Test Quoted in ***Virvinod*** Vol-II, p. 87.
23. ***Ain-i-Akbari***, Vol-II, pp. 128-29.
24. ***Nainsi-ri-Khyat***, Vol-I, pp. 60, 127.
25. ***Akbarnama***, Vol-II, pp. 69.
26. Al-Badayuni, ***Muntakhab-ut-Tawarikh,*** Saeed International (Regd.) New Delhi 1990 Edition, Vol-II, pp. 49-50, 63, 161-162, 179-180.
27. (1) ***Nizamuddin, Elliot and Dowson,*** Vol-V, pp. 400-01.
(2) ***Badayuni,*** pp. 259-260.
28. ***Akbarnama***, pp. 246.
29. Sharma, Sriram ; ***Maharana Pratap,*** pp. 128.
30. M. Athar Ali ; ***The Passing of Empire : The Mughal Case,*** In Modern Asian Studies 9, 3(1975), pp. 385-396.
31. ***Ibid.***
32. Irwin, Later Mughals II, p. 352.
33. Sharma, G. N ; ***Mewar and the Mughal Emperors***, p. 105.
34. ***Virvinod,*** Part-II, pp. 157-58.
35. Mankekar, Dr ; ***Mewar Saga***, New Delhi, 1976, pp. 78-79.
36. ***Akbarnama,*** Vol-III, pp. 268-269.
37. ***Virvinod***, Vol-II, pp. 156-57.
38. (1) Delact ; ***De Imperico Magri Mogolis*** (English Translation), J. S. Hayland, Bombay, 1926, pp. 64-66.
(2) Powlett ; ***Gazetteer of Bikaner State,*** Appendix-1.

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 3-4
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 96-102

मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानियों में मनोवैज्ञानिक संदर्भ

अफीफा फातिमा शेक
शोधार्थी, वेल्स इंस्टीट्यूट आफ साइंस एंड टेक्नोलॉजी एडवांस स्टडीज (विस्टास), पल्लवरम, चेन्नई।
डॉ. पूर्णिमा श्रीनिवासन, असिस्टेंट प्रोफेसर एंड हेड, डिपार्टमेंट ऑफ हिन्दी
वेल्स इंस्टीट्यूट आफ साइंस एंड टेक्नोलॉजी एडवांस स्टडीज (विस्टास), पल्लवरम, चेन्नई।

शोध-सार :-

प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य मनीषा कुलश्रेष्ठ की कहानियों में मनोवैज्ञानिक संदर्भ को रेखांकित करना है। मनोविज्ञान का संबंध मानव मन से है। अतः मनोविज्ञान द्वारा मानव मन के विविध व्यवहारों, क्रियाकलापों तथा आचरण का विस्तृत रूप से अध्ययन किया जाता है। जिस प्रकार मनोविज्ञान मानव जीवन से जुड़ा हुआ है उसी प्रकार साहित्य भी जीवन का सबसे महत्वपूर्ण अंग हैं। मनुष्य ने अपने मस्तिष्क के बल पर संसार के हर क्षेत्र में अपनी प्रतिभा के दर्शन कराएँ हैं। उसने धर्म तथा अध्यात्म के साथ–साथ विज्ञान के क्षेत्र में भी छलांग लगाई है। आज का युग विज्ञान का युग कहा जाता है। विज्ञान को अपनाने के कारण मनुष्य को जीवन के प्रति देखने का वैज्ञानिक नजरिया प्राप्त हुआ। इसी वैज्ञानिक दृष्टिकोण के कारण मनुष्य ने अपने आंतरिक तथा बाह्य सभी बातों में क्रांति का बीज बोया। लेखिका के साहित्य का आधार व्यक्ति का अंतर जगत है। लेखिका अपनी कहानियों के माध्यम से मनुष्य के मनोभावों पर प्रकाश डालने की कोशिश करती नजर आती है।

बीज शब्द :- मनोविज्ञान, साहित्य, मानसिक संघर्ष, तनाव, एकाकीपन, अहं भावना, हीनताग्रंथि, जिजीविषा, कुंठित यौनेच्छा, काम–भाव।

मूल आलेख :-

मनोविज्ञान का अर्थ है मन का विज्ञान जिसके द्वारा मन के भावों का ज्ञान अर्जित किया जा सके। मनोविज्ञान से अभिप्राय व्यक्ति के अन्तस्तल में उठने वाले क्रिया–कलापों के विश्लेषण से है। लेखक लाला शुक्ल के अनुसार "मनोविज्ञान मन की चेतन तथा अचेतन क्रियाओं का अध्ययन अपरोक्ष अनुभूति व बाह्य क्रियाओं के निरीक्षण द्वारा करता है।"[1] स्वतंत्रोत्तर भारतीय जन–जीवन को यांत्रिकी और विज्ञान ने पर्याप्त प्रभावित किया है। विज्ञान एवं यांत्रिकी ने समाज के सभी मानदंड प्रभावित किए। यह परिवर्तन जितना सामाजिक स्तर पर देखा गया है उतना ही वह मानसिक स्तर पर पर्याप्त रूप में लक्षित होता है। "यांत्रिकी के इस निविड वन में सतत वेगमय, जीवन की अवकाश हीनता, निरर्थकता, अजनबीपन, संत्रास, घुटन, मृत्यु बोध और अनेक कुंठाएँ तथा विकृतियां पैदा हो रही है। रचनात्मक विलगाव व्यक्ति के धरातल पर उन समस्याओं का हल है जो समाज ने

व्यक्ति के चारों और पैदा कर दी है।"[2]

साहित्य के वर्तमान युग को मनोविज्ञान युग नाम दिया गया है। मनोविज्ञान ऐसा विषय है, जिसने साहित्य को प्रभावित किया है। साहित्यकारों ने इससे मानव जीवन को पूर्णतया खोलकर व्यक्त करने में सफलता प्राप्त की है और व्यक्ति की सामाजिक वास्तविकता को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। वर्तमान साहित्य अब केवल प्रेम का राग नहीं अलापता, उसके बाह्य सौंदर्य को नहीं अंकता, बल्कि जीवन में उलझी हुई समस्याओं पर भी विचार करता है उसको सुलझाने की चेष्टा मनोवैज्ञानिक ढंग से करता है।

मनीषा कुलश्रेष्ठ द्वारा लिखित 'मि. वॉलरस' नामक कहानी में मानसिक संघर्ष को केतकी के द्वारा अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है। बाह्य संघर्ष की अपेक्षा अंतर्मन का संघर्ष अत्यंत महत्वपूर्ण है। जब अंतर्मन में परस्पर विरोधी इच्छाएँ एक साथ सामने आती है तब मानसिक संघर्ष मन में पैदा होता है। संघर्ष केवल मनःस्तितियों का या मनःस्तितियों से परिस्थितियों का ही नहीं होता बल्कि परिस्थितियों से परिस्थितियों का भी होता है। कहानी की पात्र केतकी जो मि. वॉलरस से प्रेम करती है और वह मि. वॉलरस के साथ गृहस्थी जीवन जीने के सपने देखती है और सोचती है कि वह मुझे और इस बच्चे को अपनाएगा या नहीं! उसके अंतर्मन में उठने वाले इन्हीं प्रश्नों ने उसे संघर्षपूर्ण स्थिति में लाकर खड़ा कर दिया है। वह स्वयं के इस प्रेम के बारे में परिवार वालों को भी नहीं बताती है। मि. वॉलरस के प्रेम को लेकर केतकी के मन में संघर्ष उमड़ता है। जब मि. वॉलरस का मित्र अजीत केतकी से पूछता हैं "आर यू अफ्रेड़ आफ वेटर लाइफ? कभी सोचा है कि तुम्हें क्या चाहिए अपनी जिंदगी से।"[3]

अतः अजीत के इस तरह के प्रश्न पूछने पर उसकी भावनाओं को ठेस पहुंचती है और वह संघर्षपूर्ण स्थिति में आ जाती है। उसके इस अवचेतन मन के मानसिक संघर्ष को प्रकट करती हुई वह कहती है कि "मुझे नहीं मालूम इस जिंदगी से क्या चाहिए.... एण्ड हाउ द 'फ' जस्ट गॉट सो फार! तुम कहते हो वक्त बदलता है, लेकिन यह तो वैसे ही रुका हुआ है। मैं भी वैसी ही हूं थकी हुई, ठंडे पैर लिए, अकेली नपुंसक गुस्से भरी! तुम्हारे दोस्त मि. वॉलरस जिन से मैं प्रेम करती हूँ आते हैं, चले जाते हैं, मैं वही की वही, स्क्रीन के आगे अकेली। कब बदलेगी अजीत यह जिंदगी।"[4] अतः केतकी उस संघर्षपूर्ण स्थिति में फंस गई है और उस नैतिक–अनैतिक के प्रश्नों ने उसे घेरे रखा है। अब वह इस संघर्ष से बाहर निकलना चाहती है स्वयं के लिए और पुत्र के लिए। इस जाल में स्वयं को इससे उभारकर अजीत के साथ इस दुख को बांटती हुई वह उसके मन में मि. वॉलरस के प्रति जो एक सोच थी उससे स्वयं को बाहर निकालकर कुशल जीवन व्यतीत करना चाहती है।

'अधूरी तस्वीरें' नामक कहानी में मानसिक संघर्ष की समस्या को कथाकार ने उजागर किया है। कहानी में सशक्त मानसिक संघर्ष के प्रत्यक्ष रूप को प्रस्तुत पंक्तियों के द्वारा परिभाषित किया गया है जो इस तरह से है "जिस संभावना को हम सोचते डरते हैं..... वह संभव तो हो ही नहीं सकती ना! मैं कल ही यहां से चला जाऊंगा। आज रात डिनर पर मामा जी से क्या कहूंगा? शायद मना कर दूंगा?"[5] अतः पात्र भावनाओं में उलझा है उसका अंतर्मन नीला को पसंद करता है, परंतु रिश्तों की नैतिकता के कारणवश वह नीला को नहीं अपना सकता। वह अनिर्णय की स्थिति में है कि वह नीला की बुआ सुधा को रिश्ते के लिए हां कर दे या ना। पात्र अविनाश का अवचेतन मन नीला के प्रति आकर्षित है परंतु नैतिकता कुछ और ही है वह नीला के प्रति आकर्षण के कारण सुधा को शादी के लिए हाँ और ना के प्रश्न में उलझा रहता है। खुद के सहज आकर्षण को स्वीकार

करता हुआ अविनाश कहता है "नीला! तुम मुझे प्रिय हो, तुम्हारी निश्छलता मुझे पसंद है।"[6] स्पष्टतः अविनाश नीला के प्रति आकर्षित है किंतु इस आकर्षण में नैतिकता का प्रश्न आते ही वह नीला से कहता है "कुछ नहीं नीला..... मैं जा रहा हूँ यहाँ से, यही उचित होगा तुम्हारे और मेरे लिए। मुझमें साहस नहीं है, एक साथ बहुत लोगों का विश्वास तोड़ने का।"[7] अतः अविनाश ऐसी परिस्थिति में आकर फंस जाता है जहां उसका चेतन और अवचेतन मन भी उसका साथ नहीं देते। अविनाश बुरी तरह से मानसिक संघर्ष की स्थिति में फंस कर रह जाता है और इसका क्रोध वह नीला पर विरोध दिखाता हुआ उस पर झल्लाता हुआ कहता है "क्या हुआ? बेवकूफ लड़की वो खत जो छोड़ आई थी, उसके हाथ पड़ जाता तो? मुझे नहीं करनी शादी–वादी! कहां फस गया मैं।"8

मानसिक संघर्ष की स्थिति में व्यक्ति चिंतनशील एवं विवेकशीलता की एकाग्रता से मनोचित भावों को दूसरों तक संप्रेषित नहीं करता। वरन चिंताग्रस्त होकर आत्म मंथन और आत्मसंलाप करने लगता है, वह मंत्रमुग्ध सा होता हुआ, जीवन की सच्चाईयों को प्रकट करने हेतु चिंतनशील होता है। जब व्यक्ति सही और गलत के प्रश्नों में उलझ जाता है, या चेतन और अवचेतन मन में उलझाव पूर्ण स्थिति पाता है, तो नैतिक–अनैतिकता के प्रश्न मन में उभरने लगते हैं। व्यक्ति उलझन में रहता है कि चेतन मन ठीक है या अवचेतन मन। एक उलझाव पूर्ण स्थिति उसके सामने होती है।

तनाव आज के समय की गंभीर समस्या बन गई है। तनाव व्यक्ति को पूर्ण रूप से रोगयुक्त बना देता है। तनाव व्यक्ति के मस्तिष्क में घर कर जाता है और वह तनाव से उभर नहीं पाता। बृहत हिंदी कोश की तनाव के विषय में मान्यता है "चिंता आदि की मानसिक स्थितियों में शरीर की शिराओं, धमनियों, स्नायु में होने वाला खिंचाव तनाव कहलाता है।"[9] अर्थात तनाव का संबंध मन से जोड़ा जाता है। 'एडोनिस का रक्त और लिली के फूल' कहानी में मेजर जो बॉर्डर पर घायल होता है हॉस्पिटल में तनाव से ग्रस्त कहता है "मैं अपने भीतर यह जहाज क्रेश होते देख रहा था। बिना तारों की इस रात में, जैसे चांद अकेला छूट गया था। मैं टूट कर रोना चाहता था, मुझे लग रहा है कि तुम मुझे भूल गई हो, मेरे यूनिट वाले और यह देश मुझे भूल गया है मैं कैसे बताऊं कि इस गर्म रात में जंग में घायल 70–80 लोग मेरे आस–पास कराह रहे हैं, मैं नहीं जानता कितनों की यह आखिरी रात है, घायल हर कोई है, देह पर ही नहीं, मन पर भी घाव है तुम मुझे फोन क्यों नहीं करती हो? कोई पत्र भी नहीं।"[10] इस तरह मेजर लड़ाई में अकेला एवं तनाव से ग्रस्त हो जाता है और इस अकेलेपन में अपनों को याद करता है। अतः लेखिका ने मेजर के तनाव को उसके दर्द भरे शब्दों में बयां किया है। व्यक्ति के जीवन में तनाव उसे जड़ बना देता है।

आज के मशीनी युग में एकाकीपन को बढ़ावा मिला है। पहले कई लोग इकट्ठे मिलकर खेतों में काम करते थे अब उसकी जगह मशीनों ने ले ली है। गांव एवं शहर का हर सदस्य अब रोजी–रोटी की तलाश में बिखर कर रह गया है। आज व्यक्ति की सबसे बड़ी ट्रेजड़ी उसका एकाकीपन बनकर रह गया है यही एकाकीपन ही उसकी नियति बनकर सबसे ज्यादा उस पर हावी होती जा रही है। जिसने उसको समाज व परिवार से भिन्न कर दिया है। 'कुछ भी तो रुमानी नहीं' कहानी में नायक स्वयं की जिंदगी से ऊब चुका है क्योंकि "उसे बचपन से ही माता–पिता का प्यार नहीं मिला। माता ने उसे छोड़कर सन्यास ले लिया, पिता ने उसे स्वयं से दूर स्कूल में डाल दिया।"[11] परिणाम स्वरुप वह स्वयं को अकेला अनुभव करने लगा। जीवन के प्रति अकेलेपन और ऊब से बचने के लिए वह रोमान्स भरपूर कहानियाँ लिखने लगा। अतएव लेखिका ने अकेलेपन को केवल संपूर्ण व्यक्ति

में ही नहीं बल्कि एक बच्चे में उस अकेलेपन को प्रदर्शित किया है। यह एकाकीपन बच्चे के मन पर भी गहरा प्रभाव छोड़ता है जिसे लेखिका ने इस कहानी के पात्र के माध्यम से उसके बचपन के उस एकाकीपन को अभिव्यक्त किया है।

प्रत्येक व्यक्ति में अहम की प्रवृत्ति सहज रूप से विद्यमान रहती है। "अहं मनुष्य की जन्मजात सहज स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है किसी में अधिक किसी में कम किंतु किसी भी जाति, वंश, वर्ण और आयु का होना अहं की प्रवृत्ति किसी ना किसी मात्रा में अवश्य विद्यमान रहती है। सामाजिक परिस्थितियां, परिवेश इस अहम भाव को बराबर प्रभावित करता रहता है, अहं भाव स्वयं में तब तक बुराई की श्रेणी में नहीं आता, जब तक कि वह स्वाभिमान के स्तर पर रहता है। अहं भाव जब अत्यधिक विकसित हो जाता है, तब घातक सिद्ध होता है।"[12] 'टिटहरी' कहानी में गीति के माध्यम से अहं की समस्या को वर्णित किया गया है, इसी अहम के कारण गीति और अनिरुद्ध के बीच तनाव की लकीर उत्पन्न हो जाती है। गीति अनिरुद्ध से लड़ाई के पश्चात सोचती हुई कहती है "बस बहुत हो गया! अब यहां नहीं रहना।"[13] स्पष्टता इन शब्दों से गीति में आए अहं की झलक नजर आ रही है इस तनाव का और उसके अहं का अनिरुद्ध पर कोई असर नहीं पड़ता यह देख वह अनिरुद्ध से और खींज जाती है और उसके भीतर अहंकार भाव अधिक आ जाता है और इस स्थिति में वह उस व्यक्ति के साथ जीवन व्यतीत नहीं करना चाहती है। धीरे–धीरे उसके भीतर अहं की भावना विस्तार रूप लेने लगती है।

स्वयं के मन से सवाल करती कहती है "क्या इसी आदमी के लिए वह स्वयं का ब्राइट, कैरियर छोड़कर हाउस वाइफ बानी बैठी है।"[14] स्पस्टतः गीति के भीतर अहं कि यह भावना विस्तार रूप लेती जा रही है इसी अहं के कारण अन्तर्मन से बात करती हुई कहती है "पर क्यों रोए वह? नहीं क्यों कमजोर हो उसके सामने?"[15] अतः लेखिका ने अहं जैसी समस्या को समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है कि अहं व्यक्ति को इतना लाचार एवं उच्चता का प्रदर्शन करने वाला बना देता है कि वह ना चाहते हुए भी अहं भाव को ही श्रेष्ठ समझने लगता है। इसी अहं के कारण व्यक्ति मन ही मन स्वयं को सबसे भिन्न समझने का प्रदर्शन करता नजर आता है। स्वयं के आगे वह दूसरों को तुच्छ समझता है। उसमें यह भावना सर्वोपरि हो जाती है। अहं में डूबे व्यक्ति की यही भावना उसे एक दिन ले डूबती है।

हीनताग्रंथि सभी व्यक्तियों में पाई जाती है। इसका कारण समाज, परिवार या व्यक्ति स्वयं हो सकता है। जीवन में जब व्यक्ति निराश होता है तो उसका संघर्षमय जीवन होता है। व्यक्ति में किसी भी भाव की कमी के कारण हीनता का भाव उत्पन्न होता है। हीन ग्रंथि के कारण व्यक्ति स्वयं को असहाय और असुरक्षित महसूस करता है। ऐसे में वह किसी विषम स्थिति का सामना नहीं कर सकता। आज के भौतिक प्रधान वातावरण में व्यक्ति कृत्रिम व्यवहार के लिए बाधित है क्योंकि साधनों के अभाव में वह बनावटीपन में उन साधनों की पूर्ति करने का प्रयास करता है। जब वह अभाव की पूर्ति करने में असफल हो जाता है तो हीनग्रंथि उसके मानस पटल पर विकसित होने लगती है। राजकुमार राय ने हीनताग्रंथि के विषय में कहा है कि "जब व्यक्ति किसी कार्य में असफल हो जाते हैं और कोई दूसरा अभीष्ट भी या तो उपलब्ध अथवा वाँछनीय नहीं होता, तो प्रतिक्रिया स्वरूप व्यक्ति में निःसहायावस्था अथवा अपर्याप्तता के भाव विकसित हो जाते है। संवेगात्मक दृष्टी से इस मानसिक तनावपूर्ण अवस्था को है हीनभावना ग्रंथि कहते हैं। यह ग्रंथि प्रमुख रूप से उन्हीं व्यक्तियों में विकसित होती है, जो स्वयं की व्यक्तिगत अक्षमता तथा दोषों को ही जीवन से अभीष्टों को प्राप्त कर सकने में स्वयं की असफलता

का कारण मानते है।"[16] 'बौनी होती परछाई' कहानी में हीनताग्रंथि को परिभाषित करने का प्रयास किया है। कहानी की पात्र रोहिणी को जब लड़के वाले देखने आते है। उस समय रोहिणी बी.एस.सी की शिक्षा ग्रहण कर रही थी, विवाह का सुनते ही उसके मन में सपने तैरने लगे थे, दिन–रात वह उन सपनों में खोई रहती थी। किंतु जब लड़के वाले उसे देखकर कहते है कि "लड़की जरा काली है।"[17] यह शब्द सुन रोहिणी के मन को पीड़ा हुई और तब रोहिणी ने इस विवाह नामक संस्था या प्रथा को व्यर्थ समझा था क्योंकि उसके भीतर हीनताग्रंथि का बीज उत्पन्न हो चुका था। तब से उसने जीवन में उच्चता प्रदर्शित करने की ठान ली थी। इस तरह रचनाकार ने रोहिणी के माध्यम से हीनभावना को व्यक्त किया है कि हीनभावना व्यक्ति को भीतर तक कचोट कर रख देती है। हीन व्यक्ति टूटकर रह जाता है।

जिजीविषा वास्तव में जीने की उत्कट लालसा या आशा है जो प्रत्येक इन्सान या प्राणी का स्थाई भाव है। "जिजीविषा समझौता नहीं करती, उसका यदि कोई समझौता है तो खुद अपने से। क्योंकि वह किसी लौकिक या परलौकिक शक्ति से प्राप्त नहीं होती, वह स्वतंत्र व्यक्ति में सिर्फ होती है। वह जिजीविषा ही निर्णय की शक्ति देती है और लोगों के संस्कारों में बैठी मृत्यु को भी छलकर अपने अस्तित्व का होना साबित करती है।"[18] जिंदगी को जीना इतना आसान नहीं। परंतु फिर भी जीने वाला प्रत्येक व्यक्ति जीने के रहस्यों को ढूंढता है और अकेलेपन के एहसास को भूलने का प्रयत्न करता है। स्वयं के इस अकेलेपन को दूसरों के साथ जोड़ देता है। इस तरह से व्यक्ति स्वयं के लिए जीता हुआ दूसरों के लिए भी जीने लगता है। 'रक्त की घाटी और शबे फितना' नामक कहानी में पात्र गुलवाशा की उस जिजीविषा को व्यक्त किया है जिसे वह त्याग चुकी थी जो उस आतंक में जीवन जीने के लिए विवश है। स्वयं के परिवार से दूर और वहां फैले उस आतंकवाद ने उसे भीतर तक खोखला कर दिया है। उसकी टूटती उम्मीदों को, और जीने की इच्छा को त्याग चुकी गुलवाशा कहती है "दुनिया के शोर ने मुझे जन्नत के ख्वाब से जगा दिया और इस दुनिया में आ गया। लेकिन यहां का हंगामा देखकर मैंने फिर आंखें बन्द कर ली और मौत की पनाह ली।"[19] इस तरह से गुलवाशा के भीतर छिपी उस न जीने की इच्छा को अभिव्यक्त किया है जो गुलवाशा देखती है।

यह जिजीविषा व्यक्ति को एक नई उम्मीद का मार्ग प्रशस्त करती है चाहे वह दुःखी जीवन में भी स्वयं के भीतर उस जीने की इच्छा को जगाए रखते हैं। इसी तरह कहानी कि अन्य पात्र लुबना जो इस आतंकवाद के पश्चात भी मन में पनप रही उम्मीदों के सहारे जीवन जी रही है। लुबना कहती है "मेरा दिल कहता है कि बेहतर समय आएगा और मैं उम्मीद करती हूँ कि तब तक मैं जीवित रहूँगी।"[20] स्पस्टतः लुबना जीने की इच्छा को मन में संजोए हुए है कि यह एक ना एक दिन अमन की वो लहर अवश्य आएगी जो वह भीतर दबाए हुए है। अतः कथाकार ने पात्रों के माध्यम से उनके भीतर उस जीजिविषा को अभिव्यक्त किया है और साथ ही ना जीने की इच्छा को भी व्यक्त किया है जो पात्र न चाहते हुए भी दुर्दम्य जिजीविषा को जीते है।

कुंठा वर्तमान समय में व्यक्ति के भाव–बोध का महत्वपूर्ण पहलू है। समाज में रहकर पूर्ण शिक्षा ग्रहण करने के बाद भी जब व्यक्ति स्वयं के अधिकारों से वंचित रह जाता है तो उसका शारीरिक विकास के साथ–साथ मानसिक विकास भी रुक जाता है। परिणाम स्वरूप व्यक्ति का जीवन कुंठित हो जाता है। यौनेच्छाओं में वृष्टि और यौन तनाव की स्थिति में वह कुंठित हो जाता है। अर्थात् जीवन में असहजता कुंठा को जन्म देती है। सामान्य अर्थ में कहा जा सकता है कि जीवन में आने वाली रुकावट ही कुंठा कहलाती है। कुंठा, व्यक्ति के

जीवन को नीरस एवं ऐकाकी बना देती है। जीवन में निराश भर देती है। कुंठित व्यक्ति जीवन में निरंतर निराशाओं से घिरा रहता है। वह स्वयं को इस गर्त से निकाल नहीं पाता और कुंठित यौनेच्छा का शिकार हो जाता है। इसी कुंठित यौनेच्छा को 'प्रेतकामना' कहानी में वर्णित किया है। 'प्रेत कामना' कहानी का पात्र प्रोफेसर जो सेवानिवृत होने के पश्चात अकेले हो जाते है तो वह स्वयं कि इस कुंठित यौनेच्छा को स्वयं की ही विद्यार्थी अणिमा से बांटते हुए कहते हैं "जीवन से छिटक गया हूँ अब३ वहीं से छूट गया है मेरा सिरा३ एक निरा प्रेत बनकर रह गया हूँ मैं।"[21] इस तरह से पात्र जो जीवन से निराश है और इसी निराशा एवं अकेलेपन ने उसके जीवन को ओर अधिक कुंठित बना दिया है। इसी कुंठा के कारण उनकी यौनेच्छा अणिमा को देख जागृत होने लगती है जो स्वयं के जीवन से निराश होकर कहीं खो गऐ थे। कुंठित व्यक्ति जब निराश एवं जीवन से हतभ्रत हो जाता है तो जीवन में नए साथी की आवश्यकता महसूस करने लगता है ओर स्वयं की यौनेच्छा की पूर्ति हेतु वह अन्य स्त्री से संबंध स्थापित करने लगता है। इसी तरह से इस कहानी के पात्र ने जीवन में अकेलेपन को दूर करने के लिए आणिमा से संबंध स्थापित किए।

भारतीय समाज में पति पत्नी को ही शारीरिक संबंध बनाने की मान्यता है। आधुनिक भारत में व्यक्ति की विचारधारा बदली है। नैतिक–अनैतिक का भेद धीरे–धीरे समाप्त होता जा रहा है। इसका कारण बौद्धिक विकास के साथ–साथ पश्चिमी सभ्यता के प्रति पूर्णतः आकर्षित है। काम–भाव आज विश्व के व्यक्ति की प्रधान समस्या है। कम–भाव की पूर्ति हेतु व्यक्ति रिश्तो–नतों तक को भूलता जा रहा है। समाज में आए दिन इन समस्या से नारी, लड़की सब इसका शिकार हो रही हैं। यह समस्या घटने की बजाय आज बढ़ती ही जा रही है। इस समस्या ने विकराल रूप धारण कर लिया है। महिलाएँ, बच्चियां, बूढ़े, जवान आज समाज में अपने को महफूज नहीं समझते हैं। 'फाँस' कहानी में काम–भाव कि भूख को मिटाने के लिए पिता अपनी बेटी को ही इस्तेमाल करने की कोशिश करता है। पिता द्वारा स्वयं की पुत्री के साथ कुकर्म करने में पिता को तनिक भी हिचक नहीं हुई। इस शर्मसार कुकर्म ने इस रिश्ते को तार–तार कर दिया है। स्वयं की काम भाव की आकृति को पूर्ण करने के लिए वह कहता है "शोर मत मचा ए छोरी कहकर चांटा रसीद कर दिया।"[22] इसी तरह पिता पुत्री के प्रति अनैतिकता स्पष्ट होती है जो एक बाप और बेटी के महान रिश्ते की परवाह किए बिना ही अपनी पुत्री को ही अपने काम–वासना का शिकार बनाता है। अतः लेखिका ने समाज में रह रहे व्यक्ति की मलीन सोच को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है। इसी मलीन एवं घिनौनी सोच के कारण आज समाज में इस तरह की घटनाएं अधिक होती है और काम भाव की इस भूख को पूर्ण करने के लिए पुरुष किसी भी हद तक जा सकता है।

निष्कर्ष :–

मनीषा कुलश्रेष्ठ आधुनिक समय की सशक्त एवं प्रतिभाशाली रचनाकारों में सर्वश्रेष्ठ हैं। कथा साहित्य में पहचान बनाने वाली युवा कथाकार मनीषा कुलश्रेष्ठ अपनी लेखनी के माध्यम से समाज में घटित हो रही विद्रूपताओं से आज के पाठक वर्ग को सच्चाईयों से रू–ब–रू कर लेखनी का परिचय दिया है। लेखिका के साहित्य का आधार व्यक्ति का अंतर्जगत है। लेखिका ने मानव के अतरंग जीवन यथार्थ, उसकी मानसिकता, तनाव, एकाकीपन, अहं भावना, हीनता ग्रंथि, कुंठित यौनेच्छा आदि मनोभावों को यथार्थ मर्मस्पर्शी ढंग से अभिव्यक्त किया है। उनकी कहानियों के पात्रों में मानसिक तनाव होने के पश्चात् भी जो जीने की इच्छा है वह अपार है। मानसिक तनाव होते हुए भी यह इन सब समस्याओं के बावजूद जीवन को नए तरीके एवं एक नई

उम्मीद के साथ जीवन जीना जानते है चाहे समाज उन्हें फ्रीक ही क्यों न कहे। लेकिन उनके भीतर पनपी उस उम्मीद में फ्रीक होकर जीना सबसे बड़ी संतुष्टि है।

सन्दर्भ :–

1. सरस्वती भल्ला, 'आधुनिक हिंदी कविता : विविध आयाम', अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर, दिल्ली, संस्करण–2008, पृ. 24
2. शेख रब्बानी जिलानी, 'स्वातंत्र्योत्तर' हिन्दी उपन्यासों में समाज परिवर्तन', विद्या विहार, कानपुर, संस्करण–2007, पृ. 145
3. मनीषा कुलश्रेष्ठ, 'रंग–रूप, रस–गंध–2', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2022, पृ. 540
4. वही, पृ. 540
5. मनीषा कुलश्रेष्ठ, 'रंग–रूप, रस–गंध–1', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2022, पृ. 281
6. वही, पृ. 282
7. वही, पृ. 282
8. वही, पृ. 283
9. कलिका प्रसाद, 'बृहद हिन्दी कोश', ज्ञानमण्डल, लि. वाराणसी, संस्करण–2020, पृ. 447
10. मनीषा कुलश्रेष्ठ, 'रंग–रूप, रस–गंध–2', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2022, पृ. 436
11. मनीषा कुलश्रेष्ठ, 'रंग–रूप, रस–गंध–1', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2022, पृ. 157
12. डॉ. कुमारी रीना, 'मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथा साहित्य में सामाजिक चेतना', वालनट पब्लिकेशन, भुवनेश्वर, संस्करण 2020, पृ. 185
13. मनीषा कुलश्रेष्ठ, 'रंग–रूप, रस–गंध–1', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2022, पृ. 63
14. मनीषा कुलश्रेष्ठ, 'रंग–रूप, रस–गंध–1', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2022, पृ. 65
15. राजकुमार राय, 'असामान्य मनोविज्ञान', प्रच्या प्रकाशन, वाराणसी, बिहार, संस्करण–1974, पृ. 33
16. मनीषा कुलश्रेष्ठ, 'रंग–रूप, रस–गंध–2', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2022, पृ. 472
17. मनीषा कुलश्रेष्ठ, 'रंग–रूप, रस–गंध–1', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2022, पृ. 39
18. डॉ. कुमारी रीना, 'मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथा साहित्य में सामाजिक चेतना', वालनट पब्लिकेशन, भुवनेश्वर, संस्करण 2020, पृ. 430
19. मनीषा कुलश्रेष्ठ, 'रंग–रूप, रस–गंध–2', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2022, पृ. 472
20. वही, पृ. 472
21. मनीषा कुलश्रेष्ठ, 'रंग–रूप, रस–गंध–1', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2022, पृ. 56
22. मनीषा कुलश्रेष्ठ, 'रंग–रूप, रस–गंध–2', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2022, पृ. 337

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 103-109

प्रवासी साहित्य और विमर्श के संदर्भ : उभरते मूलभूत प्रश्न

डॉ. सुशीला
सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, चौधरी बंसीलाल विश्वविधालय, भिवानी।

आदिकाल से ही मनुष्य जब कन्द–मूल खा करके, आखेट करके जठराग्नि को शांत करता था। तब से उसे भोजन और सुरक्षित स्थान की तलाश में इधर–उधर भटकना पड़ता था। मौसम के रुख को देखकर पशु–पक्षी भी सही स्थान की तलाश में एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रवास करने चले जाते हैं। प्रवास का अर्थ होता है, अपने घर से दूर कुछ समय के लिए या हमेशा के लिए चला जाना, कहीं अन्य स्थान पर जाकर बस जाना।

आज के संदर्भ में प्रवासी शब्द उन लोगों के लिए प्रयुक्त होता है, जो अपना देश छोड़कर एक बेहतर जीवन की तलाश में दूसरे देशों में जा बसे हैं। परिवर्तन प्रकृति का नियम है और 'प्रवास' परिवर्तन के सबसे जटिल अवयवों में से एक है। यह एक स्थान से दूसरे स्थान तक लोगों का चलन, बहुधा राजनीति सीमाओं से परे, स्थायी या अर्द्धस्थायी आवास लेने के लिए होता है, ताकि बेहतर आर्थिक अवसरों की प्राप्ति हो सके। प्रवासन के लिए पहले 'डायस्पोरा' शब्द का प्रचलन रहा है। शब्द शास्त्र की दृष्टि से 'डायस्पोरा' ग्रीक भाषा के 'Diaspora' शब्द से लिया गया है। सन्धि–विच्छेद करने पर यह शब्द 'Dia' और 'Sperien' से बना है। जिसका अर्थ बीजों का बोना–छितरना या बिखेरना, फैलाना आदि होता है।

मूलतः इस शब्द का प्रयोग 586 ई0 पू0 में यहूदियों के 'बेबीलोनिया' से निष्कासन के संदर्भ में किया गया था। इस निष्कासन से यहूदी या यहूदी समाज फिलीस्तान से बाहर विभिन्न क्षेत्रों में बिखर गया। आधुनिक काल में इस शब्द का प्रयोग प्रवासन और विस्थापन तक ही सीमित नहीं रहा है। आज इस शब्द का प्रयोग विभिन्न देशों के मानव समूहों के विस्थापन और पुर्नवास के संसार को रेखांकित करने के लिए किया जाता है, क्योंकि विगत ढ़ाई हजार वर्षो से दुनिया के विभिन्न भागों में प्रवासन, विस्थापन और पुर्नवसन की ऐतिहासिक लहरें उठती रही हैं। इसलिए विभिन्न नस्ल, प्रजाति, रंग, भाषा, धर्म, जाति क्षेत्र आदि के लोगों के अपने गृहस्थान या मूलस्थान से पलायन या निष्कासन कर और बाद में नई जीवन स्थितियों के वर्णन में 'डायस्पोरा' शब्द का व्यापक अर्थो में प्रयोग किया जाता है।

प्रवास की स्थिति में एक जगह से विस्थापित होकर दूसरी जगह पुनःवसन करते समय प्रवासी की पहली पीढ़ी को काफी संघर्ष करने पड़ते हैं, कशमकश से जूझना पड़ता है। नई जगह सामंजस्य बिठाना, छूटे हुए देश की संस्कृति और भाषा का मोह, फिर अपने प्रवास के निर्णय को, खुद को और दूसरों को सही साबित करने का प्रयास करते हैं और इसी ऊहापोह में पहली सीढ़ी के कई वर्ष बीत जाते हैं। प्रवासी आरम्भ में अपने परिश्रम

से बेगानी धरती पर अपनी निजी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपने आपको योग्य बना लेने का प्रयासरत रहते हैं। परन्तु इस समय उनको न केवन आर्थिक संकटों से दो–चार होना पड़ता है, बल्कि अपनी धरती और घर परिवार से दूरी पराए देश का बेगानापन, शारीरिक और मानसिक गुलामी और रंग भेदभाव की पीड़ा और अभिशप्त जीवन की त्रासदी को भी भोगना पड़ता है।

इसी त्रासदी और पीड़ा को जब सजग बुद्धिमान वर्ग कलम के माध्यम से शब्दों में व्यक्त करना शुरु करते हैं तो वह साहित्य का रुप ले लेता है, जिसे हम प्रवासी साहित्य के नाम से अभिहित करते हैं। प्रवासी साहित्य हिन्दी, उर्दू, पंजाबी आदि अनेक भाषाओं में रचा जा रहा है और जहाँ तक हिन्दी के प्रवासी साहित्य की बात की जाए तो आधुनिक हिन्दी साहित्य के विशाल वट वृक्ष की अनेक समृद्ध एवं सशक्त शाखाओं में से एक शाखा 'प्रवासी साहित्य' की है। ''जो दिन–प्रतिदिन अपनी रचनाधर्मिता से हिन्दी को सघन बनाने के साथ–साथ पाठक वर्ग को प्रवास की संस्कृति संस्कार एवं उस भू–भाग से जुड़े लोगों की स्थिति से अवगत कराने का कार्य कर रही है।''[1]

प्रवासी शब्द हिन्दी साहित्य जगत् में एक नया वाक्यांश व चेतना है, या यूँ कहें कि एक विमर्श है। 'प्रवासी' शब्द 'प्रवास' शब्द का विशेषण है। प्रवासी एक मनोविज्ञान है, एक अंतःदृष्टि है, जिसे स्वतः स्पष्ट (Formulate) होने में पर्याप्त समय लगा है। ''एक तरह से प्रवासी वे कलमें हैं, जो अपने पेड़ से कटी हुई टहनियाँ होने के बावजूद वर्षो किसी और मिट्टी–खाद पानी में अपनी जड़े रोपती हुई अपना बहुत कुछ खोने और नया बहुत कुछ उस नई–भूमि से लेने–पाने के साथ अपने भीतर की गहराईयों में नई ऊर्जा सृजित करती हुई नई चेतना की कोंपले विकसित करती हैं।''[2] अमेरिका की हिन्दी लेखिका इला प्रसाद लिखती हैं, ''प्रवासी विशेषण एक विशेष प्रकार की स्थानीयता की पहचान है, जो भौगोलिक है। प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन के मौके पर भारत से बाहर के रचनाकारों को पहली बार इस संबोधन से संबोधित किया गया था।''[3]

प्रवासी लेखक का संवेदन संस्कार के रुप में अपने नए परिवेश व नए वातावरण को ग्रहण करता है। वह अपने देश और मातृभूमि से विलग होकर एक अन्य देशकाल तथा परिवेश में चला जाता है। वह उसी में जीवन–यापन करता है। परिवेश बदल जाने से प्रवासी के जीवन में विषमताएँ और जटिलताएँ आती हैं। जिस कारण उसके नए संस्कार, नए भाव–बोध, नए विचार, नूतन दृष्टिकोण और नवीन मान्यताएँ बनने लगती है। वह पुराने मूल्यों को नए दृष्टिकोण से देखने लगता है। इन स्थानों में बसे हिन्दी लेखक विभिन्न सामाजिक परिवेशों से प्रभावित होते हैं और इन परिवेशों और परिस्थितियों को अपनी रचना का विषय बनाते हैं। जिसे प्रवासी साहित्य कहा जाता है।

''प्रवासी भारतीयों ने हिन्दी–साहित्य को विभिन्न संवेदनात्मक और विचार–दृष्टियों के माध्यम से पल्लवित किया ही है साथ ही भारतेत्तर देशों की भारत के साथ सांस्कृतिक टकराहटों से उपजने वाली पीड़ा को अभिव्यक्ति का आधार भी बनाया है। कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक और अन्य विधाओं में विशाल प्रवासी साहित्य, इस बात का द्योतक है कि प्रवासी साहित्यकार, चाहे वे गिरमिटिया वंश में जन्में हों या, उन्होंने न तो भारतीय सरोकारों से ही अपना दामन छुड़ाया और न ही भारतीय संस्कृति को अपनी अस्मिता से अलग होने दिया।''[5] तमाम विपरीत परिस्थितियों में रहते हुए भी प्रवासी लेखकों द्वारा ऐसी भाषा में लिखना जो वहाँ की भाषा न हो, बहुत ही कठिन कार्य है। साहित्य उसी भाषा में लिखा जाता है, जिसके संस्कार हमें बचपन में मिले हैं।

यदि अपने साहित्य की अभिव्यक्ति के लिए अंग्रेजी, फ्रैंच या स्पैनिश आदि का चयन करेगें तो इससे साहित्य तो रचा जाएगा पर ऐसा साहित्य संवेदनशील नहीं होगा, क्योंकि साहित्य तो हृदय के सच्चे उद्‌गारों को प्रकट करना होता है। सच्चे उद्‌गार मातृभाषा में फूटते हैं। ''प्रवासी लेखक अपने स्वदेश से बाहर रहकर जीवन के अनुभव, देश–प्रेम, अपनी पहचान बनाए रखने के द्वन्द्व, देश वापस न लौटने का दर्द, मानवता, देश–प्रेम और न्याय के लिए कलम उठाता है। नए समाज में कठिन परिश्रम के साथ–साथ स्वच्छन्दता होते हुए भी सोसाइटी में कैदी होने का आभास नई रचना को उत्पन्न करता है।''[6] प्रवासी मनुष्य की विषमताओं और संघर्षो को देखकर प्रवासी हिन्दी लेखक के हृदय में दर्द उमड़ता है और वही दर्द कागज पर बहकर सभी का दर्द बन जाता है।

प्रवासी हिन्दी साहित्य भारत से बाहर का यथार्थ रुप है। यह साहित्य भारत के हिन्दी साहित्य और भारतोत्तर हिन्दी–साहित्य तथा साहित्यकारों के बीच ही नहीं बल्कि भारत की संस्कृति और अन्य देशों की संस्कृति के अंतः सम्बन्धों का सम्पूर्ण विश्लेषण हमारे सामने प्रस्तुत करता है। भारतोत्तर देशों को भारत से जोड़ने का सेतु बनाता है, जिसके मूल में भारतवासियों का स्वदेश–प्रेम, भाषा–प्रेम, संस्कृति–प्रेम के साथ उनकी संलग्नता, सहभागिता एवं सहयोग अटूट रुप में संबद्ध है। एक–दूसरे के निकट आकर हिन्दी विश्व को सबल एवं स्थायित्व प्रदान करते हैं। हिन्दी विश्व में हमारी और उसमें रचा हिन्दी–साहित्य विदेशों में भारतवंशियों के इस हिन्दी में अपना एक भरा–पूरा संसार निर्मित किया है।'' जिसके दो पड़ाव रहे हैं, पहले पड़ाव में भारत की आजादी से पहले गिरमिटिया मजदूरों के रुप में भारत से बाहर मॉरीशस, फीजी, सूरीनाम आदि देशों में भेजे गए भारतीय जिस पीड़ा और अभिशप्त जीवन की त्रासदी को भोगा, आश्चर्यजनक रुप से उन्होंने तथा उनके वंशजों ने अपनी सूचना धर्मिता को एक नया आयाम दिया।

इसका दूसरा पड़ाव मध्यवर्गीय पढ़े–लिखें लोगों का था जो अधिक सुख–दुःख सुविधाओं की आशा और आर्थिक उच्चता के स्त्रोतों के लिए अपना देश छोड़ विदेश गए। आर्थिक पक्ष से संघर्षशील इन लोगों ने शैक्षणिक योग्यतानुसार काम न मिलने पर भी प्रत्येक तरह के योग्य–अयोग्य काम को स्वीकार किया। पहले गए प्रवासियों से इनकी सोच, कार्य और व्यवहार भिन्न थे। मानसिक तौर पर चेतन और सजगता ने इन लोगों ने बीत चुके संताप को अपने कंधों पर उठा लिया। विदेशों में तीसरे दर्जे के शहरी बनकर रहना स्वीकार किया और गुलामी के संताप को भी भोगा। नस्ली भेदभाव, घृणा, गरीबी, गुलामी आदि परिस्थितियों में से गुजरते हए इन लोगों की मानसिकता ने इन लोगों को भीतर तक हिलाकर रख दिया। अपनी भावनाओं की सुरक्षा की खातिर विदेशों में रहते हुए, इन प्रवासियों ने रचनाओं द्वारा स्वयं को अभिव्यक्त किया। चाहे इनमें से अधिकतर प्रवासी लेखक भारत में ही रहते थे और हिन्दी भाषा से सम्बन्धित और साहित्यिक रुचियों के मालिक थे, परन्तु वहाँ की परिस्थितियों ने इनके भीतर पनप रही साहित्यिक रूचि की संवेदना को और तीव्र कर दिया तथा ये लोग ही साहित्यिक रूचि की संवेदना को और तीव्र कर दिया एवं ये लोग ही साहित्यिक रचनाओं द्वारा प्रवासी हिन्दी साहित्य का केन्द्रीय बिन्दु बन गए। परन्तु आश्चर्य है कि गिरमिटिया मजदूरों के रुप में भारतोत्तर देशों में बसे भारतीयों के वंशजों का साहित्य भारतीयता की मिट्‌टी की गंध को जितना अपने में समेटे है, उतना विकसित देशों में जाकर बसे भारतीय प्रवासी साहित्यकारों के साहित्य में नहीं। लेकिन परिस्थितियों और अपने अस्मिता बोध के कारण दोनों तरफ की प्रवासी हिन्दी ने भारतीय अस्मिता को जो नया आयाम प्रदान किया है, वह अप्रितम है। परन्तु इसके साथ–साथ प्रवासी हिन्दी साहित्य को लेकर कई प्रश्न भी उठ खड़े हुए हैं। जिसमें एक प्रश्न जाने–माने

साहित्यकार एवं हंस के सम्पादक डॉ0 राजेन्द्र यादव प्रवासी हिन्दी साहित्य को नॉस्टेल्जिया 'अतीत की झलक' कहकर उठा दिया है। लेकिन बहुत से विद्वतजन उनके इस मत से सहमत नहीं हैं। इसलिए उनके मत का विरोध करते हुए जहाँ प्रवासी साहित्यकार सुधा ओम ढींगरा ने कहा है कि यह अतीत जीवी नहीं बल्कि भारतजीवी है।

इस सम्बन्ध में हिमांशु जोशी का कहना हैं कि, ''उनमें नॉस्टेल्जिया का होना स्वाभाविक है। लोग अपने रीति–रिवाजों से अपने वतन, अपने इलाके से बिछड़कर दूर चले जाते हैं तो अपना गाँव, अपने लोग, अपना प्रदेश याद आ ही जाते हैं और उनके साहित्य में यह थोड़ा बहुत नॉस्टेल्जिया है तो क्षम्य है। नॉस्टेल्जिया होना चाहिए। अगर यह न होता तो ऐसा लगता की किसी चीज की कमी रह गई है।''[8]

हममें से प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी रुप से नॉस्टेल्जिया होता है या नॉस्टेल्जिया में जीता है। किसी को कागज की किश्ती में बारिश के पानी की स्मृति दंश है तो किसी को पंजाब के 'मक्के दी रोटी और सरसों दा साग' की याद सालती है। जब कोई बेशकीमती चीज छूटती है तो फिर भाग–दौड़, आपा–धापी के दौर में याद तो आएगी। परदेश में अपने देश की स्मृति तो अत्यन्त स्वाभाविक ही है। प्रवासी हिन्दी साहित्य में स्वदेश के प्रति आन्तरिक लगाव एवं मातृभूमि की स्मृति केन्द्र में है। भगवान् राम को भी लंका में अपनी जन्मभूमि अयोध्या की याद आती है। वह उन्हें स्वयं से भी अधिक प्रिय एवं सुन्दर लगती है। आज के वैश्विक जगत् में व्यक्ति अपनी जड़ों से तो कट सकता है, लेकिन अपनी स्मृतियों से नहीं। ''मॉरीशस, फीजी, सूरीनाम आदि देशों के भारतवंशी लेखक गीता, रामायण तथा हनुमान चालीसा वाले हिन्दुस्तान को अपने हृदय से उसी प्रकार लगाए–बसाए हुए रहते हैं, जिस प्रकार हनुमान जी ने अपने सीने में अपने आराध्य प्रभु राम की छवि को। ये चीजें उन्हें तसल्ली देती हैं, सुकून देती हैं, पहचान देती हैं, अपनी पहचान को काटकर वह भला जिएगा भी तो कैसे?''[9]

इसलिए कोई प्रवासी लेखक अपनी अतीत की यादों को, स्मृति के मधुर क्षणों को अपनी रचना में संजो भी लेता है, तो इतनी हाय–तौबा करने की आवश्यकता ही क्या है। हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार कमलेश्वर भी इस सम्बन्ध में लिखते हैं कि– ''मैं समझता हूँ कि नॉस्टेल्जिया या स्मृति कोई गलत मूल्य नहीं है। नॉस्टेल्जिक जो लिट्रेचर है या जिसमें नॉस्टेल्जिया है, स्मृति है, यादें हैं, वे अपने आप में बहुत गहरी भी होती हैं और कारगार भी खासतौर पर वो लोग जो भारत छोड़कर दूसरे देशों में चले गए हैं, उन्हें निश्चित रुप से अपने देश की, अपने प्रांत की, अपने गॉव की, अपने घर की याद सताती है। ये पूर्व स्मृति ही नॉस्टेल्जिया है। उसके तहत वे लोग उसे याद करते हैं, जो उनके साहित्य में दिखाई भी पड़ता है।''[10]

ब्रिटेन में बसी लेखिका कादम्बरी मेहरा ने भी विरोध करते हुए कहा है कि– ''हमारा लेखन ही हमारी पहचान है। मगर केवल हमारे व्यक्तित्व की ही पहचान नहीं है, वरन् हमारी संस्कृति की भी पहचान है। हमारी रगों में दौड़ती हमारी हिन्दी भाषा की पहचान है। यदि हमें पढने वाले हमारे प्रंशसक, हमारे ग्राहक भारत में रहते हैं, मुख्य रुप से तो हमें उनको लेखक पहले व प्रवासी बाद में गिना जाना चाहिए। हिन्दी में लिखने के लिए भारत में अगर जरुरी नहीं है तो कोष्ठकों की जरुरत नहीं है। हिन्दी में नित्य बनते जा रहे कोष्ठकों के कारण अलगाव पैदा हो रहा है। उसको मिटाना बहुत जरुरी है और यह विभाजन भारत ही रोक सकता है, क्योंकि यह दलित बनाने की ही प्रक्रिया है।''[11]

साहित्य समाज का दर्पण है, मूल हिन्दी साहित्य के दर्पण में अपने देश, सभ्यता और संस्कृति का अक्ष नजर आता है, उसी तरह ही प्रवासी हिन्दी साहित्य सात समुन्दर पार की सभ्यता, संस्कृति का प्रतिबिम्ब दिखाता है। जिस सात समुन्दर पार की दुनिया को हम बहुत से लोग औत्सुक्य की नजर से निहारतें हैं, उसे स्वप्निल दुनिया मानते हैं। यह कहने वालों की कमी नहीं है कि वहाँ सब कुछ अच्छा ही अच्छा है तो अपने यहाँ बुरा ही बुरा। प्रवासी हिन्दी साहित्य इसकी हकीकत से न केवल पर्दा उठा रहा है, बल्कि अपने देश की गरिमा में चार चाँद भी लगा रहा है। आज विदेशों में रहने वाले भारतीय लेखक प्रवासी जीवन के विभिन्न पहलुओं को अपने साहित्य द्वारा उजागर कर रहे हैं। ये रचनाकार सिर्फ नई जमीन ही नहीं जोड़ रहे वरन् हिन्दी साहित्य को नए विषय–वस्तु के साथ, नए मुहावरें, नई शताब्दी और नूतन शैली के साथ ईमानदारी से पश्चिमी जगत के यथार्थपरक परिवेश से भी जोड़ रहे हैं।

प्रवासी साहित्यकारों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। हवा का बहाव हक में न होने पर भी उनके भीतर बैठा साहित्यकार मौन धारण करके नहीं बैठा। जब देश की युवा पीढ़ी परदेशी भाषा और साहित्य पर जान छिड़क रही है, अपनी भाषा को खराब और अनपढ़ों की भाषा मानकर उसका तिरस्कार कर रही है। उसी समय प्रवासी हिन्दी साहित्यकार हिन्दी साहित्य के फलक में अभिवृद्धि कर इसे गौरवशाली बना रहे हैं। प्रवासी हिन्दी साहित्यकारों के पास परदेशी संवेदना और संस्कृति के साथ अपने वतन की सोंधी महक, अपनी संस्कृति और संवेदना भी है, जो उनको वहाँ भी उत्साहित करती रही। उनके द्वारा रचित इस साहित्य में धरती के रंग, सोच और आज के मनुष्य की समस्याओं को लिया गया है। साहित्यिक कृति कभी स्थानीय रंग से रंगें बिना नहीं रहती। उन्होंने वहाँ के साहित्य के साथ जुड़ने का भी प्रयत्न किया है। इसी कारण उनका गौरव बढ़ा है।

आज साहित्य सृजन प्रवासियों के जीवन का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है। भिन्न–भिन्न देशों में रचा जा रहा प्रवासी साहित्य भिन्न–भिन्न परिस्थितियों के अन्तर्गत अपने तौर पर विलक्षण है, परन्तु इनमें कुछ विशेषताएँ एक जैसी हैं, जैसे नस्लवाद, सांस्कृतिक तनाव रिश्तों की सार्थकता और बेगानापन आदि। सामाजिक और आर्थिक स्त्रोतों से भरपूर मानसिक संताप झेल रहे ये प्रवासी लेखक अपने मूल से जुड़ने का सफल प्रयत्न कर रहे हैं। प्रवासी जिन्दगी के भौगोलिक, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक ढाँचे में लिप्त उसको भोगते हुए न तो उसे छोड़ने का हौंसला रखते हैं और ना ही अनुभूति के स्तर पर अपनी मातृभूमि को भुलाकर नए देश, नई धरती और लोगों को अपना समझते हैं। विदेश में वास कर रहे प्रवासियों को आधुनिक समय में परिवर्तित परिस्थितियों का सामना करना पड़ रहा है। जिसके अन्तर्गत प्रवासी परिवारों की नवीन पीढ़ी अपने नवीन विचार लेकर सामने आ रही है। इस पीढ़ी की पहली भाषा अंग्रेजी है।

निःसंदेह विदेशों में रह रहे भारतीयों को भाषा के इस संकट का सामना करना पड़ रहा है। क्रियात्मक रुप से नई पीढ़ी से एक जुटता का प्रयत्न मानवीय रिश्तों में दरार उत्पन्न करता है। पारिवारिक, सामाजिक और सांस्कृतिक तनाव में से उत्पन्न इस खोखलेपन की अभिव्यक्ति प्रवासी साहित्य सृजन का आधार बन रही है। नई पढ़ी–लिखी श्रेणी जो रोजगार प्राप्ति के स्त्रोतों की तलाश में विदेश में पहुँचती है, घर से बेघर और रिश्तों से दूर होकर व्यक्ति अकेलेपन का शिकार होता है, परन्तु उसमें समाई यह भावना कि एक दिन वह अपने वतन लौट जाएगा उसे पूरी तरह टूटने नहीं देती। फलस्वरुप व्यक्ति बेगावनी का शिकार होने से बच जाता है। परन्तु

यह व्यवहार कुछ समय के लिए होता है। जब व्यक्ति का अपना परिवार बन जाता है, तो यही व्यवहार पारिवारिक बंधन अधीन व्यक्तिगत चेतना का अंग बनकर व्यक्ति को बेगाने होने का अहसास करवाने लगता है। ऐसा व्यक्ति अपने देश में रहते हुए भी पारिवारिक दूरी से मजबूरी वश टूटता है और अलगाव का शिकार होता है। मूल रुप से बेगानगी मानवीय मानसिकता का अटूट भाग है।

यही द्वन्द्व प्रवासी साहित्य में देखने को मिलता है। प्रवासी साहित्यकारों ने पीढ़ीगत अन्तर को आधार रुप में प्रस्तुत किया है। बीसवीं सदी के मध्य में विदेशों में गई नई पीढ़ी और वहाँ जन्मी पली–पढ़ी सामंजस्य स्थापित करने में असफल रही है। इस तनाव की स्थिति में टूट रहे मानवीय रिश्ते, टूट रहे परिवार और सांस्कृतिक खोखलेपन को विदेशी हिन्दी साहित्य में विभिन्न परिप्रेक्ष्यों को प्रस्तुत करते हुए, इन समस्याओं को समझने और उसका समाधान पेश करने का प्रयत्न किया है। प्रवासी भारतीयों को इन देशों में प्रत्येक स्तर पर नस्ली भेदभाव का शिकार होना पड़ता है। जिस कारण उन्हें अति जलालत भरे और निम्न होने का अहसास होता है। जिसका संताप लगभग हर प्रवासी भारतीय को सहन करना पड़ता है। पहली पीढ़ी में यह भेदभाव घोर नंगे और प्रत्यक्ष रुप में हुआ है। यह वस्तुपरक सामाजिक यथार्थ भिन्न–भिन्न साहित्यकारों के हाथों में भिन्न–भिन्न तरह से पेश हुआ है। प्रवासी भारतीय साहित्यकारों का एक हिस्सा शारीरिक रुप में विदेशों में रहता हुआ भी आत्मिक स्तर पर स्वयं को अपनी धरती से अलग नहीं कर सका। जिस कारण से इन साहित्यकारों की रचनाओं में विदेश जाने से पहले की मूल धरती की स्थिति को चित्रित किया गया है। इस प्रकार का साहित्य प्रवासी साहित्य की मूल भावना के प्रतिकूल प्रतीत होता है, क्योंकि इन रचनाओं में परिवर्तित परिस्थितियों को आँखों से ओझल करके मानसिक स्तर पर मूलभूत परिस्थितियों को वर्तमान में अभिव्यक्त करने का प्रयत्न किया जाता है।

इस प्रकार की सोच वाले साहित्यकार विदेशों में रहते हुए भी मूल राजसी, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, परिस्थितियों के अनुसार ही रचनाओं का सृजन करते हैं। जिससे उनका एक नये प्रकार का साहित्य मिलता है। जो भारत में रहते हुए नहीं रचा जा सकता था। अतः प्रवासी साहित्य ने एक नया विचार, नयी संवेदना और नूतन जीवन–दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। जिससे हिन्दी का पाठक समृद्ध हुआ है और उसे हिन्दी के माध्यम से वैश्विक चेतना की अनुभूति का अवसर मिला। यह हिन्दी साहित्य का एक अभिन्न अंग बन चुका है। इसलिए अब हमें इस साहित्य के प्रति अधिक जागरुक होना चाहिए और उच्च स्तर के हिन्दी–अध्ययन में और हिन्दी साहित्य के इतिहास में विशिष्ट स्थान देना चाहिए।

संदर्भ :-

1. रामशरण जोशी, राजीव रंजन राय व अन्य 'संपादक' भारतीय डायस्पोरा : विविध आयाम, नयी दिल्ली : राजकमल प्रकाशन, 2014, पृ0 15
2. स्वर्णलता ठन्ना, हिंदी के प्रवासी साहित्य की परम्परा 'लेख' कुमार गौरव मिश्रा 'संपादक', जनकृति अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका, अंक 22, दिसम्बर 2016
3. उषा राज सक्सेना, प्रवासी हिन्दी लेखन तथा भारतीय हिन्दी लेखन 'लेख', नमिता सिंह 'संपादक' वर्तमान साहित्य पत्रिका, जनवरी – फरवरी, 2006 पृ0 62
4. इला प्रसाद, दूर देश के लेखक 'लेख' ओम बानवी 'संपादक' जनसत्ता पत्र, 12 जुलाई 2012 पृ0 8

5. सुषमा आर्य, अजय नावरिया 'संपादक' प्रवासी हिन्दी कहानी एक अंतर्यात्रा, दिल्ली : शिल्पायन, संस्करण, 2013 पृ0 86
6. उपर्युक्त पृ0 99–100
7. कमलकिशोर गोयनका, प्रवासी साहित्य 'लेख' महेन्द्र सिंह राणा 'संपादक' गवेषणा पत्रिका, अंक 103, जुलाई–दिसम्बर, 2014 पृ0 43
8. हिमांशु जोशी, वे जो लिख रहे हैं चौकाने वाला है 'लेख' नमिता सिंह 'संपादक' वर्तमान साहित्य पत्रिका, मई 2006, पृ0 25
9. सुषमा आर्य, अजय नावरिया 'संपादक' प्रवासी हिन्दी कहानी एक अंतर्यात्रा : दिल्ली शिल्पायन, संस्करण, 2013 पृ0 129
10. कमलेश्वर, उन्होंने साहित्य की अपनी परम्परा तैयार की है 'लेख', नमिता सिंह 'संपादक' वर्तमान साहित्य पत्रिका, मई 2006 पृ0 18–19

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 110-115

गोविन्द मिश्र के उपन्यास धुल पौधों पर में सामाजिक चेतना

सुधीर सिंह
शोध छात्र, हंडिया पी० जी० कॉलेज हंडिया प्रयागराज।

प्रस्तुत शोध पत्र में शोधार्थी ने गोविंद मिश्र जी के उपन्यासों में निहित सामाजिक चेतना का वर्णन संक्षिप्त रूप में करने का प्रयास किया है।

साहित्य मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष को उद्घाटित करता है वह समाज का एक दर्पण होता है। साहित्यकार मानवीय संवेदनाओं के धरातल पर चिंतन कि सहायता से समाज में हो रहे तथा समीकरण कों अपने साहित्य संसार कर सृजन करता है।

साहित्यकार अपने अमूल्य योगदान से समाज को निखारने का प्रयास करते हैं तथा समाज को उनकी वास्तविकता को दिखाने का प्रयास करते हैं।

चेतना एक ऐसी मानसीक प्रक्रिया है जिससे मनुष्य को ज्ञान प्राप्त होता है तथा चिंतन से मनुष्य बड़ी से बड़ी परेशानियों कठिनाईयों तथा समस्याओं को आसानी से पार कर लेता है समस्याओं से निकलने के लिए अनेकों तरह के सुझाव उसके अंतर्मन में अपने आप उत्पन्न होने लगते हैं जिसके विषय में मनुष्य का सोचना ही चेतना कहलाता है।

गोविंद मिश्र जी के उपन्यासों में सामाजिक चेतना का एक अलग स्तर देखने को मिलता है जो जन्म से लेकर जीवन भर किए गए सभी कर्मों के विषयों का ज्ञान हमें गोविंद मिश्र जी के उपन्यास में देखने को मिलता है।

धूल पौधों पर पुस्तक में मिश्रा जी के रोचक व आत्म चेतना से लिखी हुई दसवां उपन्यास है जो अपेक्षाकृत छोटा व आकार के अनुसार काफी छोटा है परंतु सधा हुआ है।

धूल पौधों पर उपन्यास में स्त्री पुरुष संबंधमें उत्पन्न होने वाली तमाम समस्याओं पर गोविंद मिश्र ने उपन्यास धूल पौधों पर मैं स्त्री व्यक्तित्व के विकास से जुड़ी अन्य समस्याओं को भी उजागर करते हुए लिखा है कि उसे स्वतंत्रता चाहिए पर घर की चारदीवारी तो उसके विचार को तथा उसकी स्वतंत्रता को रोक के रखती है। पति की निरंकुशता नहीं चाहिए पति के प्यार के लिए रलाइक पत्नी लोगों के मान्यताओं के अनुरूप हर कार्य करती है। वह अपने विचारों को काफी संवेदना पूर्ण तरीके से देखते हुए अपने परिवार के विकास के लिए वह स्वयं के विचार को त्याग कर अपने परिवार के लिए सोचने पर मजबूर हो जाती है और उन्हीं के लिए जीते हुए परिवार की जिम्मेदारी अपने कंधों पर उठाकर आगे की तरफ बढ़ती चलती है।

गोविंद मिश्र जी व्यापक सामाजिक दृष्टि के चिंतक और कलाकार हैं सामाजिक मूल्यों के अंतर्गत इन्होंने

विशेष रूप से सामाजिक रूढ़ियां सामंतवादी प्रवृतियां भारतीय वैवाहिक रीति रिवाज प्रेम भावना का सामाजिक महत्व तथा सामाजिक प्रवृतियां कोटि मूल्यों पर प्रकाशन अपने साहित्य में किया हैं किसी भी समाज में जब कोई व्यवस्था अथॉरिटी केवल कोरी परंपरा तक सिमट जाती हैं तो वह निरर्थक रूढ़ी का रूप ले लेती हैं, ऐसी गली सड़ी रूढ़ियों में समाज का कोई हित लाभ नहीं होता उल्टे हुए समाज को पतन की ओर ले जाती हैं।

इसके अलावा गोविंद मिश्र जी ने विवाह कराने वाली सामाजिक संस्थाएं और स्त्री व्यक्तित्व विकास से जुड़ी तमाम समस्याएं तथा टिकट टिप्पणियों पर गोविंद मिश्रा जी ने अपना उपन्यास धूल पौधों पर लिखा है जिसके अंदर उन्होंने झाड़ की पत्तियों पर धूल थी जिसके कारण एक बासी पन उससे उठा था।

यह कहानी है उसी झाड़ की पत्तियों पर से धूल को दिए जाने और पौधे एवं पत्तियों की चमक हासिल करने के लिए गोविंद मिश्र ने अपने बुद्धि विचार तथा तर्क से इस उपन्यास द्वारा हमें परिचय कराया और उनका यह विचार उनकी यह चेतना बहुत ही सराहनीय है। उन्होंने कहानी की शुरुआत प्रोफेसर प्रेम प्रकाश के जीवन में एक लड़की के दाखिले के साथ उत्पन्न होती है जिसके अंतर्गत प्रेम प्रकाश उनकी मदद करते हैं लेकिन खुद प्रेम प्रकाश का आंतरिक विकास उस लड़की की मदद से होता हुआ एक बेधड़क रूप से उपन्यास की नायिका की कहानी दर्शाता है जिसमें नायिका के जीवन में ऐसा कोई नहीं आया जो उसके सामने आई ना रखें।

लड़की से मिलने के बाद प्रोफेसर प्रेम प्रकाश अपने आप में काफी बदलाव महसूस करते हैं तथा बुद्धि और प्रेम के कशमकश के बीच में वह मन में विचार करते हैं की वह उसका साथ चाहते हैं या उसे देखते ही उनका मन और शरीर दोनों उसकी तरफ आकर्षित होता हुआ प्रतीत होता है लेकिन यह पूरे पनका जो एहसास है उसे जी कर वह तृप्त होना चाहते हैं। ठीक इसी तरह कहानी को आगे बढ़ाते हुए गोविंद मिश्रा जी ने ढोल पौधों पर में शिक्षा के हाल बेहाल तथा भ्रष्ट और चालाक पाखंडिओं को बहुत बारीकी से उनके विचारों को उधार के रख दिया लेकिन इस उपन्यास में सबसे महत्वपूर्ण यह है कि स्त्री व्यक्तित्व कि विचार, विमर्श जो काफी संवेदना पूर्ण तथा तर्कसंगत है जिसे काफी सुंदर तरीके से गोविंद मिश्र जी ने प्रस्तुत किया है। उन्होंने स्त्री की मानसिकता में होने वाले असुरक्षा के भाव को गहराई से दर्शाते हुए समाज में प्रकृति की भूख पैदा करती हुई स्त्री पुरुष के संबंध को जन्मजात अधूरा रखता है परंतु उसमें प्यार की प्यास हमेशा बनी रहती है।

इस उपन्यास में लेखक गोविंद मिश्र जी भावुकता को प्रेम से सफल करने का प्रयास करते हुए उन्होंने संदेश दिया है कि अपना संघर्ष अपने दम पर करना चाहिए प्रेम मुक्ति का मार्ग हो सकता है परंतु प्रेम बंधन का मार्ग नहीं होना चाहिए प्रेम व्यक्ति को सही मायनों में मुक्त रखना सिखाता है जिसे गोविंद मिश्रा जी ने इस उपन्यास में खूबसूरती पूर्वक निकालते हुए पुरुष तथा स्त्री संघर्ष की कहानी सांसारिक संघर्ष की कहानी के रूप में दर्शाते हुए स्त्री और पुरुष की कहानियों को सामान्य रूप से प्रस्तुत किया है।

गोविंद मिश्र जी द्वारा रचित उपन्यास में नारी प्रकृति की अनुपम एवं रहस्यमई कृति को दर्शाते हुए उनके आंतरिक विचार को खोलते हुए नारी को साहित्य का केंद्र बिंदु दर्शाते हुए गोविंद मिश्र के साहित्य में उन्होंने नारी का परंपरागत रूप तथा नारी के विद्रोही विचार तथा कुंठित नारी केविचारों को दर्शाते हुए उन्होंने साहित्य में नारी के विविध रूप तथा उनके अनेक विचारों को प्रस्तुत किया है जिससे नारी विविध आयामों की ओर बढ़ते हुए उनके रूपों का अति सूक्ष्मा को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

नारी अपने पति के साथ हर कदम पर सामाजिक से प्राप्त करना चाहती है परंतु उसके साथ उसके

ससुराल वाले उससे उसके पति के सामान नहीं समझते हैं। जिसके कारण नारी का जीवन यह सोचने पर मजबूर हो जाता है की क्या नारी कोई वस्तु है या नारी कोई जानवर है?

तो नारी एक पत्नी ही तो उसका पति यह बात को क्यों नहीं समझ पाता वह उसकी इच्छा और अनिच्छा के बिना रात भर उसके साथ जबरदस्ती करता है जिसके कारण नारी के मन में विद्रोही भावना उत्पन्न होने लगती है यही स्वरूप दर्शाता है कि नारी की स्वतंत्रता और समानता पुरुष के बराबर नहीं है जिसके कारण घर में जब बेटी का जन्म होता है तो उसके लिए कुछ अलग संस्कार नियम कानून के तहत उसका जन्म उत्सव मनाया जाता है परंतु ठीक उसी जगह अगर बेटा का जन्म होता है तो उसके लिए कुछ और संस्कार और विधान होते हैं जिसके कारण समाज में नारी असमानता की शिकार होती रही जिसे पुरुष ने अपने विधान की जंजीरों में जकड़ कर स्त्रियों को रखा है परंतु आधुनिक समाज में स्त्री की स्वतंत्रता में बाधक बनी स्वयं नारी ही है उनके विचार विद्रोही भावना से उन्मुक्त होना ही नहीं चाहते।

उपन्यास में गोविंद मिश्रा जी ने उच्च शिक्षा व्यवस्था को आलोचना के द्वारा दर्शाया है जिसके अंतर्गत छात्राओं के साथ शिक्षकों के व्यवहार का स्वरूप दर्शाया है जिसके अंतर्गत विश्वविद्यालयों में सेक्स और शिक्षा का संबंध दिखाते हुए नायिका से उसके शोध निर्देशक के बीच शारीरिक शोषण का और मानसिक राज का भी चित्रण किया गया है उन्होंने नायिका के शोध कार्य के दौरान नायिका को कमरे में बुलाकर उसे बिठाया जाता था और तब तक बिठाया जाता था।

जब तक सभी लोग चले नहीं जाते थे अपनी संवेदना ओं को जीवित रखने के लिए तथा अपने शोध कार्य को पूरा करने के लिए नायिका अपने ही सुंदर का स्पर्श करते हुए बौद्धिक संतोष तथा भावात्मक संतोष को सोच कर नायिका के रोंगटे खड़े हो जाते हैं तथा उसके शरीर से चिंगारियां रूप मैं आंखें लाल हो जाती है इन्हीं सब व्यवस्था को देखते हुए गोविंद मिश्र जी ने टिप्पणी करते हुए प्राइवेट डिग्री धारी लोगों के सामने उच्च शिक्षा व्यवस्था में समस्या अवरोध के रूप में खड़ी रहती है जिस पर गोविंद मिश्र जी ने टिप्पणी की है। डिग्री मिलती ही उसे लेक्चर के पद पर नियुक्त होना होता है यहां भी धंधे बाजी का एक चलन दिखाई देता है जिससे सरकार का खजाना भरता हुआ दिखाई देता है।

शिक्षा में आरक्षण व्यवस्था के लिए वीपी सिंह के द्वारा लाया मंडल कमीशन देश के सवर्णों की आंख में किरकिरी बन गया जिसे गोविंद मिश्रा जी ने धूल पौधों पर नामक उपन्यास में नायिका के सौतेले भाइयों ने उसके इकलौते सगे भाई को कमीशन की आग में झोंक कर जला डाला और कहा कि आरक्षण के विरोध में उसने आत्महत्या कर ली दिल्ली की सड़कों पर प्रगतिशील युवाओं ने आरक्षण का विरोध किया तथा मोर्चा निकाला। देश की 85 प्रतिशत जनसंख्या को उसके हक को दिलाना कहां का अन्याय था किंतु देश के पढ़े–लिखे सामान छात्रों ने उन्हें अन्याय घोषित कर दिया। प्रसिद्ध इतिहासकार रामचंद्र गुहा ने लिखा कि जैसा कि हिंदुस्तान में अक्सर कई मामलों में देखा जाता है सरकारी नीतियों के बारे में अखबारों और अदालतों में बहस की जाती है उसके बाद ही वह आम जनता में दिखाई पड़ती है 19 सितंबर को दिल्ली विश्वविद्यालय के एक छात्र राजीव गोस्वामी ने मंडल आयोग की रिपोर्ट को लेकर सरकार द्वारा स्वीकार कर लिए जाने के खिलाफ अपने शरीर में आग लगाकर अपनी जान देने की कोशिश की परंतु वह बुरी तरह से जल गया और बच गया। उसके ऐसा करने से कई दूसरे छात्र भी आत्मदाह करने पर उतारू हो गए थे। वह आत्मदाह करने वाले सारे लोग ऊंची जातियों

से ताल्लुक रखने वाले हिंदुस्तानी थे जो खुद भी सरकारी नौकरियां पाने की कोशिश कर रहे थे लेकिन अब उनके सपनों का भी मंजर दिखाई नहीं दे रहा था कुल मिलाकर 200 के लगभग आत्महत्या की कोशिशें हुई थी। जिसमें 62 लोगों की कोशिशें कामयाब हो गई देश के भीतर हक के लिए सदियों से संघर्षरत जनता अब अधिकारों के प्रति जागृत हुई परंतु जवानों ने उसका खुला विरोध किया साहित्य के माध्यम से गोविंद मिश्र ने इस ज्वलंत प्रश्न को उठाकर पुनः विमर्श का मुद्दा बना दिया धूल पौधों पर उपन्यास में व्यक्त मंडल कमीशन की सच्चाई भारत के इतिहास में दर्ज कराते हुए उन्होंने इसे अवलोकन की आवश्यकता बताते हुए प्रस्तुत किया।

गोविंद मिश्रा ने उपन्यासों में शिक्षा के प्रति अपने अनेक सामाजिक चिंतन ओ को प्रस्तुत किया है जिसके अंतर्गत गांव की बिगड़ती शिक्षा व्यवस्था और वहां की राजनीति का शिक्षा में अवरुद्ध बन्ना कालेजों में व्याप्त शिक्षा के नाम पर गुंडागर्दी और माफियाओं का बाजारीकरण व्याप्त विश्वविद्यालय में शिक्षक अराजकता स्त्रियों का शोषण दलित पिछड़े बच्चों के साथ जातीय भेदभाव उन्हें शिक्षा से वंचित कर देता है तथा वह संयंत्रों के द्वारा बहिष्कृत रूप से शिक्षा अपना नहीं पाते गोविंद मिश्र जी द्वारा आज की शिक्षा पद्धति पर बहुत सारे सवाल उठाकर उन्होंने सोचने पर विवश कर दिया कि शिक्षा में आज इतनी अराजकता है शायद पहले नहीं रही।

गोविंद मिश्र आज की शिक्षा पद्धति पर सवाल उठाते हुए भारत की बहुसंख्यक आबादी से आने वाले छात्रों और छात्राओं के प्रति विश्वविद्यालयों में हो रहा उनका सांगठनिक शोषण दर्शाते हुए उन्होंने बताया कि छात्र तथा छात्राओं का मानसिक और शारीरिक शोषण शिक्षा में मेरिट के नाम पर तथा शोध के नाम पर नौकरी का लालच दिखाकर रिश्वत के रूप में उनका शारीरिक शोषण करते हैं जिसे गोविंद मिश्र जी ने शिक्षा व्यवस्था पर तीखा पलटवार करते हुए उन्होंने आज शिक्षा व्यवस्था में समरूपता लाने के अनेक प्रयास किए हैं उन्होंने राजनेताओं को लूटेरा भी बताया जो शिक्षा का व्यवसाय करते हैं।

भारत में हालात इतने बुरे हो गए कि नामांकन कराने के लिए शिक्षा को कोचिंग संस्थाओं की बाध्यता बताते हुए उन्होंने कोचिंग संस्थाओं के हवाले शिक्षा को होते हुए देखा है बड़ी बात तो यह है कि आज शिक्षा व्यवस्था में प्राइवेट विश्वविद्यालयों को खोलने की मान्यता सरकार दे रही है परंतु वहां पर वंचित शिक्षार्थियों प्रवेश नहीं कर पाते क्योंकि उनकी आए उस डिग्री खरीदने के लायक नहीं होती है।

जिसके कारण पढ़े–लिखे छात्र आज प्राइवेट संस्थाओं के द्वारा बेहाल होते हुए दिखाई देते हैं जो साहित्यिक समाज के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक सिद्ध होता है।

गोविंद मिश्र जी ने धूल पौधों पर नामक उपन्यास में शिक्षा के ठेकेदारों द्वारा आधुनिक शिक्षा में हो रहे शोषण को दर्शाने का प्रयास किया है जिसमें उन्होंने एक शोध छात्रा को नायिका के रूप में प्रस्तुत किया है तथा शिक्षा के ठेकेदार के रूप में एक शिक्षक को प्रस्तुत किया है।

शिक्षा की आड़ में शिक्षक उन्हें ब्लैकमेल करते हुये तथा सेक्स के लिए कहता है जिससे नायिका की स्वतंत्रता को प्रभावित करते शिक्षा माफियाओं की सोच को दर्शाते हुए उन्होंने स्त्री की स्वतंत्रता को नष्ट होते हुए देखा है जिसे उन्हें उन्होंने अपनी स्वयं चेतना द्वारा रूप दिया है।

गोविंद मिश्र जी ने शिक्षा के आड़ में दलाली तथा शिक्षा गुरु की सेक्स संबंधी सोच को दर्शाते हुए स्त्री शोषणको लेखन के माध्यम से समाज को जगाने का प्रयास किया है उन्होंने धूल पौधों नामक उपन्यास में दांपत्य जीवन में हो रहे हस्तक्षेप तथा उन संबंधों में सामाजिक विकृतियों का रूप को चित्रित करने का प्रयास किया

है जिसके अंतर्गत शिक्षा प्रणाली का वर्णन जाल से भरा हुआ तथा अंधविश्वासों का जाल बताया है।

धर्मेंद्र सिंह बघेल के अनुसार – गोविंद मिश्र के उपन्यास धूल पौधों पर आलोचकों ने एक बात रेखांकित की है कि उनका यह उपन्यास अन्य उपन्यासों से भिन्न है तथा गोविंद मिश्र जी की साहित्यिक चेतना भी हर लेखक की अपेक्षाकृत भिन्न है वह अपने हर उपन्यास या हर रचना के लिए एक भिन्न प्रकार का वातावरण परिवेश को चुनते थे। जिसके कारण साहित्यिक चेतना मेंबेमेल से प्रतीत होने वाले पात्रों की प्रेम कथा को उन्होंने नवीनतम ढंग से प्रस्तुत किया है, जिसमें दो पात्र ऐसे हैं जो सामाजिक शैक्षिक आर्थिक यहां तक की उम्र में भी फर्क है और सभी दोस्तों से हटकर एक दृष्टि यह है कि दोनों लोग वैवाहिक जीवन जी रहे हैं। इस बेमेल से प्रेम को लड़की की संघर्ष गाथा दर्शाती है जिसे संघर्ष करने की प्रेरणा प्रेम प्रकाश से मिलती है।

साक्षात्कार के दौरान मिश्र जी ने बताया कि उपन्यास का एक अंश चाकू शीर्षक में पढ़ने आया था तब समझ में नहीं आया कि अंश का शीर्षक चाकू क्यों रखा गया है। पूरा उपन्यास पढ़ने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रेम प्रकाश के इस आत्म विश्लेषण का पूरा आशय दिखाई देता है जो बौद्धिक प्रेम प्रकाश के लिए वह लड़की जो बुद्धि के स्तर पर उनके सामने कुछ भी नहीं है। वह आइना बन कर आती है और उपन्यास में प्रेम प्रकाश का अपने लिए उनका अपना व्यक्तित्व खुल जाता है। लड़की अगर जीवन संघर्ष में प्रयुक्त होती है तो प्रेम प्रकाश से प्रमाणित होने की तरफ संघर्ष यात्रा कॉल आती है। इन दो बेमेल पात्रों के बंधन का सूत्र यह है कि प्रेम प्रकाश के लिए आईना का सामने रखा जाना और मृत प्राय लड़की में जीवन जीने की लालसा का जागना।

ज्यों–ज्यों उपन्यास इस प्रेम के उर्स हाउ कथा अंत दोनों के लिए आगे बढ़ता है तो यह सवाल पैदा हो जाता है कि इस तरह के प्रेम की अंततः परिणीति क्या हो सकती है?

और अगर कोई परिणीति नहीं हो सकती तो उसकी सार्थकता क्या आईना और संघर्ष तक है?

लड़की सुरक्षा चाहती है, प्रेम प्रकाश के साथ रहने में अपना जीवन वह संपूर्ण समझती है प्रेम प्रकाश को यह जीवन जीने में विध्वंस सा प्रतीत होता है अन्यों के जीवन का तहस–नहस हो ना यह आम बातें क्योंकि लड़की नई पीढ़ी की है और प्रेम प्रकाश पुरानी पीढ़ी के।

वहां मायके की यह परिकल्पना ठीक लगती है, लेकिन क्या जीवन का यथार्थ और उपन्यास का यथार्थ एक होते हैं या होना चाहिए। अगर जीवन के यथार्थ से पृथक उपन्यास का यथार्थ वह है जिसे 'स्ट्रक्चर्ड रियल्टी' कहते हैं तो हमें यह देखना होगा कि 'धूल पौधों पर' में जो यह श्मायकेश वाली अवधारणा रखी गई है यह उस 'स्ट्रक्चर्ड रियल्टी' से कहां तक मेल खाती है।

उपन्यास के सीढी–दर–सीढी आगे बढने के दरमियान भी पाठक की राय यही बनती है कि प्रेमप्रकाश अपनी तमाम बौद्धिकता के बावजूद लड़की के सामने हल्के पड़ते हैं। इस तरह इस उपन्यास में भी गोविंद मिश्र की वही आलोचना करनी पडती है कि उनके पुरुष पात्र उनके नारी पात्रों के सामने बहुत उथले, बहुत छूंछे होते हैं।

निष्कर्ष :–

गोविंद मिश्र द्वारा रचित उपन्यास धूल पौधों पर सन 2008 में प्रकाशित हुई धूल पौधों पर नामक उपन्यास सभी उपन्यासों के आकार में छोटा हैं परंतु बहुत ही महत्वपूर्ण उपन्यास हैं।

इस उपन्यास के अंतर्गत महत्वाकांक्षी युवती को अपनी परंपरा के नाम पर दबाने का प्रयास करने वाले एक परिवार की कथा हैं। जिसमें युवती सास–ससुर के इस काम को उसी प्रकार दबाने का काम सिद्ध करते हैं।

इस उपन्यास के जरिए नकली धार्मिकता एवं मनुष्य स्वामियों पर तीखा व्यंग गोविंद मिश्र द्वारा किया गया हैं साथ ही साथ एक कामकाजी स्त्री की मानसिकता का सच्चा चित्रण भी गोविंद मिश्र द्वारा किया गया हैं। जिसके लेखन व उंनके साहित्यिक चेतना के लिये उन्हे सरस्वती सम्मान दिया गया।

सरस्वती सम्मान वर्ष 2013 में प्रसिद्ध हिन्दी लेखक गोबिंद मिश्र को उनके उपन्यास 'धूल पौधों पर' के लिए प्रदान किया गया था।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. सुरेश कुमार आज तक समाचार, नई दिल्ली, 28 नवंबर 2014
2. सुदेश कांत, गोविंद मिश्र के कथा साहित्य में नारी का स्वरूप, शोधादर्श पत्रिका, 17 मार्च 2020
3. गोविंद मिश्र, धूल पौधों पर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली 2014, पृष्ठ संख्या 84 से लेकर 88 तक
4. अनिल कुमार, गोविंद मिश्र के उपन्यासों में चित्रित समाज एवं संस्कृति का स्वरूप, सेतु पत्रिका, जुलाई 2018
5. धर्मेंद्र सिंह बघेल बेमेल की कथा, देश बंधु, समाचार पत्र, 19 सितंबर 2010

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 116-120

शैक्षिक परिदृश्य में समयोचित पुनरूत्थान : महत्व और औचित्य

डॉ0 अखिला सिंह गौर
असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा शास्त्र विभाग, डी.ए.वी. कालेज, कानपुर।

विचारधारा, मूल्य और शिक्षा आपस में इस तरह जुड़े हैं कि एक को दूसरे से अलग देखना सही वस्तुस्थिति का ज्ञान नहीं करा सकता। तीनों क्रमशः संगठित व्यक्तित्व के विचारात्मक, भावात्मक और क्रियात्मक पहलू में समाहित हैं। ये तीनों एक दूसरे से प्रभावित होते हैं और एक दूसरे को प्रभावित भी करते हैं। ज्ञान, शक्ति, प्रेम और कौशल से अनुकूलता ही संगठित है। वर्तमान विचारधारा भौतिकवाद से प्रभावित रही तथा अन्य क्षेत्र उपेक्षित रह गए। परिणामतः समाज में पारिवारिक विघटन, न्यायपालिका का कुंठित होना, विषमताएँ और वैमनस्य बढ़े। ऐसा विश्वास होने लगा कि हम आने वाली पीढ़ियों के लिए कोई उम्मीद नहीं छोड़ रहे हैं तथा सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय चंद विशेषाधिकार प्राप्त लोगों द्वारा ले लिया गया है। तार्किक दृष्टिकोण भी प्रभावित हुआ जिससे विद्यमान प्रणालियों के न्यायोचित प्रयोग द्वारा वांछित लक्ष्यपूर्ति नहीं हो सकी। वस्तुतः कोई भी सिद्धान्त अमूर्त में अस्तित्व नहीं रखता। वास्तविक उपयोग के बिना इसका कोई अर्थ नहीं है।

मूल्य आत्म की संगठित और एकीकृत करने वाली दिशा है। मानव की विशेषता है कि वह वातावरण का शिकार होने से इंकार करता है। मानव के पास वातावरण में होने वाले परिवर्तनों से समायोजित होने की क्षमता होती है। बेहतर जीवन के लिए प्रयत्नशील रहना मनुष्य के लिए स्वाभाविक क्रिया है। वास्तव में, मूल्य परिभाषित करने की वस्तु नहीं अपितु आचरण में लक्षित करना ही मूल्य का वास्तविक अस्तित्व है। मूल्य प्राथमिकता से भिन्न है क्योंकि प्राथमिकता में विकल्प की गुंजाइश होती है किंतु आत्मसात किए गए मूल्य का कोई विकल्प नहीं होता। व्यक्ति का समस्त व्यवहार उसी से निर्देशित होता है। हम कह सकते हैं कि मनुष्य मूल्यों के साथ पैदा होता है। अच्छा–बुरा, सही–गलत का प्रत्यय ऑर्नल्ड टोयन्बी द्वारा वर्गीकृत सभी उन्नीस सभ्यताओं में पाया जाता है। मूल्य नष्ट भी होते हैं और उनका पुनरुत्थान भी होता है। समय की मांग है कि मूल्यों का पुनरुत्थान हो। चिरंतन मूल्य (जो सदा एक ही रहते हैं) जाग्रत किए जाएं जो कि व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करने में सर्वाधिक शक्तिशाली कारक हैं।

शिक्षा के संबंध में आजकल दो प्रमुख मान्यताएं प्रचलित हैं। एक तो यह कि शिक्षा को रोज़गारोन्मुखी होना चाहिए और द्वितीय यह कि शिक्षा मूल्योन्मुखी होनी चाहिए। रोज़गारोन्मुखी शिक्षा व्यक्ति को रोज़गार द्वारा जीविकोपार्जन हेतु तैयार करने को मुख्य उद्देश्य मानती है तथा मूल्योन्मुखी शिक्षा व्यक्ति/राष्ट्र/चरित्र निर्माण को मुख्य महत्व देती है जोकि स्थाई, दीर्घकालिक लाभ और गुणवत्ता हेतु आवश्यक है। लघुकालिक उद्देश्य हेतु शिक्षा तात्कालिक सामाजिक पहलुओं एवं कौशल मांग से संबंधित हो सकती है जो दीर्घकालिक उद्देश्यों

तक पहुंचने में सहायक हो। अल्पकालिक उद्देश्य विभिन्न समय पर अलग–अलग हो सकते हैं किंतु चारित्रिक निर्माण एवं आदर्श नागरिक का उत्तरदायित्व निभाने हेतु तैयार करना शिक्षा का चिरंतन उद्देश्य है। आवश्यकता है कि हमारी शिक्षा प्रणाली संतुलित रूप से इन अपेक्षाओं की पूर्ति करने में सक्षम हो। एक अध्ययन के अनुसार समस्त युवावर्ग इस बात पर सहमत है कि शिक्षा का अर्थ केवल डिग्री प्राप्त करना और व्यक्ति को रोज़गार पाने योग्य बनाना ही नहीं है। शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति का संपूर्ण विकास है और अनिवार्य मूलभूत तथ्यों को देखने समझने की सामर्थ्य जाग्रत करना है। यहां पर यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि मूल्य–शिक्षण और सूचना–शिक्षण एक ही शिक्षण विधि से देना संभव नहीं।

मूल्य संकट और वर्तमान चुनौती :–

साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है। साहित्य का एक और कार्य भी है दिशा बोध जिसे पाठ्यक्रम के माध्यम से पूरा करने का प्रयास किया जाता है। बस्तों का बढ़ता बोझ पुस्तकीय ज्ञान पर बल देने की मानसिकता को दर्शाता है। इसे कम करने की ओर जारी प्रयास आशान्वित करते हैं कि हमसार्थक और उपयोगी शिक्षा की ओर बढ़ेगें। बालक की स्वाभाविक और मौलिक प्रतिक्रियाएं कक्षा के सीमित वातावरण, पाठ्यक्रम एवं परीक्षा प्रणाली को अपेक्षानुसार नियंत्रित करने से बालक में विद्यमान योग्यताओं व शक्तियों का पूर्ण विकास और उपयोग नहीं हो पाता जो मनोवैज्ञानिक रूप से अहितकर है तथा राष्ट्रहित और आर्थिक विकास दोनों के लिए हानिकारक है। पुस्तकीय ज्ञान द्विविधा में पड़ जाता है जब व्यक्ति देखता है कि व्यावहारिक जीवन में विपरीत आचरण तत्कालिक पुरस्कार दिला रहा है। सुख का सिद्धांत (लॉ ऑफ प्लैज़र) भी अपनी शक्ति दिखाता है। जो पुस्तक में निहित मूल्य से विपरीत आचरण की ओर संकेत करता है और व्यक्ति की सार्थक शक्तियां तनाव और दुविधा की स्थिति में व्यय होती रहती है। मूल्य संबंधी शिक्षा का पता इस बात से चलता है कि व्यक्ति क्या करता है न कि इससे कि वह क्या जानता है। अतः दिशा निर्देश मात्र पुस्तक में ही होने से हमारे कर्तव्य की इतिश्री नहीं हो जाती जब तक कि हम व्यावहारिक जीवन में इसकी प्राप्ति को संभव और सरल बनाने वाली परिस्थितियां और वातावरण नहीं दे पाते। अपनी आशातीत सफलता पर सशक्त अभिनेता नाना पाटेकर का कथन, ''मेरा प्रशिक्षण पुणे इंस्टीटयूट में नहीं हुआ मेरा प्रशिक्षण भूख और अपमान के इंस्टीटयूट में हुआ है'', परिस्थिति व वातावरण के सशक्त प्रभाव की पुष्टि करता है जो सैद्धान्तिक व औपचारिक प्रशिक्षण से अधिक प्रभावशाली है। शिक्षा का एक अनिवार्य कार्य योग्यताओं में परिवर्तन है।

शिक्षण और अधिगम जीवनपर्यन्त चलने वाली क्रियाएं हैं। शिक्षा के उद्देश्य में शिक्षण साधन है और अधिगम (सीखना) साध्य। सीखना अनुभव अथवा अभ्यास के परिणामस्वरूप व्यवहार में होने वाला अपेक्षाकृत स्थाई परिवर्तन है। उपरोक्त स्वभाव तथा इस तथ्य के कारण भी कि जीवन के प्रारंभिक काल में सीखे गए मूल्य आदि अधिक प्रभावशाली होते हैं, भावी जीवन में व्यक्ति के विचार, निर्णय और व्यवहार इन्हीं से प्रभावित रहते हैं। इस वास्तविकता को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि विद्यार्थी जीवन में उचित समय पर मूल्य संबंधी शिक्षा दी जाए। अलग से विषय सम्मिलित करना संभव न भी हो तथापि विभिन्न विषयों में पाठ्यक्रम के माध्यम से विद्यार्थी में इच्छित मूल्यों के अंकुर स्थापित किए जा सकते हैं। जिसे फल जीवनपर्यन्त उसके आचरण में मिलेंगे। शिक्षा मात्र यांत्रिक रूप से सिखाने वाली न होकर व्यावहारिक परिवर्तन के रूप में लक्षित हो, यही शिक्षा की सार्थकता है।

यहां व्यवहार से अर्थ व्यक्ति के भीतरी चिंतन, विचार, भाव आदि और बाहरी दोनों प्रकार के व्यवहार से है जो उसके द्वारा ग्रहण किए गए मूल्यों के अनुसार संचालित होते हैं। अपनी मान्यताओं के अनुसार व्यवहार न कर सकने वाला व्यक्ति परेशान हो उठता है। उसकी क्रियात्मक शक्तियां नकारात्मक क्षेत्र में व्यय हो जाती हैं। विभिन्न अंगों में शारीरिक संगतता न होने पर उपचार की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार मानसिक असंगतता होने पर भी, जैसे सही–गलत, वांछित–अवांछित का ज्ञान होने पर भी सही दिशा में क्रियाएं न कर पाना। हमारे युग का भयंकर रोग मूल्यहीनता है। अतः मूल्य–स्पष्टता भी अत्यावश्यक है। वर्तमान युग की महानतम पहचान तनाव के मूल में भी मूल्यहीनता ही मूल कारण है। इससे व्यक्ति भटक जाता है और उसकी शक्तियां सही जगह प्रयुक्त नहीं हो पातीं। यदि प्रारंभ से ही व्यक्ति को स्पष्ट हो कि उसके जीवन–मूल्य क्या है तो उसकी समस्त क्रियाएं उनसे निर्देशित होंगी। उसे आभास रहेगा कि अपने इष्ट की प्राप्ति हेतु उसे इन्हीं मूल्यों के अनुसार चलना है। उनसे परे नहीं जाना। इससे अनावश्यक समस्याएं, मानसिक उलझनें, आदि से बचाव के अतिरिक्त निम्नलिखित परिस्थितियां भी सहायक होगीः।

1. कम तनाव
2. स्वास्थ्य पर कुप्रभाव से बचाव
3. कम सामाजिक समस्याएं
4. समय व शक्ति का निर्माणात्मक दिशा में व्यय
5. कम विरोध अधिक संतुष्टि
6. शीघ्र निर्णय
7. भावी पीढ़ियों हेतु आदर्श
8. देश के लिए अधिक समर्थ नागरिक आदि।

आधुनिकीकरण से सामंजस्य :–

पश्चिमीकरण से प्रभावित मशीनी तथा मानव आचरण संबंधी बदलाव से भारतीय संस्कृति एवं मूल्यों की सुरक्षा पर एक प्रश्नचिन्ह लगा हैं कहने का तात्पर्य यह है कि प्रगति, विकास एवं आधुनिकीकरण का अर्थ मूल्यों का ह्रास नहीं है। दोनों को साथ–साथ चलना हैं विज्ञान का मुख्य आकर्षण है कि यह कभी भी समाप्त नहीं होता। प्रगति के साथ–साथ नए ज्ञान का अनावरण होता है। इसी तरह मूल्योंन्मुखता भी सदा रहने वाली स्थिति है जो नवीन परिस्थिति में अनुरूप निर्णय व व्यवहार में सहायक है। विज्ञान और मूल्य दोनों में समानता यह है कि कोई भी एक संपूर्ण स्थिति प्राप्त होने का दावा नहीं कर सकता। हमारे पास उच्च विज्ञान, उच्च तकनीकी है किंतु विज्ञान का उच्च स्वभाव नहीं है जो वैज्ञानिक संस्कृति की कुंजी है। यहां तक कि पश्चिमी देश जहां विज्ञान का प्रभुत्व है उनमें भी वास्तविक वैज्ञानिक स्वभाव का अभाव है। उन्हें अभी भी आत्मा और शरीर को सृजनात्मक समरूपता में लाना है। शिक्षा बेहतर जीवन हेतु ज्ञान का उपयोग है। यह सही व्यवहार का विकास है। यहां सही वह है जिसे हम परिभाषित न भी कर पाएं तब भी हम सब उसे महसूस करते हैं। औपचारिक रूप से प्राप्त ज्ञान को अनदेखा करते हुए भी, यदि व्यक्ति अपने व्यवहार में वही प्रतिलक्षित करें जिसे वह सही समझता है, तो भी अधिकांश समस्याएं अथवा समस्याओं का एक बड़ा भाग लुप्त हो जाएगा। विकास की गति तीव्र हो जाएगी। जीवन बेहतर होगा। अतः विज्ञान और मूल्यों का विरोधों के बिना उचित प्रवाह अपरिहार्य है।

आइन्स्टीन के अनुसार विज्ञान बिना धर्म (आचरण, मूल्य) के लंगड़ा है और धर्म बिना विज्ञान के अंधा है। एटोमिक बम के निर्माता वैज्ञानिक ओपेनहीमर जे. रॉबर्ट ने बम के विनाशात्मक प्रयोग के कारण लॉस एलामॉस से यह कहकर त्यागपत्र दे दिया था कि, ''मैं हथियारों का निर्माता नहीं हूँ।'' कोठारी कमीशन (1964–66) के अनुसार भी बिना आवश्यक मूल्य के शिक्षा खतरनाक है। जैसे कि अंग प्रत्यारोपण का ज्ञान, जिसके मूल्यहीन

प्रयोग ने सरकार को अंग–प्रत्यारोपण विरोधी कानून बनाने के लिए विवश किया। यदि उच्च विकास के साथ–साथ सांस्कृतिक राष्ट्रीय स्वत्व को सुरक्षित न रखा जा सके तो यह विकास आत्मघाती होगा।

राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य और मूल्य शिक्षा :–

राष्ट्रीय संदर्भ में देखा जाए तो मूल्योन्मुखी शिक्षा को 'टर्नअराउण्ड' प्रबंध का समानार्थी कहना अनुचित न होगा। कर चोरी, शोषण, सार्वजनिक संपति की हानि, श्रम चोरी, कर्तव्य–उत्तरदायित्व हीनता, विद्युत–जल व्यर्थ करना, यत्र–तत्र कूड़ा छोड़ना/फेंकना आदि मूल्यहीनता के कुछ प्रतिलक्षण हैं। ये व्यवहार राष्ट्रीय विकास के शत्रु हैं। शिक्षा का अभीष्ट ज्ञान भंडारण में नहीं अपितु उसके प्रयोग में हैं। यह प्रयोग व्यक्ति के मूल्यों के अनुसार निर्देशित होता है। वर्तमान शिक्षा हमें तथ्य ज्ञान तो देती है किंतु तदनुसार वैचारिक परिवर्तन बहुत धीमी गति से होता है तथा व्यावहारिक रूप से शिक्षित की संज्ञा पाने योग्य कुछ ही नागरिक बन पाते हैं। राष्ट्र के विकास और उन्नति के लिए उचित कौशल युक्त, दायित्व–बोधयुक्त नागरिक चाहिए। यही वर्तमान शिक्षा प्रणाली को चुनौती है।

परिवर्तन और मूल्य :–

शिक्षा का एक मुख्य उद्देश्य मानव को इस योग्य बनाना है कि वह निरंतर परिवर्तनशील वातावरण से आवश्यक समायोजन कर सके। इसमें स्वयं को वातावरण के तथा वातावरण को स्वयं के स्वास्थ्य समायोजन हेतु तैयार करना दोनों ही सम्मिलित है। सही ढंग से निर्दिष्ट करने पर परिवर्तन सहनशीलता, समायोजनशीलता, सहयोग, सक्रियता और आत्मविश्वास आदि सिखा सकता हैं तकनीकी परिवर्तनों के साथ–साथ सामाजिक और नैतिक मूल्यों में भी परिवर्तन आते हैं। आवश्यक नहीं कि हर समाज के मूल्य समान हों पर शिक्षा शिक्षार्थी को उन योग्यताओं को अर्जित करने में सहायक हो सकती है जो उचित निष्कर्षों पर पहुंचने में सहायक हों। शिक्षण संस्थाएं इसके लिए सर्वोत्तम कार्यस्थल हैं क्योंकि इस समय उचित बीज का रोपण फल प्राप्ति की संभावना को बढ़ाता है। प्रथम बार सही सीखना सरल है। अन्यथा अधिगम (सीखना) से भी अनधिगम की स्थिति में जाकर पुनः नया सीखना कठिन भी है और समय व शक्ति की व्यर्थता भी। यदि विभिन्न शिक्षा कार्यक्रमों के साथ मूल्य–प्रत्यारोपण कार्य भी सम्मिलित कर लिया जाए तो तथ्य ज्ञान व कर्म ज्ञान दोनों की प्राप्ति हो सकती है। इससे जनसंख्या, वातावरण, मानव–गरिमा, आदि के बारे में जागृति–बोध भी कराया जा सकता है।

शिक्षक का औचित्य :–

शिक्षक के बिना विद्यालय की कल्पना अधूरी है। वह स्वयं को एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत कर सकता है। वह वांछित मूल्य और व्यवहार हेतु निरंतर प्रेरणा दे सकता है। स्पष्ट रूप से वर्तमान में हमारे अधिकांश विद्यालयों में कक्षाएं मानव शिक्षक के नेतृत्व में ही हैं। शिक्षक का प्रभाव पड़ना अपरिहार्य है। अतः और अधिक उत्तरदायित्व की भावना से युक्त होकर शिक्षकगण को आगे आना होगा। समयानुसार विद्यार्थियों को स्वयं, समाज व राष्ट्र के लिए विभिन्न मूल्यों का महत्व समझाकर उन्हें जीवन में अपनाने के लिए निरंतर प्रेरित एवं निर्देशित करना होगा। इसके लिए शिक्षकगण से अपेक्षा है कि नवीनतम ज्ञान से निरंतर परिचय रखें व विद्यार्थियों के अद्यतन ज्ञान दें, मौलिकता को बढ़ावा दें, उनके संपूर्ण विकास में सहयोग प्रदान करें और स्वयं आदर्श बनें।

आगामी कार्यपथ :–

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मूल्यों की पुनःस्थापना की अनिवार्यता स्वीकार की जा चुकी है। इसके बिना स्थाई

विकास का कोई मार्ग दृष्टिगोचर नहीं होता। उन्नत से उन्नत व्यवस्थाएं और उपकरण उचित मूल्यों द्वारा निर्देशित मानव–शक्ति के अभाव में आशान्वित नहीं कर सकते। मशीनों से मानव की ओर के इस युग की शुरूआत से आशा की जा सकती है। गलत भाव अथवा उत्तेजना को उपचार योग्य रोग मानते हुए हमें मूल्य संपन्न व्यक्ति के निर्माण कार्य में पुनः जुट जाना है। मानव संसाधन मंत्रालय की स्थापना, मानव संसाधन विकास नीतियों और कार्यक्रमों पर बल, मुक्त, शिक्षण का आरंभ और लुप्त–लुप्त मूल्यों को वापस लाने हेतु बढ़े कदम मानव जाति की उत्तमता के प्रमाण है। कुछ व्यवहारिक कदम इस दिशा में मंज़िल प्राप्ति में सहायक होंगे। वे है :

1. संगठित मूल्य स्पष्टता कार्यक्रम
2. शिक्षक प्रशिक्षण और प्रेरणा
3. आत्म साक्षात्कार का समावेश (प्रार्थना के समय)
4. संबंधित साहित्य की उपलब्धता
5. संवेदनात्मक प्रशिक्षण
6. उचित प्रेरणा एवं पुरस्कार
7. समस्या विश्लेषण कार्यक्रम
8. संचार माध्यमों में सहयोग।

संदर्भ :–

1. खन्ना, सी.पी. (1990), एटरनल एजूकेशन, नई दिल्ली, दोआब हाउस।
2. शेषन, टी.एन. 5 फरवरी (1995) : हिन्दुस्तान टाइम्स में ए हार्ट फुल ऑफ बडन से उद्घृत।
3. नाजारथ, एम. पिआ एवं साथी (1979): पर्सनल वैल्यूज में उद्घृत गांधी जी का कथन, नई दिल्ली, आल इंडिया एसोसिएशन ऑफ कैथोलिक स्कूल्स।
4. गुप्ता, एन.एल. (1992): क्रिएटिविटी एंड वैल्यूजः एजुकेशनल पर्सपैक्टिब्स, नई दिल्ली, आर्य बुक डिपो, पृष्ठ 79
5. रूहेला, सत्यपाल (1986): ह्यूमन वैल्यूज एंड एजूकेशन, नई दिल्ली, स्टरलिंग पब्लिकेशन प्रा.लि.।
6. हिन्दुस्तान टाइम्स 5 फरवरी (1995): हिंदुस्तान टाइम्स द्वारा प्रायोजित एवं इन्स्टीट्यूट ऑफ मार्केटिंग एंड मैनेजमेन्ट द्वारा आयोजित डिक्लेमेशन कान्टेस्ट के आधार पर।
7. नाना पाटेकर, 12 फरवरी (1995): हिंदुस्तान टाइम्स।
8. लर्निंग टू बी (1972) दि इन्टरनेशनल कमीशन ऑन दि डेवलपमेन्ट ऑफ एजूकेशन (यूनेस्को द्वारा स्थापित) द्वारा दी गई रिपोर्ट।
9. मॉर्गन क्लॉफर्ड एवं साथी, (1992) : इन्ट्रोडक्शन टू साइक्लाजी, नई दिल्ली, मैक ग्रॉ हिल पब्लिकेशन कं.लि.।
10. मैस्लो, ए.एच. (स.) (1959) : न्यू नालेज इन ह्यूमन वैल्यूज, न्यूयार्क, हार्पर एंड रो, पृष्ठ 8.

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 121-125

प्रवासी साहित्य और भारतीयता

डॉ0 पूनम मियान
बी–502/ए, डबल स्टोरी ब्रिज विहार, गाज़ियाबाद, उ0प्र0–201011

सार संक्षेप :–

प्रवासी साहित्य से आशय है प्रवासी लोगों द्वारा लिखा गया साहित्य। अर्थात् हमारे देश के जो लोग विदेशों में रहकर हिन्दी साहित्य पर अपनी लेखनी चला रहे हैं, उनके द्वारा लिखे गए साहित्य को प्रवासी साहित्य कहा जाता है। भारतीयता का अर्थ है–भारत से संबंधित। जिसमें भारतीय तत्वों का बोध हो जो भारतीय संस्कृति अपनी समन्यवादी प्रवृति के कारण व्यापक और विशाल है। जिसमें जीवन के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा आध्यात्मिक प्रवृति का अद्भुत समन्वय पाया जाता है।

भारत के लोग विश्व के विभिन्न देशों में निवास कर रहे हैं। वहीं रहकर वे लोग भारतीय साहित्य की साधना कर रहे हैं। साथ ही वह साहित्य पूरे विश्व में भारतीयता का परिचय दे रहा है।

साहित्यकार एक युग–परिवर्तन के रुप में समाज़ के मुखिया की तरह सामाज़िक पीढ़ा को उभारकर सामाज़िक व्यवस्था का सही निरूपण अपनी रचनाओं में करता है। प्रवासी साहित्यकारों ने अपने साहित्य सृजन से न केवल भारत को बल्कि पूरे विश्व को गौरवान्वित किया है। समाज़ व्यक्ति की प्रगति का आधार है। समय के साथ–साथ समाज़ में परिवर्तन होता रहता है। एक साहित्यकार अपनी लेखनी के माध्यम से समाज़ में महापरिवर्तन की बेला ले आता है। वह सामाज़ की हर घटना को देखता है, परखता है, महसूस करता है फिर अपनी कलम से उसे आकार देता है। तथा तत्कालीन सामाज़ की अनुभूतियों को अभिव्यक्त करता है।

बीज शब्द :– प्रवासी, साहित्य, भारतीय, संस्कृति, सामाज़, सभ्यता, साहित्यकार, सृजनात्मकता।

प्रवासी साहित्य के अंतर्गत कविताएं, उपन्यास, कहानियां, नाटक, एकांकी, महाकाव्य, खंडकाव्य, अनूदित साहित्य, यात्रावर्णन, इत्यादि का सृजन हुआ हैं। प्रवासी साहित्यकारों ने अपनी उत्कृष्ट रचनाओं द्वारा भारतीयता को सुरक्षित रखा है। प्रवासी साहित्यकार मॉरिशस, अमेरिका, ब्रिटेन, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, इंडोनेशिया, नार्वे, जर्मनी, फिजी, जापान, दक्षिण अफ्रीका, रूस, त्रिनिदाद, सूरीनाम आदि स्थानों को अपनी कर्मभूमि स्वीकार करते हुए साहित्य सृजन करते आए हैं। इन साहित्यकारों ने अपनी लेखनी के द्वारा नीति–मूल्य, मिथक इतिहास, सभ्यता व संस्कृति को आधार बनाकर भारतीयता को उजागर किया है।

प्रवासी हिंदी साहित्य में प्रवासी प्रक्रिया का वैचारिक प्रारंभ मुंशी प्रेमचंद की कहानी 'शूद्रा' मॉरिशस के गिरमिटीया मजदूरों के जीवन पर आधारित है। प्रवासी साहित्य की बुनियाद भारत–प्रेम पर टिकी है। प्रवासी हिन्दी साहित्य के मूल में जिस अकुलाहट बैचेनी को महसूस किया गया है उसे परंपरा एंव अपनी संस्कृति से

कटने के संदर्भ में समझा जा सकता हैं। भारतीय एवं पश्चिमी संस्कृति के बीच झूलते प्रवासी भारतीयों के मानसिक आंदोलन का चित्रण प्रवासी हिंदी साहित्य की मुख्यधारा है। प्रवासी साहित्यकारों ने हिन्दी को विश्व भाषा बनाने में महत्वूपर्ण भूमिका निभाई हैं।

प्रवासियों द्वारा निर्मित अपनी सृजनात्मकता साहित्य का छोटा सा किंतु विश्व के चारों ओर फैला हुआ आकाश निर्मित हैं। इन्होंने हिंदी की एक अलग दुनिया बनाई हैं। ये साहित्यकार भारत के प्रति अपनी संवेदना को भारतीय संस्कृति से जोड़े रखते हैं। विश्व के अनेक देश जहाँ भारतीय मौजूद हैं वहाँ प्रचलित भाषा, उनके मध्य बसी संस्कृति, तीज़ त्यौहार, रहन–सहन को देखकर ऐसा प्रतीत होता हैं मानो भारत के किसी राज्य का हिस्सा हो। उनके द्वारा रचित साहित्य में भारत के आचार–विचार संस्कृति संस्कार जीवन मूल्यों में भारतीयता स्पश्ट दृष्टिगोचर होती है।

किसी भी समाज़ व संस्कृति का ज्ञान उसके भाषा से होता हैं। साहित्यकार भाषा, संस्कृति और समाज को आगे बढ़ाता हैं। भारतीय मूल की लेखिकाएं जो पश्चिमी देशों में रहकर साहित्यिक रचनाएं लिख रही हैं। उन्हें विदेशी संस्कृति, विदेशी परिवेश, तकलीफ देता हैं। जहाँ कोरे आँख ऐसी नहीं दिखती जिसमें वे अपनी संवेदनाओं को संवाहित कर सके। भारत में रिश्तों को बेहद महत्व दिया जाता हैं।

अभिमन्यु अनत के उपन्यासों के पात्रों की धार्मिक एवं नैतिक मान्यताएं भारतीय हैं। सारा वातावरण भारतीय लगता हैं। काली माई का चौतरा, हनुमान जी पूजा, रामायण पाठ, धूमकेतु होली, भजन–कीर्तन, मॉरिशस के विवाह संस्कारों जन्मकुंडली, ग्रह–नक्षत्र आदि पर भी विश्वास किया जाता हैं। भारतीय संस्कृति में गंगाजल का सर्वोच्च स्थान है। मॉरिशस के भारतीय मूल के लोग वहाँ के परी तालाब के जल को गंगा सा पवित्र मानकर जीवन के हर सांस्कृतिक क्रिया–कलाप में उसका प्रयोग करते हैं।

रामायण और महाभारत भारतीय संस्कृति के आधार भूत ग्रंथ माने जाते हैं। 'जम गया सूरज' अभिमन्यु अनत द्वारा लिखे गए उपन्यास का लालगमन अपने घर की दीवार पर रामायण महाभारत के कुछ चित्रों को देखकर सोचता हैं कि वे दिन सच्चे थे प्रवासी रचनाकारों ने भारतीय संस्कृति को अपने नस–नस में भर लिया। प्रवासी सामाज़िक संस्कार, विवाह, शिवलिंग पूजन, सत्यनारायण की कथा, सूर्य पूजा, तुलसी पूजा आदि धार्मिक मान्यताओं को बड़े उत्साह से अपनाते हैं। प्रवासी साहित्य में सुख–दुःख, हास्य रूदन, प्रेम घृणा, जिजीविषा–जिज्ञासा समस्त मानवीय अनुभवों संवेदनाओं का समावेश मिलता हैं। साहित्य का आधार उसका उत्स मानवीय अनूभूतियाँ होती हैं।

साहित्य पाठक के मानसिक, बौद्धिक, सामाज़िक, सांस्कृतिक और संवेदात्मक क्षितिज का विकास करता है। साहित्यकार अपने समय और अपने समाज की उपज होता है। वह जरा ज्यादा ही संवदेनशील प्राणी होता है। भारत से बाहर जो भारतवंशी गए या बंधुआ मजदूर बनाकर ले जाए गए। उन्होंने भारतीयता की पहचान बनाए रखने के लिए रामायण और हनुमान चालीसा को कंठस्थ किया। वे आराम के क्षणों में उसको गाते और सुनाते थे। यहीं पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहा। आज इन पूर्वज़ों की गाथाओं को प्रवासी साहित्यकार बखूबी रच रहे हैं।

वर्तमान में रचे जा रहे साहित्य में प्रवासी साहित्यकार अपने देश के साथ–साथ संपूर्ण विश्व से अपना जुड़ाव अभिव्यक्त कर रहे हैं। यही कारण है कि उनके साहित्य में प्रवासी भूमि के साथ ही अपने देश के प्रति

प्रेम की भावना देखने को मिलती है। वस्तुतः देखा जाए तो आज के प्रवासी की संपूर्ण दृष्टि भारत के रंग में रंगी हुई हैं। साथ ही इनके साहित्य में आधुनिक दौड़ एवं मानवीय संवेदना का यथार्थ रूप देखने को मिलता है।

सुषम वेदी की कहानी 'अवसान' एक ऐसे प्रवासी व्यक्ति शंकर की कहानी है जिसके मित्र दिवाकर की मृत्यु हो गई है। उसके पाँच बच्चे हैं उसकी तीसरी अमेरिकी पत्नी हेलन उसका अंतिम संस्कार चर्च में अपने तरीके से कर रही हैं। शंकर चर्च में पादरी द्वारा किए जा रहे है रीति–रीवाजों से बहुत विचलित है। उसका हिंदु मन इन्हें स्वीकार नहीं कर पा रहा है। नास्तिक होते हुए भी दोनों दोस्तों ने गीता, महाभारत तथा रामायण आदि पढ़ रखे थे। शंकर के मन में अभी भी भारत और भारत के रीति–रिवाज़ बसे हुए थे। शंकर के कान जैसे किन्हीं मंत्रोच्चार के लिए खुले बैठे थे, आँखें जैसे अग्नि की लपटों के लिए अकुला रही थीं। नासिका में घी और हवन की सामग्री की गंध कुलबुला रही थी। पर गिरजाघर में केवल पादरी की आवाज गूँज रही थी।

शंकर बहुत बेचैनी अनुभव करता है। कहानी के अंत में वह सधी हुई आवाज़ में गीता पाठ करने लगता है। कहानीकार दिखाती हैं कि मानवीय अनुभूतियाँ और संस्कार बचपन से ही व्यक्ति में गहरे बैठ जाते हैं।

वह कहीं भी रहे उसका मन इन्हीं में सहजता अनुभव करता है। तेजेन्द्र शर्मा की कहानी 'पासपोर्ट का रंग' गोपालदास की कहानी है जिन्हें मजबूरी में ब्रिटेन की नागरिकता लेनी पड़ती हैं पत्नी की मृत्यु के बाद उनका बेटा इंद्रेश उन्हें अपने साथ इंग्लैंड ले आया है। जहाँ न किसी से उनके विचार मिलते हैं न मूल्य और न ही जीवन शैली। जिस ब्रिटिश साम्राज्य को निकाल भगाने के लिए गोपालदास ने अपनी बाँह में गोली खाई उसी ब्रिटिश नागरिकता के लिए महारानी की वफ़ादारी की शपथ उन्हें लेनी पड़ती हैं। यह शपथ उनकी मानसिक व्यथा का कारण बन जाती है। उन्हें यह बात कचोटती है कि अपनी जन्मभूमि के लिए उन्हें वीज़ा लेना होगा। इसी बीच प्रवास मंत्री के हाथों दोहरी नागरिकता के फॉर्म बाँटने की खबर आई, गोपालदास को तसल्ली होती है कि अब उनका अशोक के शेर वाला नीला पासपोर्ट एक बार फिर से जीवित हो उठेगा। वे अंत में भारतीय नागरिकता का इंतजार करते–करते इतने थक जाते हैं कि देश, परदेश ही नहीं दुनिया छोड़ जाते हैं।

अर्चना पेन्यूली की कहानी 'मैंने सही चुनाव किया न' कहानी की नायिका अनिता अपने मूल देश भारत आई है। वह पहली बार नहीं आ रही है इस बार उसका भारत आना विशेष कारण से हुआ है। असल में उसकी बहन ने एक इजरायली लड़के के साथ रहना शुरू करके अपने परिवार की नाक कटा दी है। उसी नाक की रक्षा के लिए वे अपनी दूसरी लड़की अनिता की शादी करने भारत आए हैं। डेनमार्क में उनका परिवार एक आदर्श परिवार माना जाता हैं। विदेश में भारतीय मूल्यों का संरक्षक माना जाता हैं। अनिता अपने परिवार के सभी सदस्यों से प्रेम करती हैं। उसके मन में विवाह को लेकर कोई गंभीर विचार नहीं हैं। उसे यह पता नहीं हैं कि परिवार के सम्मान के लिए उसकी बलि चढ़ाई जा रही है। भारत में मात्र बी.ए. पास बिना नौकरी वाले अनिल नामक लड़के से उसकी शादी तय की जाती है। अनिता शादी की चमक–दमक से खूब खुश है। उसे मेहंदी कपड़े गहने सब अच्छे लग रहे हैं। उसके लिए यह सब खेल है।

यह संयोग कि बात है कि अनिल एक मेहनती, ईमानदार और सीधा सादा युवक है। अनिता के सिगरेट पीने पर वह उसे सलाह देते हुए कहता है, मैं तुम्हें यह अवश्य कहूँगा कि सिगरेट सेहत के लिए हानिकारक है। तुम व्यसनी बनो इससे पहले ही छोड़ दो। डेनमार्क में अनिता का मोर्गन खास मित्र है। अनिल के आने पर वह दुविधा में है। शादी के दो साल बाद जब दोनों पहली बार एकांत में होते हैं। तब अनिल कहता है : हमारे

दामपत्य की यात्रा आज से शुरु हो रही है। हम प्रतिज्ञा करते हैं कि हमारी वैवाहिक यात्रा एक दूसरे की मौत पर ही खत्म होगी। यह बात अनिता के मर्म को स्पर्श कर जाती है। अनिता अनिल को चुनती है। मोर्गन को अपने जीवन से सद्भाव के साथ विदा करके अपने वैवाहिक जीवन को सजाने संवारने में लग जाती है। पति–पत्नी में काफी समझदारी है इस कहानी में अनिता स्वयं निर्णय लेती है वह सामाजिक स्वीकृति की अपेक्षा रखती है।

प्रवासी साहित्यकारों का मन अपने मूल देश–भारत में ही रमा रहता हैं। 'जहाँआरा' कीर्ति चौधरी द्वारा रचित एक हैदराबादी लड़की की कहानी है जो नौकरी के सिलसिले में लंदन आकर बस गयी है। कहानी की नायिका 'उषा' जो भारतीय संस्कारों से जुड़ी है वह वहाँ का खुलापन असानी से स्वीकार नहीं कर पाती है।

आज संसार के विभिन्न देशों में दो करोड़ से अधिक भारतवासी रह रहे हैं और उनकी आकांक्षा भारत के साथ जुड़े रहने की रही है वहाँ उनकी कई पीढ़ियाँ गुजर गई फिर भी वे भारतीय भाषा, हिंदी भारत के धर्म, भारत की संस्कृति, भारत की लोकगाथा, भारत के रीति–रीवाज़ से अपने आपको भिन्न नहीं मानते और निरंतर यह प्रयास करते रहते हैं कि भारतीयता को जीवित रखा जाए। हिंदी का प्रवासी साहित्य भारतेतर देशों को भारत से जोड़ने का एक सेतु बनता है जिसके मूल में भारतवंशियों का स्वदेश प्रेम, भाषा प्रेम, संस्कृति प्रेम के साथ उनकी संलग्नता, सहभागिता एवं सहयोग अटूट रूप से सम्बद्व है। प्रवासी साहित्य विदेशों में भारतीयता एवं भारतीय सांस्कृतिक चेतना का संवाहक है।

इस प्रवासी साहित्य ने अपनी विशिष्ट पहचान बनायी है। प्रवासी साहित्य ने हिंदी साहित्य की एक नई दिशा खोली है, एक नया साहित्यिक संसार हमें मिला हैं एक नया विचार, नयी संवेदना तथा नया सरोकर प्रवासी साहित्य ने प्रस्तुत किया है। दिव्या माथुर की कहानी 'ठुल्ला किलब' भारतीयता को हरेक स्तर पर पकड़ती हैं इस कहानी में लेखिका ने पश्चिम में रह रहे भारतीय मूल के बुजुर्गों की मानसिकता का चित्रण किया हैं। कैसे देशी मां–बाप को उनकी संतानों द्वारा विदेश में रहने को बाध्य किया जाता है। जहां उनका बिल्कुल भी मन नहीं लगता है। उन्हें बार–बार भारतीय परिवेश रहन–सहन, खान–पान याद आता है। भारतीय मूल के बूढ़े लोग अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए मिल जुलकर ठुल्ला क्लब का गठन करते हैं। तथा अपने सुख–दुःख को एक दूसरे के साथ बाँटते हैं।

प्रवासी साहित्यकार अपनी उत्कृष्ट कृतियों से भारत के पुरातन अस्तित्व को प्रमुखता देकर पूरे विश्व में भारतवर्ष का प्रचम लहरा रहे हैं। उनकी रचनाओं को पढ़कर विदेशों में रह रहे भारतीय मूल के लोग अपने जीवन में नैतिक मूल्यों को अपना रहे हैं। साथ ही साथ भारतीय संस्कृति और विभिन्न कलाओं के माध्यम से 'वसुधैव कुटुंबकम्' के संदेश का भी प्रचार कर रहे हैं। जिससे विश्व के अनेक देशों के लोग भारतीय संस्कृति में विशेष रूचि ले रहे हैं। फीजी में किसी भी कार्यक्रम में 'ऊँ' शब्द का चिन्ह बना रहता है। यह प्रवासी भारतीयों की भारतीयता का प्रतीक है। वहाँ रामायण को ऊँचा स्थान दिया जाता है वे जहां बैठते हैं उससे ऊँचे स्थान पर रामायण रखा जाता है। धन कमाने की धुन में प्रवासियों ने अपना देश अवश्य छोड़ा था लेकिन उन्होंने भारत के अमूल्य रत्न का परित्याग नहीं किया था। ये रत्न थे रस्म–रिवाज, धार्मिक एवं नैतिक कहानियाँ और लोक गीतों का भंडार। आज़ हिंदी का बहुत सारा साहित्य विश्व की विभिन्न भाषाओं में अनूदित हो रहा है।

संदर्भ :-

1. सात समुंदर पार से–विजय शर्मा, प्रकाशक यश पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, सुभाष पार्क, नवीन शाहदरा, दिल्ली, प्रथम संस्करण– 2017 पृ0 24
2. हिंदी की विश्व व्याप्ति– डॉ0 जोगेन्द्र सिंह, प्रकाशक– अनंग प्रकाशन, गली मंदिर वाली, उत्तरी घोण्डा, दिल्ली। पृ0 35
3. प्रवासी हिंदी साहित्य विविधि आयाम :– डॉ0 रमा, प्रकाशक– साहित्य संचय बी– 1050 गली नं0– 14 पहला पुस्ता, सोनिया विहार, दिल्ली– 110090
4. हिन्दी की विश्व व्याप्ति– डॉ जोगेन्द्र सिंह, पृ 280
5. हिंदी का प्रवासी साहित्य : कमल किशोर गोयनका, पृ0– 58 स्वराज्य प्रकाशन दिल्ली– 11002, अंसारी रोड़, दरियागंज, प्रथम संस्करण – 2017
6. प्रवासी भारतीयों की हिंदी सेवा–कैलाश कुमारी सहाय, पृ0– 71 अविराम प्रकाशन– विश्वास नगर दिल्ली– 110032 प्रथम संस्करण – 1994
7. हिंदी भाषा का अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ –डॉ0 भोलानाथ तिवारी, पृ0– 152 पांडुलिपि प्रकाशन ईस्ट आज़ाद नगर, दिल्ली।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 126-130

भारत-चीन संबंध

डॉ स्नेह लता
एसोसिएट प्रोफेसर और अध्यक्ष, रक्षा अध्ययन विभाग, राजकीय पी.जी. कॉलेज हिसार।

परिचय :-

21वीं सदी में, भारत और चीन, एशिया और दुनिया में विशाल आबादी, बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं और बढ़ते बाजारों के साथ दो दृश्यमान शक्तियों के रूप में उभरे हैं हालाँकि "उनके पिछले संबंध कटु थे और एक–दूसरे के प्रति शत्रुता की विशेषता थी, लेकिन 1988 के बाद से, भारतीय प्रधान मंत्री श्री राजीव गांधी की चीन यात्रा और विशेष रूप से 21वीं सदी की शुरुआत के साथ, दोनों राज्यों ने एक–दूसरे के प्रति अपनी पिछली शत्रुता को छोड़ना शुरू कर दिया। अपने संबंधों को स्थिर करने के लिए आर्थिक, राजनीतिक, सामरिक, संस्कृति, रक्षा आदि जैसे विभिन्न क्षेत्रों में विश्वास और सुरक्षा निर्माण उपायों (सीएसबीएम) की शुरुआत की। यह सकारात्मक विकास सामाजिक और राजनीतिक स्थिरता मजबूत आर्थिक विकास और सुरक्षा के सार पर ध्यान केंद्रित करने की पारस्परिक आवश्यकता पर आधारित था ताकि प्रत्येक पक्ष ठहराव और गिरावट के खतरों से बच सके।

यह दो एशियाई सज्जनों के बीच हितों के इस अभिसरण में है कि "भारत और चीन के जनवादी गणराज्य की 21वीं सदी के लिए एक साझा दृष्टिकोण" शीर्षक वाले संयुक्त दस्तावेजों पर 14 जनवरी 2008 को बीजिंग में हस्ताक्षर किए गए थे। चीन दोनों के बीच द्विपक्षीय संबंधों के भविष्य की रूपरेखा तैयार करेगा। दस्तावेज प्रदान करता है कि भारत और चीन (इसके बाद दोनों पक्ष कहा जाएगा) : "यदि दोनों राज्यों के बीच शांति और समृद्धि के लिए सहकारी और रणनीतिक साझेदारी विकसित करके एक लंबे समय तक चलने वाली शांति और आम समृद्धि का निर्माण और प्रचार करना। आपसी संदेह को दूर करने के लिए दोनों पक्ष आश्वस्त हैं कि समानता के आधार पर दोस्ती और विश्वास के संबंध बनाने में भविष्य को देखने का समय आ गया है जिसमें प्रत्येक एक – दूसरे की चिंताओं और आकांक्षाओं के प्रति संवेदनशील है। इस तरह के घनिष्ठ संबंध का अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था के भविष्य पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। विदेश नीति के गठन के मुद्दे पर दोनों पक्षों का मानना है कि नई सदी में पंचशील, शांतिपूर्ण सह–अस्तित्व के पांच सिद्धांत, सभी देशों के बीच अच्छे संबंधों और परिस्थितियों के निर्माण के लिए बुनियादी मार्गदर्शक सिद्धांतों का गठन करते रहना चाहिए। मानव जाति की शांति और प्रगति को साकार करने के लिए"। 21वीं सदी के भविष्य पर दोनों पक्षों का मानना है कि "नई सदी में अंतरराष्ट्रीय संबंधों और बहु–साहित्यिकता का निरंतर लोकतंत्रीकरण एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है"। अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक मुद्दों पर, दोनों राज्यों का मानना है कि एक खुली, निष्पक्ष, न्यायसंगत, पारदर्शी और नियम आधारित बहुपक्षीय व्यापार प्रणाली की स्थापना सभी देशों की आम आकांक्षा है। "इसके अलावा, दोनों पक्ष इस बात से सहमत हैं कि यह अंतर्राष्ट्रीय

समुदाय के सामान्य हित में है कि वह अंतर्राष्ट्रीय ऊर्जा व्यवस्था स्थापित करे जो संपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के लाभ के लिए निष्पक्ष, सुरक्षित और स्थिर हो। सातवीं। "इसके अलावा,दोनों पक्ष जलवायु परिवर्तन के मुद्दे को गंभीरता से लेते हैं और जलवायु परिवर्तन से निपटने के प्रयासों में अंतर्राष्ट्रीय समुदाय में शामिल होने के लिए अपनी तत्परता को दोहराते हैं" आठवीं। हथियारों की दौड़ पर, दोनों पक्ष अंतर्राष्ट्रीय समुदाय से बहुपक्षीय हथियार नियंत्रण, निरस्त्रीकरण और अप्रसार की प्रक्रियाओं को आगे बढ़ाने की अपील करते हैं।

जहां तक आतंकवाद का संबंध है, दोनों पक्ष दीर्घावधि, सतत और व्यापक तरीके से आतंकवाद के खिलाफ वैश्विक ढांचे को मजबूत करने के लिए अंतरराष्ट्रीय समुदाय के साथ मिलकर काम करने की प्रतिज्ञा करते हैं। "सीमा मुद्दे के प्रश्न पर दोनों पक्ष शांतिपूर्ण बातचीत के माध्यम से सीमा प्रश्न सहित बकाया मतभेदों को हल करने के लिए दृढ़ता से प्रतिबद्ध हैं"।

ऊर्जा और समुद्री सुरक्षा :–

इसके अलावा, जैसा कि दो एशियाई सज्जन 21वीं सदी में आगे बढ़ रहे हैं, अपनी बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं को खिलाने के लिए ऊर्जा संसाधनों की बढ़ती आवश्यकता के साथ दोनों ऊर्जा संपन्न देशों के साथ घनिष्ठ और गहन सुरक्षा संबंध बनाने की कोशिश करेंगे और समुद्री लेन की सुरक्षा के लिए रणनीति भी विकसित करेंगे जिसके माध्यम से उनका अधिकांश व्यापार होता है। अमेरिका के बाद चीन किसी भी अन्य देश की तुलना में अधिक तेल की खपत करता है। भारत की ऊर्जा खपत प्रति वर्ष 3.6 और 4.3ः के बीच बढ़ने और 2030 तक दोगुने से अधिक होने की उम्मीद है। यह भारत को 2025–26 से पहले दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा तेल आयातक बना देगा। उनकी अर्थव्यवस्थाओं की निरंतर विकास दर निर्भर करती है तेल और गैस जैसी ऊर्जा की निर्बाध आपूर्ति पर काफी हद तक, क्योंकि दोनों प्रमुख ऊर्जा आयातक देश हैं। उपर्युक्त घटनाक्रमों के संदर्भ में, यह भविष्यवाणी की गई है कि भविष्य में, दो एशियाई सज्जनों के बीच समुद्री प्रतिस्पर्धा भारतीय और चीनी नौसेना की भारतीय और प्रशांत महासागर में बैठक के रूप में तेज होने वाली है। समुद्री प्रतिद्वंद्विता पारंपरिक चीन–भारतीय भू–राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता का नया आयाम होगी।

इसके अलावा, चीन और भारत के बीच भविष्य के संबंध प्रतिनिधि और संवेदनशील बने रहेंगे और गलत धारणा के परिणामस्वरूप संबंधों के अचानक बिगड़ने की संभावना है।

इसके अलावा, चीन और भारत के बीच भविष्य के संबंध प्रतिनिधि और संवेदनशील बने रहेंगे और विशेष रूप से सीमा मुद्दे पर गलत धारणाओं, शत्रुतापूर्ण रवैये के परिणामस्वरूप संबंधों के अचानक बिगड़ने की संभावना है। इसके अलावा संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा, प्रभाव के अतिव्यापी क्षेत्र, प्रतिद्वंद्वी गठबंधन संबंधों से पता चलता है कि दो एशियाई सज्जनों के बीच भविष्य के संबंधों को निकट भविष्य में सहयोग की तुलना में प्रतिस्पर्धा से अधिक चित्रित किया जाएगा। हालाँकि यहाँ एक बार फिर से यह दोहराया जाना चाहिए कि इतने जटिल और नाजुक माहौल में कोई भी पक्ष ऐसा कुछ नहीं करेगा जिससे उनके वर्तमान द्विपक्षीय आर्थिक या अन्य संबंध अस्थिर हों। लेकिन साथ ही, दोनों राज्य अपनी घरेलू और आंतरिक समस्याओं को हल करने का प्रयास करते हुए अपनी शक्ति और स्थिति को मजबूत करने का प्रयास करेंगे।

हालाँकि, इस तरह की रणनीति के साथ, वे व्यापक एशियाई क्षेत्र में प्रभाव बढ़ाने और लाभ प्राप्त करने के लिए एक–दूसरे की गतिविधियों की बारीकी से निगरानी करना भी जारी रखेंगे। चीन या किसी अन्य शक्ति

का मुकाबला करने के उद्देश्य से किसी भी गठबंधन में शामिल न होकर भारत अपनी विदेश नीति में स्वतंत्रता बनाए रखना चाहेगा। फिर भी, भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा नीति में अमेरिका समर्थक/जापान समर्थक झुकाव, चीन की शक्ति प्रक्षेपण क्षमताओं की प्रतिक्रिया एक तेजी से वैश्वीकृत दुनिया की एक परिभाषित विशेषता होगी। इसके अलावा, भविष्य के भारत–अमेरिका संबंधों,चीन–अमेरिका संबंधों और चीन–पाक संबंधों की प्रकृति चीन–भारत संबंधों के लिए बहुत महत्वपूर्ण होगी। 1960 और 1970 के दशक के दौरान, भारत और चीन के बीच दुश्मनी का एक मुख्य कारण भारत–सोवियत गठबंधन था और वर्तमान समय में भी, जापान के प्रति चीनी दुश्मनी संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ इसका गठबंधन है।

इसी तरह, भविष्य में, अगर अमेरिका चीन के खिलाफ रोकथाम की नीति अपनाता है और भारत को अपने स्वाभाविक सहयोगी के रूप में मान्यता देता है तो इसका परिणाम चीन और भारत के साथ–साथ चीन और संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच शत्रुतापूर्ण संबंध होगा। यह इस संबंध में है कि भारत के प्रति चीन का व्यवहार चीन के प्रति संयुक्त राज्य अमेरिका के व्यवहार से बहुत अलग नहीं है, क्योंकि चीन भारत के संबंध में एक यथास्थितिवादी शक्ति है जबकि अमेरिका चीन के संबंध में एक यथास्थिति शक्ति है। इस प्रकार,एशियाई सुरक्षा वातावरण का भविष्य काफी हद तक इस बात पर निर्भर करता है कि अमेरिका चीन के उदय का प्रबंधन कैसे करता है और बदले में चीन भारत के उदय का प्रबंधन कैसे करता है।

निष्कर्ष :–

अंत में, चीन–भारत के भविष्य के संबंधों को जे. टेलर के उस बयान के साथ सबसे अच्छा समझा जा सकता है जो उन्होंने 1980 के दशक के मध्य में दिया था ,लेकिन आज भी प्रासंगिक है, 21वीं सदी के दूसरे दशक में उल्लेखनीय है। उन्होंने कहारू दीर्घावधि में, भारत और चीन... हमेशा एक प्रतिद्वंद्वी संबंध की ओर प्रवृत्त रहेंगे और इस प्रकार, प्रत्येक एक अलग महाशक्ति के साथ एक सुरक्षा कड़ी की तलाश करेगा... भारत और चीन दोनों युद्ध से बचना चाहते हैं और विकास पर ध्यान केंद्रित करना चाहते हैं .... फिर भी राष्ट्रवाद और इतिहास के अस्थिर एजेंट एक रहस्यमय रसायन विज्ञान का उत्पादन करते हैं ... शक्ति और आकार उनके साथ स्थिति और प्रभाव के लिए तर्कसंगत रूप से चलते हैं और भारत और चीन दोनों भविष्य के क्षेत्रीय संघर्षों में खुद को खींच सकते हैं या संभवतः पड़ोसी देशों में हस्तक्षेप कर सकते हैं। देशों को कुछ अस्थिरता या कार्रवाई के कारण धमकी के रूप में पेश किया जाता है ... क्योंकि अरुणाचल प्रदेश के क्षेत्र में चीन बार–बार घुसपैठ व सैनिक गतिविधियां बढा रहा है इसलिये भारत ने चीन को इस बारे आगाह (सचेत) किया है और अमेरिका ने भी चीन को सीमावर्ति इलाके में घुसपैठ न करने बारे चेताया है। चीन के विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता ने भी दावा किया है कि अरुणाचल प्रदेश के क्षेत्रों में कुछ जगहों के नाम चीनी भाषा में अंकित करवाये हैं तथा दो नदियों तक के नाम बदल कर अपने क्षेत्र मे दिखाये हैं यह भारतीय सुरक्षा पर प्रहार है, अमेरिका ने भी इस बारे चीन को धमकाया है। ऐसी हरकतें दो देशों के मध्य भविष्य के क्षेत्रीय संघर्षों को जन्म देती है।

अतः इन घुसपैठ व सैनिक गतिविधियों से बचना चाहिये ताकि भारत व चीन मे बीच संबंधों में सुधार आये और दोनों देश अंतर्राष्ट्रिय स्तर पर सुरक्षा और विकास में अच्छा उदाहरण पेश करें। संभावना यह है कि लंबी अवधि में हिंद और हुन के बीच सहयोग की तुलना में अधिक प्रतिद्वंद्विता होगी लेकिन हथियारों की दौड़ पर, दोनों पक्ष अंतर्राष्ट्रीय समुदाय से बहुपक्षीय हथियार नियंत्रण, निरस्त्रीकरण और अप्रसार की प्रक्रियाओं को आगे बढ़ाने

की अपील करें इसके सार्थक प्रयास करने की आशा की जानी चाहिये।

चीन की दबाव बनाने और धमकाने की निति भी तनाव व संघर्ष को जन्म देती है इस प्रकार दो देशों के मध्य कटुता पैदा होती है और यही कटुता संघर्ष और युद्ध का रुप ले लेती है। पाकिस्तान की तरह चीन भी कुट्योजनात्मक निति से सीमावर्ती इलाके में घुसपैठ करके अशांति पैदा करना चाहता है। चीन के विदेश मंत्रालय ने भी कहा है कि अरुणाचल प्रदेश के सीमावर्ती क्षेत्रों में कुछ जगहों के नाम चीनी भाषा में अंकित करवाये हैं वह क्षेत्र उनका है। अरुणाचल प्रदेश की सीमा के निकट सडक का निर्माण करना व आबादी बसाना चीन की विदेश निति और रणनिति का ही एक हिस्सा है। भारत को अरुणाचल प्रदेश के इस क्षेत्र में सुरक्षा पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

"ताइवान की राष्ट्रपति साइ इंग– वेन के अमेरिका दौरे से गुस्साए चीन ने 8 अप्रेल 2023 को ताइवान स्ट्रेट की मध्य रेखा पार कर ताइवानी क्षेत्र में सैन्य अभ्यास शुरु कर दिया। इस अभ्यास में चीन के 71 लडाकू विमान और 8 युद्धपोत हिस्सा ले रहे है"। यह अभ्यास ताइवान के इर्द–गिर्द तीन दिन तक चलेगा। ताइवान ने कहा है कि सैन्य अभ्यास पर उसकी नजर है और वह उसका शांति से जवाब देगा। चीन ने यह सैन्य अभ्यास ताइवानी राष्ट्रपति साइ इंग–वेन की लास एंजिलिस में अमेरिकी प्रतिनिधि सभा के स्पीकर केविन मैकार्थी से मुलाकात की निंदा के बाद शुरु किया है। राष्ट्रपति साइ इंग–वेन का अमेरिका का दौरा पुरा कर अब वापस ताइपे पहुंच चुकी है। चीन लोकतांत्रिक ताइवान पर अपना अधिकार जताते हुए उसे अपना हिस्सा बताता है जबकि ताइवान की सरकार चीन के इस दावे को खारिज करती है। वैसे चीन का कभी भी ताइवान पर अधिकार नहीं रहा है।

"चीन की पीपल्स लिबरेशन आर्मी ने कहा है कि उसमें पूर्व निर्धारित योजना अनुसार जॉइंट शार्ट नाम का सैन्य अभ्यास शुरू किया है यह अभ्यास ताइवान के इर्द–गिर्द 3 दिनों तक चलेगा पीएलए की पूर्वी थिएटर कमांड ने कहा है कि यह अभ्यास ताइवान की अलगाववादी तत्वों के लिए गम्भीर चेतावनी है वह बाहरी ताकतों के साथ सांठगांठ करने और उनके उकसावे से बाज आएं"। ताइवान के रक्षा मंत्रालय ने कहा है कि 8 अप्रैल 2023 से उसने अपने क्षेत्र में चीन के 71 लड़ाकू विमान और 8 युद्धपोत प्रवेश करते हुए देखें। और ताइवान के बीच कोई औपचारिक सीमा रेखा नहीं है लेकिन दोनों विभागों के बीच के समुंदर को ताइवान स्ट्रेट कहा जाता है और उस के मध्य की रेखा को ताइवान और उसके समर्थक सीमा रेखा कहते हैं।

ताइवान ने कहा है कि चीन की हरकत पर वह शांत प्रतिक्रिया देगा वह अपना गंभीर आचरण बनाए रखेगा अपनी ओर से कोई ऐसा कार्य नहीं करेगा जिससे क्षेत्र में तनाव बटे फुलस्टॉप लेकिन सुरक्षा और संप्रभुता से कोई समझौता नहीं किया जाएगा विदित हो कि अमेरिका ताइवान की स्वतंत्रता को मान्यता नहीं देता लेकिन उसका समर्थन करता है अमेरिका ताइवान की यथास्थिति बनाए रखने का पक्षधर है।

उल्लेखनीय है कि "अगस्त 2022 में अमरीकी संसद सदन प्रतिनिधि सभा की तत्कालीन स्पीकर नैंसी पेलोसी ताइवान गई थी। उनके दौरे पर नाराजगी जताते हुए चीन ने ताइवान के करीब समुंदर और आकाश में कई दिनों तक सैन्य अभ्यास किया था"। सन 1962 के पश्चात से ही भारत चीन युद्ध के बाद दोनों देशों के बीच तनावपूर्ण संबंध रहे हैं। जब सेना द्वारा सीमावर्ती क्षेत्रों में घुसपैठ शुरू की जाती है दो देशों के मध्य तनाव की स्थिति पैदा हो जाती है या वही तनाव संघर्षों और युद्ध का रूप ले लेता है। भारत एक शांतिप्रिय देश है

तथा भारत आर्थिक विकास और सहयोग की कामना करता है। भारत युद्ध नहीं चाहता है। पड़ोसी देशों के साथ मधुर संबंध रखना चाहता है लेकिन चीन और पाकिस्तान दोनों ही देश सीमा पर बार–बार घुसपैठ करते हैं और आतंकवादी गतिविधियों को बढ़ावा देते हैं। इससे दो देशों के मध्य संबंधों पर प्रभाव पड़ता है। इसलिए आपसी विश्वास भाईचारे व सहयोग से ही आगे बढ़ा जा सकता है। पड़ोसी देशों को भी इस प्रकार का आचरण व्यवहार करना चाहिए जिससे निशस्त्रीकरण शांति सहयोग और विकास की ओर आगे बढ़ा जा सके।

संदर्भ सूची :–

1. भसीन अवतार सिंह, भारत के विदेशी संबंध – 2008 दस्तावेज भाग सार्वजनिक कूटनीति प्रभाग विदेश मंत्रालय, गीतिका प्रकाशक, नई दिल्ली 1546–1549 (2008)
2. विदेश मंत्रालय, भारत सरकार, 21वीं सदी के लिए एक साझा दृष्टिकोण।
3. भारत गणराज्य और पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना, (2008)
4. श्रीक सुसान एल., वन–साइड राइवलरी : चाइनाज परसेप्शन्स एंड पॉलिसीज टुवर्ड इंडिया, फ्रांसिन आर. फ्रेंकल और हैरी हार्डिंग (संपा.), द इंडिया चाइना रिलेशनशिप राइवलरी एंड एंगेजमेंट, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस नई दिल्ली, 95 (2004)
5. मलिक जे. मोहन चाइना–इंडिया रिलेशन्स इन द पोस्ट सोवियत एरारू द कंटीन्यूअस राइवलरी इन जॉय टेलर, द ड्रैगन एंड द वाइल्ड गूज : चाइना एंड इंडिया, द चाइना क्वार्टरली। (142) (1995)
6. दैनिक जागरण, 9 अप्रेल 2023

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 131-137

सूर्यबाला की कहानियों में चित्रित आर्थिक संवेदना

Francis Shaila S, Ph.d
Dr. Santhoshi, Guide
Dakshin Bharath Hindi Prachar Sabha, Chennai, Madras

स्वतंत्रता के बाद सामाजिक क्षेत्रों में परिवर्तन के साथ आर्थिक स्थिति में भी परिवर्तन आने लगा। अर्थ के कारण किसी भी वर्ग का व्यक्ति उच्च स्थान प्रान्त कर सकता है। फलतः सभी, एक–दूसरे को नीचा दिखाने के लिए संघर्ष करने लगे। इन तमाम विषम परिस्थितियों में समाज और परिवार जूझने लगा, परिणाम स्वरूप समाज में अनैतिकता बढ़ती गई और पारिवारिक सदस्यों के संबंध केवल दिखावे के लिए रह गए हैं। जीवन का महत्वपूर्ण मूल्य अर्थ को माना जाता है। आर्थिक संवेदना अर्थाभाव से उत्पन्न स्थितियों, विसंगतियों, समान वितरण समस्याओं का ज्ञान और अनुभूति है। जीवन का सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य प्राचीनकाल में काम, अर्थ, धर्म, मोक्ष ही था परंतु वर्तमान समय में धन के प्रति मनुष्य का लोभ बढ़ता चला जा रहा है जिससे मनुष्य का सामाजिक संबंध बिखर जाने लगा है। पारिवारिक, सांस्कृतिक तथा नैतिक मूल्यों का आर्थिक विकास व्यक्ति को स्वावलंबी बनाने के बजाय व्यक्ति के जीवन मूल्यों को तोड़ने लगा। अर्थ मानव जीवन का एक आवश्यक अंग माना जाता है। मानव जीवन के गतिविधियों में अर्थ का महत्व एवं प्रभाव बहुत अधिक होता है। एक कहावत है कि 'धनम् मूलमिदमजगत' अर्थात् किसी भी व्यक्ति या समाज के पहचान बनाने में उसे गौरवमय स्थान दिलाने में अर्थ महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आर्थिक परिवेश समाज के जीवन एवं स्वरूप को निर्धारित करता है। सामाजिक जीवन से संबंधित साहित्यिक कृतियों के विश्लेषण में आर्थिक संवेदना पर विचार किए बिना वह विश्लेषण संपूर्ण नहीं हो सकता। पति–पत्नी के संबंध इस आर्थिक अव्यवस्था के कारण बिगड़ते गए। अर्थाभाव में नारी और पुरुष दोनों ही आदर्शों को छोड़ने लगे।

इस प्रकार आर्थिक समस्याओं से उत्पन्न समाज चित्रण सूर्यबाला ने अत्यंत मार्मिक ढंग से अपनी कहानियों में चित्रित किया है। सूर्यबाला की कहानियों में गरीबों के प्रति सहानुभूति व्यक्त की है। देश में गरीबों की संख्या बहुत अधिक है, लेकिन उन पर दया दिखाने वाले कम। गरीबों की दयनीय स्थिति का समाज में वर्णन करते हुए सूर्यबाला कहते हैं कि गरीब होने के कारण सभी उनके प्रति पक्षपात दिखाते है। स्वातंत्र्योत्तर युग में अर्थव्यवस्था ने व्यक्ति को उलझा कर रखा। हर विचार को अर्थ की कसौटी पर परखा जाने लगा। आर्थिक संकट से अपनी–अपनी संस्कृति को भूलाने वालों की संख्या दिन ब दिन बढ़ती गई है। अर्थ के प्रति मोह से अपनों की सुरक्षा का ख्याल भी नहीं रखा। अपने यथार्थ के सामना कराया है। मनुष्य दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए न्यूनतम परिश्रम मानव संबंधों और प्रयासों का संगठन किया जाता है। उसे

आर्थिक संवेदना की संज्ञा दी जाती है। खाद्य पदार्थ प्राप्त करने और उसे उत्पन्न करने के अनेक उपाय विभिन्न जातियों से प्रचलित हैं। उनके आधार पर मुख्य स्तर संकलन आखेटक स्तर, पशुपालन स्तर, कृषि स्तर और शिल्प उद्योग स्तर आदि।

प्राचीन समाज में आर्थिक संबंध सामाजिक परंपराओं से बंधे हुए हैं। उत्पदान के कारकों में भी भेद करना कठिन हो जाता है। समाज की अर्थव्यवस्था में व्यापार विनिमय का विशेष महत्व माना जाता है। उपहारों से व्यक्तिगत तथा सामूहिक संबंध सुदृढ़ बन जाते है। व्यापार तथा विनिमय के क्षेत्र मेंउत्पादन के वितरण का महत्व अधिक होता है। समाज मुद्रा विहिन और अर्थ में बाजार का भी अभाव है। फिर भी उनका आर्थिक संगठन सुचारू रूप से चालू ही रहता हैं।

संसार के सारे कर्म और व्यापार अर्थ की धुरी पर ही चलते हैं। वर्ग भेद भी अर्थ के कारण ही उत्पन्न होता हैं। पूंजीवादी व्यवस्था के कारण शोषक और शोषित वर्ग बन गये हैं जिसके कारण समाज का संतुलन बिगड़ जाता है। अतः आर्थिक नीति समान हो तो मानवीय संवेदनाएं बढ़ते है, इसलिए मानव को आर्थिक नीति पर ध्यान देना चाहिए। मानव यह भावनात भी सीख सकता है जब परिवार में सभी सदस्य अपने कर्तव्यों का पालन कर सकें मानव में अगर स्वार्थ की भावना बढ जाये और वह धन को ही सर्वस्व माने तभी आर्थिक नीति में अनैतिकता का प्रवेश हो सकता है। इस कारण सामाजिक संबंध बिगड़ जाते हैं।

सूर्यबाला ने समकालीन समाज की रीति–रिवाजों को देखकर आर्थिक नीति के प्रति ध्यान देकर अपनी कहानियों की रचना की हैं। वे भी अपने जीवन में अर्थ के अभाव के कारण कई कष्टों का सामना करना पड़ा। समाज वह इकाई है जिसका पूरा आधार अर्थव्यवस्था पर टिका होता है। आधुनिक युग का दूसरा नाम आर्थिक युग हैं। यह युग आर्थिक संवेदनाओं से परिचालित हो रहा है। अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए सुविधाओं की उपलब्धि के लिए और जीवन में तरक्की के लिए मनुष्य को अर्थ की आवश्यकता है। अर्थ ही मनुष्य की सांस है। अर्थ के लिए व्यक्ति अनर्थ के रास्ते पर चलने के लिए तैयार है। अर्थ के कारण ही समाज में धोखाधड़ी और मान–मर्यादा की अवमानना हो रही है। मनुष्य जीवन में अर्थ का महत्वपूर्ण स्थान है। समाज की उन्नति आर्थिक विकास पर निर्भर होती है। अर्थ के माध्यम से ही जीवन का प्रत्येक क्षेत्र संचालित हो रहा है। आर्थिक संवेदनाओं के कारण मानव–मानव के बीच की खाई विस्तृत होती जा रही है। सामाजिक दूरियां बढती जा रही है। अर्थ प्राप्ति के लिए आम आदमी को कई प्रकार के संघर्षों से गुजरना पड़ता हैं।

आर्थिक नीति :–

प्रत्येक युग की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, परिस्थितियाँ, आर्थिक नीति से अवश्य प्रभावित होती है। प्राचीनकाल के शास्त्रों ने भी अर्थ को एक पुरुषार्थ माना गया है। जिस पर जीवन की सार्थकता टिकी होती है, लेकिनव ही चरम मूल्य नहीं है। फिर भी व्यक्ति भ्रम से ग्रसित होकर आर्थिक नीति को महत्वपूर्ण मान लेने के कारण सामाजिक, धार्मिक, नैतिक, चारित्रिक जैसे नीतियों का हृास होने लगा है। आर्थिक नीति पर डॉ. सरिता शुक्ला कहती है कि– ''आर्थिक असंतुलन विभिन्न विषमताओं की जननी है। अर्थ की अधिकता जहाँ व्यक्ति को विलासी, तामसी एवं वास्तविक बना देती है, वहीं अर्थ अभाव उसे कुंठित एवं पंगु बन देता है। उसकी क्रियाशीलता समाप्त हो जाती है। वह निष्क्रिय और भाग्यवादी बन जाता हैं। आवश्यकता की पूर्ति न होने पाने की वजह से व्यक्ति में अपराध वृत्ति एवं अनैतिकता का जन्म होता है। मानवीय संबंधों में बिखराव और सामाजिक

समस्याओं के मूल में 'अर्थ' की विषमता ही रही है।'' इस प्रकार आर्थिक नीति सामाजिक व्यवस्था के कारण ही उपजी है। वर्तमान समय में मनुष्य का जीवन और समस्याएं लगभग अर्थ केन्द्रित हैं। अर्थ नीति ने मनुष्य जीवन के निर्धारण के सारे सूत्र अपने मायावी पाश में जकड़ लिए हैं।

उसी प्रकार 'सीखंचो के आरपार' शीर्षक कहानी में आर्थिक नीति को ध्यान में रखते हुए लेखिका यह कहती है कि, ''अरे आपने फूल बहुत सुंदर सजाए हैं। सचमुच विश्वास न करने लायक। अरे सजाना क्या वह संकोच से बोली 'दरवाजे पर ही बेचने आया था, मैने लपक कर ले लिए और वैसे के वैसे ही इस गुलदान में रख लिए। यह फूल ही इतनी खूबसूरती पर थे तो भी गुस्सा हो रहे थे। कहते थे, बिना मतलब फूलों में पैसे उड़ाने का फायदा?'' एक दिन में मुरझा जाएंगे, तुम क्या जानो कितनी मशक्कत से कमाए जाते हैं, हाथ में आए और उड़ा दिए, कौन सा कोई मेहमान आने वाला है।'' उपर्युक्त उदाहरण के आधार पर लेखिका आर्थिक नीति के संबंध में कहती है कि कुछ लोग किस तरह अर्थ की कदर नहीं करते हैं। कमाते हैं तुरंत उड़ा देते हैं। उद्धरण में जब घर में दोस्त आते है तो देखती है कि बहुत सारे खूबसूरत फूल है तो वह तुरंत कहती है कि सुबह दरवाजे पर आए थे और मैने लपक कर ले लिए वैसे के वैसे ही गुलदान में रख दिए। जिसे मेरे पति काम से घर वापस आते ही देखता है कि घर में बहुत खूबसूरत फूलों का गुलदान है और तुरंत कहने लगे कि बिना मतलब फूलों पर पैसे उड़ाने का क्या फायदा एक दिन में ही मुरझा जाएंगे। तुम्हें क्या पता कितनी मशक्कत से पैसे कमाए जाते हैं, हाथ में आए और उड़ा दिए कौन सा मेहमान घर में आने वाला था जो तुमने बिना मतलब के इतने पैसे खर्च कर दिए। आर्थिक नीति के स्तर पर संतुलन को न बना पाने के कारण कई प्रकार की समस्याएं जैसे शोषण, भ्रष्टाचार, सुबह का हनन, स्वाभिमान का तार–तार होना, लाचारी आदि अर्थनीति का सही उपयोग न होने के दुष्परिणाम हैं।

मध्य वर्ग एवं निम्न वर्ग की आर्थिक समस्याएँ :–

मनुष्य के जीवन का मुख्य आधार अर्थ को ही माना जाता हैं। अर्थ के द्वारा ही समाज में मनुष्य उन्नति और अवनति को प्राप्त करते हैं। अर्थ के बिना मानव जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती है। मानव जीवन के तमाम आंतरिक और बाह्य व्यवस्थाओं की आधार शक्ति अर्थ पर ही अवलंबित होती है। मनुष्य के जीवन में अर्थ के महत्व को झुठलाया नहीं जा सकता। आर्थिक समस्याओं के कारण ही अमीर वर्ग निम्न वर्ग के लोगों पर शोषण करते हैं तथा मध्यम और निम्न वर्ग के लोग आर्थिक समस्याओं के कारण बेबस और मजबूर होते है। मध्य वर्ग की स्थिति विचित्र और दयाजनक होती है। मध्य वर्ग, उच्च वर्ग से तुलना करने में और उसकी होड़ में शामिल होने के लिए हमेशा दोहरी मानसिकता और समस्याओं के बीच में अपना जीवन निर्वाह करता रहता है तथा निम्न वर्ग का संबंध गरीब वर्ग तथा गरीबी रेखा के अंतर्गत जीने वाला होता है। निम्नवर्गीय लोग अपने जन्म से लेकर मृत्यु तक का अपना जीवन अर्थाभाव में ही जीते है। उसी में जीते और पिसते हुए मृत्यु भी हो जाती है फिर भी वह अपने गरीबी से कभी दूर नहीं जा पाता है।

उसी प्रकार 'गृह प्रवेश' शीर्षक कहानी में लेखिका आर्थिक समस्याओं को उजागर करते हुए करती है कि 'और बूचड़खाना जरा पास...' शकुन मुस्कुराए। भाई बगैर उसकी बात को जरा भी अहमियत दिए अपनी बात आगे बढ़ाया गया, 'तो मैं कहता हूँ, क्या बुरा है, थोड़ी एक्सर साइज ही हो जाया करेगी बच्चों की। हां, जरा पिछवाड़े से जाति छोटी लाइन की चौबीसों घंटे की धड़–धड़ से दिन में तो खैर नहीं, पर रात में तबीयत जरूर

भन्नाती है, लेकिन मेरा ख्याल है, जल्द ही आदत पड़ जाएगी। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि रेलवे लाइन और पुल के पास के मकान, गाड़ियों कि सारे समय की धड़धड़ाहट से कमजोर पड़ जाते हैं.... तो कौन हमें कुतुब मीनार उठवानी हैं और सबसे बड़ी बात जीजा जी, इतनी मीन मेख निकालते तो झुकता अपना गृहप्रवेश। अब और कुछ नहीं तो किराए के पौने चार सौ तो बचे। वैसे अभी तो साढे चार सौ की लोन अदायगी चल रही है। पर उससे क्या है, आठ–दस साल बाद लोन पूरा हो जाएगा तब तो चैन रहेगा।'' उपर्युक्त उद्धरण में लेखिका मध्यवर्ग और निम्न वर्ग की आर्थिक समस्याओं को उजागर करते हुए शकुन और बीरू की आर्थिक स्थिति इतनी अच्छी नहीं थी। बीरू की बहन अपने बच्चें को लेकर अपने भाई को देखने के लिए शहर आती है। और पाती है कि उसका भाई शहर में छोटा सा किराए के मकान में रहता है। जोकि रेलवे लाइन के काफी करीब है आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण कई समस्याओं को झूलते हुए वहीं अपने पत्नी और परिवार के साथ रहता है और अपना सारा जीवन लोन पूरा चुकाने में ही बिताता है। इस प्रकार मध्यवर्ग की जद्दोजहद को लेखिका ने बडे हैं सफलता पूर्वक पाठकों के सामने प्रस्तुत का सफल प्रसास किया है।

आर्थिक विपदा के कारण दमित मनुष्य की इच्छाएँ–आकांक्षाएँ :–

अपने समय की आर्थिक स्थिति से हर युग प्रभावित होता है। मानव जीवन के लिए अर्थ रीढ़ की हड्डी मानी जाती है। समाज में मनुष्य के जीवन में आने वाले उतार चढाव तथा दुनिया के संपूर्ण व्यवस्था में अर्थ के महत्व को देखा जा सकता है। मानस को निर्धारित करने के लिए मानव जीवन और समाज में अर्थ का मुख्य योगदान रहा है। परंतु अर्थ को सत्ता, वर्चस्व तथा उपभोग की वस्तु मान लेने के कारण वह साधन न रहकर साध्य बनते जाना चिंता का विषय होता जा रहा है। आर्थिक विपदा के कारण ही मनुष्य समाज संवेदनाहीन होता जा रहा है। अर्थ, मानव जीवन का संचालन करने के कारण उनकी संवेदना भी नष्ट होती जा रही है। वर्तमान समय सारे मूल्यों में अर्थ सर्वाधिक महत्वपूर्ण बन गया हैं। आर्थिक विपदा के कारण ही मनुष्य की इच्छाएं और आकांक्षाएं मात्र सोचने की वस्तुएं बन गई हैं। अर्थ के माध्यम से मनुष्य बहुत सी मूल प्रवृत्तियों की दिशा से की जा सकती है। आर्थिक संवेदना विकसित होने के कारण कई नई भौतिकवादी व्यवस्था ने मनुष्य को अर्थ का दो सब नदिया हैं प्राचीनकाल से ही अर्थ की महत्ता चली आ रही है। आज अर्थ को ही सब कुछ मान लेने के कारण लगभग सभी प्रकार के मूल्य ह्रासोन्मुख अवस्था में पहुंच गया है। आर्थिक विपदा से फैली विषमता से समाज डगमगाया है तथा आर्थिक विषमता से पनपे सामाजिक असंतुलन से समाज की संवेदना पर ही आघात किया है परिणाम स्वरूप आर्थिक विपदा में समाज के अनेक अंग कमजोर पड़ गए है।

यथा 'बिहिष्त बनाम मौजीराम का झाडू'' शीर्षक कहानी में आर्थिक विपदा के कारण दमित मनुष्य की इच्छाओं और आकांक्षाओं को उजागर कर लेखिका सूर्यबाला यह स्पष्ट करती है कि 'महाप्रसन्न! सम्मोजिहत! परम गौरवान्वित। बीच–बीच में वह घड़ी आधा घड़ी हाथ रोककर सुस्ताता है और अपने चारों तरफ विमुग्ध दृष्टि से देखने लगता है– ''कैप संभालते अपने यूनिफॉर्म से बड़ी अदा से चुटकी मारकर धूल झाड़ते, मालिकों के आने का इंतजार करते ड्राइवर्स और कुत्तों की ली शह में उन्हें हवा खोरी के लिए ले जाते मुस्तैद नौकर।'' झाडू लगाते लगाते अनायास किसी इंपाला या मर्सिडीज के पास पहुंचने पर वह उसके चमकीले रंग पर हल्के से हाथ फेर देता है। जैसे किसी गाय की पीठ पर।'' आलोच्य उद्धरण में लेखिका यह स्पष्ट करना चाहती है कि आर्थिक तंगी के कारण दमित व्यक्ति अपनी इच्छाओं और आकांक्षाओं को छोड़कर छोटे से छोटा काम कर अपना जीवन

बिताता है। मौजीराम भी उसी प्रकार एक अपार्टमेंट में झाडू लगा तेल गाते अपार्टमेंट में रहने वाले अमीर लोगों की जीवन शैली को देखता है और किस तरह ये बड़े लोग अपने कारों और कुत्तों के लिए किस प्रकार नौकरों को मुस्तैद करते हैं। यह सब देखकर उसके मन में भी इच्छाएं और आकांक्षाएं भक्ति रहती है, लेकिन आर्थिक विपदा के कारण वह अपने मन की इच्छाओं को दमित कर लेता है और वहां खड़ी चमकने वाली इंपाला और मर्सिडीज के पास जाकर हल्के हाथ हल्के हाथ फेर देता है। जैसे किसी गाय की पीठ पर। उसी में खुश होकर फिर उसी प्रकार झाडू लगाते रह जाता है।

वैवाहिक जीवन पर अभाव ग्रस्तता का प्रभाव :–

वैवाहिक जीवन पर आर्थिक विपन्नता से मनुष्य के जीवन में तथा समाज में अनेक तरह की समस्याएं उत्पन्न होती हैं। इन समस्याओं के कारण पति पत्नी के दाम्पत्य जीवन में अभाव ग्रस्तता का प्रभाव देखने को मिलता है। आर्थिक विषमता के कारण ही भौतिक सुविधाओं को प्राप्त करने में अभाव ग्रस्तता दिखाई देता है। दाम्पत्य जीवन आर्थिक दबाव के कारण खोखला होता जा रहा है जिससे कई संकट उत्पन्न हो रहे हैं। उसका प्रभाव वैवाहिक जीवन में दिखाई देता है। आर्थिक ढांचे की पेची दगियों में फंसी हुई जीव गाथा को केन्द्र में रखकर वर्तमान आर्थिक परिवेश को व्याख्यायित किया हैं।

उसी प्रकार ''सुमिंत्रा की बेटियाँ' शीर्षक कहानी में आर्थिक अभाव को उजागर करते हुए लेखिका क्या कहना चाहती है कि ''फटे चिरे बांसों को पीट–पीटकर बनाए गए दरवाजे में कहीं से लोहे के एक जंग लगी सांकल न लाकर अटाई गई थी और उस सांकल में एक ताला। मुझे गोदी में लादे उसने ताला खोला सारी जगह, गोबर, मवेशी और सानी पानी की तेज गंध से उसी पड़ी थी। एक तरफ भैंस और उसकी पड़िया बांधने की जगह दूसरी तरफ एक टूटा बस खँट और अध पिच के बर्तन बासन। सारा फर्क गोबर और गंदे पानी का चह बच्चा सा।'' आलोच्य उद्धरण में लेखिका ने सुमिंत्रा के वैवाहिक जीवन में उत्पन्न अभाव ग्रस्तता को उजागर कर समाज में उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी फिर भी किसी तरह अपने दोनों बेटियों को पाल पोसकर बड़ा करती है। पति का इंतजार करते रहती है और जब पति लौटता है तो अपने साथ एक महिला को लाता है। अर्थाभाव के कारण पत्नी सुमिंत्रा और बेटियों को छोड़कर महिला के साथ शादी भी कर लेता है। जिसके कारण परिवार का सारा माहौल बदल जाता हैं पर सुमित्रा अपना मनोबल नहीं छोड़ती है और अपने जीवन में अपनी दोनों बेटियों के साथ आगे बढ़ती है। इस प्रकार अर्थ अभाव के कारण वैवाहिक जीवन में कई प्रकार की समस्याएँ आ सकती है।

अर्थलोलुपता और महत्वाकांक्षाओं के कारण मूल्य विघटन :–

वास्तव में अर्थ एक अलौकिक शक्ति मानी जाती है जो मानव जीवन समाज और व्यक्ति को एक सूत्र में बांधकर रखती है। परंतु जीवन मूल्यों के बदलाव में अर्थ की अधिकता और महत्ता के कारण मानव मूल्यों में विघटन की स्थिति बन गई है। डॉ. श्रीमती प्रेम सिंह के अनुसार, ''अपनी विनाशकारी शक्ति से 'अर्थ' अर्थ निष्ठा को अविश्वास में, घृणा को प्रेम में, प्रेम को घृणा में, गुण का अवगुण में, अवगुण को गुण में, दास को मालिक में, मालिक को दास में परिवर्तित कर सकता है। धन से लालच बढता है, लालच से स्वास्थ्य पनपता है और स्वार्थ से झूठ बोलने की प्रवृत्ति पनपती है। परिणामतः धन कानून को भी अपने हाथ में कर लेता है। फिर मूल्यों की धारना उलट जाती है श्रमिक कितना ही उत्पादन करता है, उतना ही कम उसे मिलता है। जितना ही वह मूल्यों

को बनाता है, उतना ही पीड़ित होता है, अनादृत होता है, सुंदर का उत्पादन करता है पर स्वयं बौना हाता जाता है। श्रमिक के हिस्से में तो अभाव ही आते हैं। धनी वर्ग अटाली गांव में रहता है और कुछ नहीं करता, श्रमिक झोपड़ियों में भी नहीं रह पाता।'' इस तरह अर्थ के बल पर मूल्य विघटन होता है। शोषण, भ्रष्टाचार, लाचारी आदि अर्थाभाव के दुष्परिणाम है।

यथा 'गोबरच्चा का किस्सा' शीर्षक कहानी में लेखिका यह स्पष्ट करती है कि ''अरे कुटुम्ब संसार हमें समेट पाया होता है और हम उसे, तो आज तेरे अलमुनियां के पतीले में आलू उबाल रहे होते? ऐ? अरे मेरे पैर में सनीचर है सनीचर जो बिना चोरी चमारी, जुर्म, इल्जाम के, सारी उम्र आदमजात को यहां से वहां बेवजह भटकाता रहता है। ले, रे रख संजीवनी तेल की बड़ी बोतली, नुस्खे सहित। भिजवा देना, कोई आए तो। और ये पचास का नोट। बनवारी से कहना, सीधे बाप के हाथ मे ंपहुंचाना चाहिए। खबरदार! जे जोरू को जलेबी खरीद के खिलाई इस पैसे की।.....मुझे सब मालूम है अब अपने जोरू जाते के खर्चे बड़े होंगे तो बूढे बाप का हवाला दे–देकर मेरे मलंगी झोले वैसे भी चार पैसे खींचने की जुगत कर रहा है।''

उपर्युक्त उद्धरण में लेखिका अर्थ लोलुपता और महत्वाकांक्षाओं के कारण मूल्य विघटन को स्पष्ट करते हुए अर्थ की अधिकता और अर्थ की कमी दोनों ही मानवीय मूल्यो को प्रभावित करते हैं। जहाँ पैसे की अधिकता मनुष्य को अमानुष और शोषक बना देती है, वहीं आर्थिक तंगी भी मानवीय मूल्यों का ह्रास कर देती है। आर्थिक संकट से जूझते हुए परिवार में रुपयों की तंगी के कारण उनकी स्थिति निराश हो जाती है। कमजोर आर्थिक स्थिति किसी भी आदमी की जीवन का गणित बिगाड़ देती है। आर्थिक स्थिति दुर्बल होने के कारण संबंधों में मूल्य विघटन साफ रूप से दिखाई देता है। पैसे के अभाव में मनुष्यों के संबंधों, आर्थिक शोषण, अमानवीयता, शोषण के प्रति विद्रोह का प्रतीकात्मक मूल्यों का विघटन देखा जाता है।

निम्न मध्य वर्ग का आर्थिक शोषण :–

वर्तमान युग की यह सर्वविदित सत्य है कि आर्थिक विपिन्नता किसी न किसी धरातल पर शोषक और शोषित वर्ग अवश्य खड़ाकर देती है। इसके अतिरिक्त समाज में जाति व्यवस्था को आधार मानकर ही हरिजन और शुद्रों को निम्न वर्ग में सम्मिलित किया जाता है। निम्न वर्ग की आर्थिक स्थिति बहुत ही नाजुक होती है। इस वर्ग के लोगों का जीवन दामों से भी बदतर होता है। उच्च वर्ग और मध्य वर्ग के लोग निम्न वर्ग को हेय दृष्टि से देखते हैं। निम्न वर्ग प्राचीनकाल से आर्थिक दबाव में जीवन जीता रहा है यह सोचकर कि आज बुरे दिन हैं तो कल अच्छे दिन आएंगे ही। आज निम्न वर्ग पूर्ण रूप से स्वतंत्र नहीं है फिर भी परिस्थितियों से दो हाथ कर रहा है। ''होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन!'' शीर्षक कहानी में लेखिका ने निम्न मध्यवर्ग के आर्थिक शोषण का अंकन करते हुए कहती है कि ''गरम भजिया आने तक गृहस्वामी माकूल जवाब सोच चुका होता है–अभी नया खून है न! उबाल आते देर नही लगती। जब खून जलना शुरू होगा तब आटे दाल का भाव पता चलेगा बच्चू को।'' आलोच्य उद्धरण में लेखिका मध्यवर्गीय आर्थिक शोषण उजागर करते हुए कहती हैं कि अरूण वर्मा जब एम.एल.ए का ट्रक पकड़ने के कारण सस्पेंड हो जाता हैं। दफ्तर के अन्य लोगों के समझाने तथा ब्लैक लिस्ट में सका नाम होने के बावजूद भी वह नहीं डरता और न ही उसको और उसकी पत्नी को इस बात का जरा भी दुख होता है। वे दोनों अक्सर सोचते हैं कि उन्होंने कुछ गलत नही किया है तो फिर भी यह लोग यह क्यों नहीं कहते है कि तुम सही हो? और ऊपर से मजाक उड़ाते हुए कहते हैं कि सस्पेंड हो चुका

है न अब उसे पता चलेगा कि ईमानदारी से काम करना कितना कठिन होता है। यह सब जानते हुए भी अरूण वर्मा अपनी ईमानदारी को नहीं छोड़ता हैं।

निष्कर्षत :-

कह सकते है कि मनुष्य के जीवन की गतिविधियों में अर्थ का प्रभाव अत्यधिक होता है। ऐसा कहा जाता है कि 'धनम् मूलइदम जगत–अर्थात्, किसी भी व्यक्ति या मसाज के पहचान बनाने में उसे गौरवपूर्ण स्थान दिलाने में अर्थ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। निम्न वर्ग आर्थिक परिवेश के सामाजिक जीवन एवं स्वरूप को निर्धारित करता है। सामाजिक जीवन से संबंधित साहित्यिक कृतियों के विश्लेषण में निम्न वर्ग की आर्थिक संवेदना पर विचार किए बिना वह विश्लेषण संपूर्ण नहीं हो सकता है।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 138-142

ग्रामीण विकास में सरकारी योजनाओं की भूमिका

डॉ. मामराज यादव
सहायक आचार्य, राजकीय महाविद्यालय तखतगढ (पाली)

ग्रामीण विकास प्रत्येक व्यक्ति के लिये अपरिहार्य है इसके लिए केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा संचालित विभिन्न विकास योजनाएँ चलायी जा रही हैं। इसका क्रियान्वयन जिला ग्रामीण विकास अभिकरण के माध्यम से संचालित किया जा रहा है। इन योजनाओं के उद्देश्य गरीब लोगों के जीवन स्तर को उपर उठाना, बेरोजगार व्यक्तियों को रोजगार देना, समाज के कमजोर वर्ग को सम्बल प्रदान करना इत्यादि को ग्रामीण विकास की अनेक योजनाओं के तहत् सम्मिलित किया गया। इन योजनाओं में सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि शासन द्वारा प्रायोजित योजनाओं और कार्यक्रमों में जितना अधिक जन सहयोग मिलेगा। विकास की गति और गुणवता में उतनी ही अधिक वृद्धि होती है।

शोध के उद्देश्य :-

पंचायतीराज संस्थाओं के कार्य तथा ग्रामीण विकास की राज्य द्वारा संचालित योजनाओं के आकलन के लिए विगत वर्षों में अनेक अध्ययन हुए किन्तु योजनाओं की क्रियान्विति व ग्रामीण विकास के समग्र सन्दर्भों में जनसहभागिता के सम्बन्ध में हुए अध्ययन की प्रायः कमी रही है। वस्तुतः अध्ययन इस दिशा में एक विनम्र सार्थक प्रयास है। पंचायतीराज संस्थाओं को 73वें संविधान संशोधन के माध्यम से संवैधानिक संस्तर प्रदान किये जाने के साथ ही इन संस्थाओं के सशक्तिकरण के लिये प्रयास किये गये और इस बात पर भी बल दिया गया कि इन संस्थाओं पर सरकारी नियंत्रण का क्षेत्र कम हो तथा योजनाओं के निर्माण और क्रियान्विति में इन्हें स्वायत्तता प्राप्त हो। ग्रामीण विकास की योजनाओं के कार्यक्रमों की क्रियान्विति के सम्बन्ध में उन संस्थाओं की प्रत्यक्ष भूमिका निर्धारित की गयी है। 73वें संविधान संशोधन के बाद विभिन्न राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं के नये प्रयोग, कार्यकरण के वांछित उद्देश्यों को किस सीमा तक प्राप्त कर सके यह आकलन व अध्ययन का विषय है।

प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण विकास की अवधारणा, ग्रामीण विकास में जनसहभागिता की अवधारणा व महत्त्व, ग्रामीण विकास के लिए अब तक संचालित कार्यक्रमों के सर्वेक्षण तथा ग्रामीण विकास में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका आदि को सम्मिलित किया गया है। ग्रामीण विकास के विशिष्ट लक्ष्यों की क्रियान्विति और उसमें जनसहभागिता के ढाँचा का आकलन भी किया गया है।

विकास योजनाएँ व जनसहभागिता :-

ग्रामीण विकास में पंचायतीराज संस्थाओं के माध्यम से जनसहभागिता के वास्तविक स्वरूप के आकलन के लिए क्षेत्र में अनुभव तक सम्पन्न किया गया है जिसमें चयनित सीकर जिले की नीमकाथाना और श्रीमाधोपुर

पंचायत समितियों की क्रमशः 2–2 ग्राम पंचायतों से उत्तरदाताओं का चयन किया गया है। इसके लिए एक प्रश्नावली तैयार की गयी। अध्ययन हेतु चयनित जिले की नीमकाथाना व श्रीमाधोपुर पंचायत समिति के ग्राम पंचायतों में से लगभग 10 से 20 उत्तरदाताओं का चयन किया गया। इस प्रकार चयनित पंचायत समितियों के ग्राम पंचायतों में से कुल 250 उत्तरदाताओं का चयन किया गया है। जिसमें सामान्य वर्ग, कार्मिक वर्ग तथा जनप्रतिनिधि वर्ग को लिया गया है। यह प्रयास किया गया है, कि अध्ययन के लिए यथासम्भव सभी के दृष्टिकोणों का संकलन किया जाये। प्रश्नावली में शामिल सभी बिन्दुओं की क्षेत्र में उत्तदाताओं की चेतना के सामान्य स्तर, योजनाओं के संबन्ध में जानकारी के स्तर, उनके संदर्भ में अनुभव, योजनाओं के संचालन, क्रियान्वयन व उनके दृष्टिकोणों तथा इस संबन्ध में उपस्थित होने वाली समस्याओं के विषय में उनके दृष्टिकोण तथा उनके आकलन को शामिल किया गया।

ग्राम पंचायत संस्थाओं के माध्यम से ग्रामीण विकास योजनाओं से सम्बन्धित जन सामान्य वर्ग, कार्मिक वर्ग निर्वाचित जन प्रतिनिधियों का वर्ग है जो योजना से लाभान्वित है।

सारणी 1

लिंग के आधार पर वर्गीकरण

लिंग	कुल प्रतिशत	जन सामान्य वर्ग		कार्मिक वर्ग	जन प्रतिनिधि वर्ग		
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
पुरूष	72.33	107	69.03	72	75.79	38	76
महिला	27.67	48	30.97	23	24.21	12	24
कुल संख्या	100	155	100	95	100	50	100

Source : Survey Data by Researcher

पुरूष एवं महिला दोनों को उत्तरदाताओं के इस अध्ययन में सम्मिलित किया गया है। उत्तरदाताओं में पुरूष 72.33 प्रतिशत जबकि महिला 27.67 प्रतिशत है। संकोच की प्रवृति होने के कारण महिलाओं की संख्या कम है इस में सभी आयुवर्ग को शामिल किया है।

सारणी 2

उतरदाताओं का आयु वर्ग

	जन सामान्य वर्ग		कार्मिक वर्ग		जन प्रतिनिधि वर्ग		कुल उत्तरदाता	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
18–30	81	57.45	37	37.76	27	44.26	145	48.33
30–50	32	22.69	34	34.69	18	29.51	84	28.00
50 से अधिक	28	19.86	27	27.55	16	26.23	71	23.67
कुल	141	100	98	100	61	100	300	100

Source: Survey Data by Researcher

अध्ययन में अध्ययनकर्ता कि उत्तरदाता में विभिन्न आयु वर्गों को शामिल किया है। शोधकर्ता ने 18–30 वर्ष के आयु वर्ग में से 48.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं का चयन किया, जबकि 28.00 प्रतिशत उत्तरदाता 30–50

वर्ष के आयु वर्ग के है। 50 से अधिक आयु वर्ग के 23.67 प्रतिशत है।

सारणी 3

उ>रदाताओं का शैक्षणिक स्तर

शैक्षणिक योग्यता	सामान्य वर्ग		कार्मिक वर्ग		जन प्रतिनिधि वर्ग	
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
निरक्षर	32	18.18	—	—	02	3.33
प्राथमिक	46	26.14	—	—	04	6.67
उच्च प्राथमिक	22	12.50	6	9.38	20	33.33
माध्यमिक	18	10.23	5	7.81	10	16.67
उच्च माध्यमिक	13	7.39	17	26.56	8	13.33
स्नातक	27	15.34	18	28.12	10	16.67
स्नातकोत्तर	11	6.25	12	18.75	4	6.67
अन्य	7	3.98	6	9.38	2	3.33
योग	176	100	64	100	60	100

Source : Survey Data by Researcher

उपरोक्त सारणी में उत्तरदाताओं का शैक्षणिक स्तर के सामान्य वर्ग में निरक्षर 18.18 जबकि कार्मिक वर्ग में शून्य प्रतिशत तथा जनप्रतिनिधि वर्ग में 3.33 प्रतिशत निरक्षर है। प्राथमिक स्तर में 26.14 सामान्य वर्ग से, जबकि 6.67 प्रतिशत उत्तरदाता जनप्रतिनिधि वर्ग से एवं शुन्य प्रतिभात कार्मिक वर्ग से है। उच्च प्राथमिक वर्ग में 12.50 प्रतिशत, कार्मिक वर्ग में 9.38 प्रतिशत जबकि जनप्रतिनिधि वर्ग में 33.33 प्रतिशत, माध्यमिक में 10.23 सामान्य वर्ग से, 7.81 कार्मिक वर्ग से तथा 16.67 प्रतिशत जनप्रतिनिधि वर्ग से, उच्च माध्यमिक से 7.39 सामान्य वर्ग से, स्नातक से 15.34 तथा स्नातकोत्तर से 6.25 प्रतिशत, उत्तरदाताओं द्वारा 6.67 प्रतिशत प्रतिनिधिवर्ग ने सर्वेक्षण में अपना सहयोग दिया ग्रामीण विकास योजनाओं की क्रियान्विति, योजनाओं की प्रक्रिया के सम्बन्ध में जनता की सहभागिता को जानने के लिए विभिन्न प्रश्नों के माध्यम से तथ्य एकत्र कर इन योजनाओं के क्रियान्वयन में पंचायतीराज की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। पंचायतीराज में केवल ग्राम पंचायत, पंचायतसमिति, जिला परिषद् आदि में जनता की सहभागिता बतायी गयी है।

सारणी 4

विकास योजनाओं में संस्थाओं की भूमिका

नाम	उत्तरदाताओं की संख्या	उत्तरदाताओं का प्रतिशत
ग्राम पंचायत	122	61.62
पंचायत समिति	38	19.19
जिला परिषद	22	11.11
जानकारी नहीं	16	8.08
योग	198	100

Source : Survey Data by Researcher

उत्तरदाताओं से उपलब्ध तथ्यों से निष्कर्ष निकलता है कि 61.62 प्रतिशत उत्तरदाताओं की संख्या ग्राम पंचायत की विकास योजनाओं में मुख्य भूमिका मानते हैं जबकि पंचायत समितियों की 19.19 प्रतिशत व जिला परिषद् की भूमिका 11.11 प्रतिशत है। 8.08 प्रतिशत उत्तरदाताओं को इसकी जानकारी नहीं है। ग्राम स्तर पर इनका परामर्श होने से ही इन योजनाओं का सही निर्धारण होता है।

विभिन्न विकास योजनाओं की क्रियान्विति में महत्वपूर्ण समस्या जन–सहयोग प्राप्त न होना है। इसके अतिरिक्त जनप्रतिनिधियों को अपने अधिकारों की पूर्ण जानकारी न होना, वित्तिय समस्या में जनता से सहयोग न मिलना, योजना से सम्बन्धित दिशा निर्देशों की अवज्ञा होना, अशिक्षित जनता आदि है।

सारणी 5

योजनाओं की क्रियान्विति की प्रमुख समस्या

क्र.स.	समस्या	संख्या	प्रतिशत
1	वितिय समस्या	32	16.16
2	जनता के सहयोग का अभाव	75	37.88
3	जनता में अशिक्षा	23	11.62
4	योजना से सम्बन्धित जानकारी का अभाव	15	7.58
5	जनप्रतिनिधियों को अधिकारों की जानकारी का अभाव	23	11.62
6	राजनैतिक पक्षपात	11	5.56
7	जातिगत पक्षपात	07	3.54
8	उत्तर नहीं दिया	12	6.06
	योग	198	100

Source : Survey Data by Researcher

उपरोक्त समस्या से सम्बन्धित उत्तरदाताओं से पूछे गये प्रश्नों के आधार पर सर्वाधिक 37.88 प्रतिशत उत्तरदाता योजनाओं में जनता के सहयोग का अभाव मानते हैं। 16.16 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा वित्तिय अभाव के कारण जनता में अशिक्षा को 11.62 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने 7.58 प्रतिशत योजना से सम्बन्धित जानकारी को अभाव के कारण बाधा पहुँचती है। राजनैतिक पक्षपात व जातिगत पक्षपात के तौर पर क्रमशः 5.56,3.54 प्रतिशत लोगों ने उत्तर दिया तथा 6.06 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कोई उत्तर नहीं दिया। पंचायतीराज संस्थाओं के माध्यम से जनसहभागिता प्राप्त करने में योजनाओं में लोगों को शामिल करने के लिए विकास शिविरों का आयोजन किया जाता है जिससे ग्रामीण जनता को इन योजनाओं के बारे में जानकारी उपलब्ध करा सकें। ग्राम सभा के सदस्यों के अनुसार गाँव के लोग इन शिविरों के प्रति सकारात्मक सोच रखते हैं। तथा सक्रिय रहकर कार्य करते हैं।

ग्रामीण विकास योजनाओं में पुरूष–महिलाओं की भागीदारी के बारे में उत्तरदाताओं के आकलन में महिलायें पुरूषों की तुलना में अधिक उत्साह से कार्य करती हैं। महिलाओं की सक्रियता से भ्रष्टाचार की समस्या नहीं रहती है। 72.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपनी सहमति व्यक्त करते हुए यह कहा कि महिलाएँ आर्थिक कर्तव्य परायणता से कार्य करती हैं जिससे भ्रष्टाचार में कमी आती है। एवं जनसहभागिता में सहयोग मिलता

है। विकास योजनाओं में विशेषकर ग्रामीण क्षेत्र में अधिकतर जन–प्रतिनिधियों को महिला प्रतिनिधियों के साथ कार्य करने में असुविधा नहीं होती है। इसके लिए उत्तरदाताओं से किये गये प्रश्नों में 74.32 प्रतिशत उत्तरदाताओं की प्रतिक्रिया नकारात्मक थी, जबकि 25.68 प्रतिशत उत्तरदाताओं को महिला प्रतिनिधियों के साथ कार्य करने में असुविधा महसूस होती है। जनता की भागीदारी में विकास योजनाओं की सफलता उच्च स्तरीय कर्मचारियों की कर्तव्य परायणता से निश्चित होती है। साथ ही साथ योजना की सफलता जनता की अधिकाधिक सहभागिता पर भी निर्भर करती है।

सुझाव :–

1. क्षेत्र में विकास शिविरों का आयोजन करके जनता को कार्यों की जानकारी से अवगत करवाकर जनजागृति पैदा की जाये।
2. क्षेत्र की ग्राम सभा द्वारा चयन किये गये कार्यों को ही करवाया जाना चाहिए।
3. क्षेत्र की जनता में शिक्षा का प्रसार किया जाये।
4. विकास कार्य निभचित समय में पूर्ण करवाये जायें।
5. ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले गरीब परिवारों को रोजगार दिया जाना चाहिए।
6. ग्राम में एक विकास समिति का गठन किया जाना चाहिए, जिसके माध्यम से कार्य करवाये जाने चाहिए।

निष्कर्ष :–

निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि तीनों श्रेणियों के उत्तरदाता ग्रामीण विकास योजनाओं के सन्दर्भ में पंचायती राज संस्थाओं के महत्व को स्वीकार करते हैं। तीनों ही वर्ग के उत्तरदाताओं ने जनसहभागिता में वृद्धि की आवश्यकता पर जोर दिया हैं। विभिन्न विकास योजनाएँ वर्तमान में वास्तविक रूप से साकार करने में लगातार प्रयासरत है जो सत्य व सार्थक है।

सन्दर्भ :–

1. राजस्थान, जिला गजेटियर सीकर, 2020, पृष्ठ 25–28.
2. शर्मा, डॉ. महावीर प्रसाद : 2001, ''तोरावाटी का इतिहास'' लोक भाषा प्रकाशन, कोटपूतली, पृ. 206–207 तथा 216–218.
3. सक्सेना, एच. एम. : राजस्थान का भूगोल, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2002 पृ. 3
4. भल्ला, एल. आर. : राजस्थान का भूगोल, कुलदीप प्रकाशन, अजमेर, 1999 पृ. 6
5. जिला, वन विभाग, सीकर
6. जिला, सांख्यिकी विभाग, सीकर
7. जिला सांख्यिकी रुपरेखा, सहायक निदेशक आर्थिक एवं सांख्यिकी, सीकर, 2021 पृ. 4, 5
8. रपट, जिला परिषद, सीकर, 2021 पृ. 25
9. कार्यालय, जिला शिक्षा अधिकारी, सीकर
10. कार्यालय, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी, सीकर
11. पंचायत समिति नीमकाथाना
12. पंचायत समिति श्रीमाधोपुर।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 143-146

ISSUES WITH TEACHING IN EDUCATION SYSTEM OF INDIA

Harsh
Phd. Scholar, (Education) Baba Mastnath University, Rohtak

ABSTRACT :-

A competent and passionate educator needed in every classroom, not just in my neighbourhood, but in every community and country. If we attract bright young people to the teaching profession and provide them with top-notch training, we will have a great chance of maintaining a high standard of education long into the 21st century. Major shifts have occurred in the way that knowledge is imparted and acquired throughout the past fifty years, and especially over the past several decades. The traditional position of the teacher as a dictator has given way to that of a facilitator of learning in today's student-cantered classrooms. Project-based learning, the cultivation of critical thinking skills, and discovery-based pedagogies are just some of the innovative approaches being tried out in today's classrooms, in contrast to the traditional model in which the teacher is responsible for transferring the curriculum's contents to a passive audience of students. The textbooks have been updated to reflect the goals of the government's Sarva Shiksha Abhiyan (SSA) (in my opinion, to make them worse than before in many respects). There is a significant lack of preparation and knowledge among educators to effectively apply the new curriculum.

Keywords :- Classrooms, teaching, students, teachers, learning.

Introduction :-

If the idea of globalisation is considered, then teachers and teaching should be acknowledged like any other profession, with strict requirements for training, knowledge, and skills acquisition, as well as professional registration under a worldwide council of unified teacher registration authority.

The most amusing part is that schools dedicated to teacher training and the courses taken by prospective teachers pay surprisingly little attention to current educational developments. The SSA's training programmes have only focused on educating teachers who are already working in the field, leaving out the educators who prepare future teachers. Since the SSA has been kept out of the pre-service teacher education sector, new teachers will not be introduced to the new curriculum until after they have graduated from B.Ed. programmes.

Until the National Council for Teacher Education (NCTE), headquartered in Bangalore, came

up with and insisted on necessary norms and standards for these institutions, for-profit teacher-training programmes sprung up all across the State. Many organisations have upgraded to satisfy their requirements by erecting new classroom buildings and acquiring necessary infrastructure. The government even mandated that some schools raise teacher educators' pay to the federal minimum. However, as time has gone on, NCTE's interventions became less successful, and the influential lobbies of private education institutions gained control over the administration of teacher preparation programmes.

In recent decades, higher education has grown substantially. Currently, the United States is home to over 200 universities and 8000 colleges. According to the Kothari panel, "India's classrooms are where the country's destiny is being shaped." While it is undeniable that education plays a vital part in a country's progress, it is also true that the calibre of a nation's educators has a disproportionate impact on student outcomes. Below, we'll talk about a few of the problems that plague todays modern teacher training programmes :

ISSUES OF RECRUITMENT :-

The quality of education suffers when the process used to recruit instructors is flawed. A more effective selection process would reduce individual and societal waste in addition to raising training standards. There are several recommendations made that the selection process need to consist of :

(a) interviews of candidates and
(b) a test of general knowledge.
(c) Exams in academic disciplines.
(d) The administration of a language test and
(e) an intelligence test is recommended.
(f) It is important to give out aptitude, interest, and attitude tests.
(g) There ought to be access to a dependable guidance service.

Concerns regarding the insufficiency of the teacher training time period :-

This term in India lasts for a full year after the student has graduated, with the actual session lasting for only eight or nine months. Having a positive outlook, a wide range of interests, and strong values are essential goals of teacher training programmes. There isn't enough time in the next nine months.

Inadequacy on the part of both students and teachers :-

Inadequate possibilities for student teachers to improve competency are provided by the current training programme since organisers of teacher's training programmes are unaware of the actual difficulties faced by schools. Therefore, the timetable of a teacher in a school and the programme established for teacher development at a training institution should be closely aligned.

DIFFICULTIES IN PRACTICE-BASED EDUCATION :-

Despite numerous opportunities for student teachers to gain practical experience in the

classroom, many of them are unmotivated, unfocused, indifferent to the needs of their students, and unable to provide innovative approaches to teaching.

DIFFICULTY IN INSTRUCTOR SUPERVISION :-

The goal of the organisations that oversee student teachers in the classroom is to assist them become better teachers by gaining experience and confidence in the classroom via the use of a variety of methods and practical skills. The following forms of oversight are employed for this purpose :

a) Pre-teaching preparation :

The goal of pre-teaching supervision is to help teachers build competence in areas such as lesson preparation, content organisation, gesture selection, and more. Currently, the topic method specialist merely glances at the lesson plans without providing any feedback or discussion.

b) Failure to comprehend the subject :

The B.Ed. curriculum places little value on prior subject expertise. Whether or whether a student teacher has any background in the subject matter is irrelevant to the rest of the teaching process.

c) Defective pedagogical practises :

Teachers colleges in India discourage its students from trying new approaches to education. They have a minimal amount of experience with contemporary classroom communication tools.

d) Separation of the Educators' Training Division :

The education commission has noticed a disconnect between teacher training and actual classroom practise. As far as the schools are concerned, the department of teacher education is more of a foreign institution than a nursery for the growth of school teachers' careers. These divisions strictly adhere to the technique of completing the required number of lessons without regard to the pedagogical merits of the method.

e) Student-Teachers' Inadequate Intellectual Base :

The vast majority of would-be educators lack the necessary drive and training to succeed in the classroom.

f) Failure due to inadequate facilities :

The teacher education initiative in India is being treated with extreme caution. Twenty percent of schools that offer teacher training do it out of rented space, without access to the kind of resources that would allow them to establish effective experimental schools, laboratories, and libraries. As of now, student educators are not provided with their own residential hall.

g) Unabridged demand and supply :

There is no information available to the State Education Department to help them determine how many students they should recruit. The gap between the need for instructors and the number of available teachers is quite large. The result has been an increase in joblessness and underemployment.

h) An absolute lack of sufficient data :

Educators in India have not put nearly enough time or energy into studying how to improve

their field. The quality of the research done is really low. Before conducting any research on teacher education, the programmes have not been adequately studied.

i) Inadequate space to work on career development :

The majority of the shows are being run in a dull and predictable fashion. Nothing has been done to advance the professionalisation of teacher education in the country, not even by the association of teacher educators.

Conclusion :

It has been concluded that there should be space in the education and training of teachers in the twenty-first century for extended practical experience, lasting at least 24 months, during which the teacher would acquire the necessary relevant, practical, applicable, and convertible ammunitions to win the classroom battle. For the modern classroom, we simply cannot do better than this.

References :-

1. Hargreaves, Andy, and Michael Fullan. Professional capital: Transforming teaching in every school. Teachers College Press, 2015.
2. McNeil, Linda. Contradictions of school reform: educational costs of standardized testing. Routledge, 2002.
3. Sapon-Shevin, Mara. Playing favourites: Gifted education and the disruption of community. SUNY Press, 1994.
4. Darling-Hammond, Linda. "Constructing 21st-century teacher education." Journal of teacher education 57.3 (2006): 300-314.
5. Usha M.D. Challenges Before Indian Government (Convocation Address). (2010).
6. Vashist, S.R. Professional Education of Teachers. Jaipur: Mangal Deep. (2003).

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
Vol. 11, Issue 3-4
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
पृष्ठ : 147-149

Effect of Yoga Asanas on Flexibility of College Students of Hamachal Pradesh

Dr. Ajay Kumar

Assistant Professor, M.G.K.M. Shahi Sports College of Physical Education Jharkroudi, Ludhina Punjab

Abstract :-

The purpose of the study was find out the effect of Yoga Asanas on the Flexibility of College Students. A total number of 60 samples were selected. The study was conducted by Experimental Method. The selected Variable for study was Flexibility. The criterion measure Flexibility, was measured by Sit and Reach Test. For the present study single group pretest-posttest design was used. It was also observed from the findings that there was significant difference between Pretest and Post Test of flexibility. This indicated that Yoga Asanas training program had positive effect on flexibility of Students. From the result of the study, it can be concluded that Yoga asana training for the period of 4 weeks was over all effective to increase the flexibility of School Students.

Keywords :- Yoga Asanas, Flexibility, College Students.

Introduction :-

The Yoga is widely known as a broad term for a physical, mental, and spiritual discipline originating from Hinduism, Buddhism, Jainism and Sikhism in ancient India. The word yoga has been derived from a root yuj meaning 'to join', 'to unite', or 'to attach'. The overall psychological and emotional well-being of an individual is referred to as mental health and is about the social, physical, spiritual and emotional balance in life. The purpose of the study was find out the effect of Yoga Asanas on the Flexibility of College Students.

Materials and Methods :-

Both male and female students of Govt. Degree College Hamirpur of Himachal Pardesh State ranged between the age group of 18 to 25 Years were selected purposively for the study. A total number of 60 samples were selected. The study was conducted by Experimental Method. The selected Variable for study was Flexibility. The criterion measure Flexibility, was measured by Sit and Reach Test. For the present study single group pretest-posttest design was used. Scores on flexibility were

obtained before and after the experimental period of 4 weeks. For testing the statistical significant difference among the pretest and posttest, the data was analyzed by Descriptive statistics and paired samples't-test. The level of significance was kept 0.05 in order to test the Hypothesis.

Results

Table No. 1

Descriptive statistics of pre and post test of Flexibility

Test	N	Mean	Std. Deviation	Std. Error Mean
Pretest	60	13.5833	1.64977	.21298
Posttest	60	20.7333	2.26893	.29292

Table No. 2

Paired Samples Correlations

Pretest and posttest of Flexibility

Test	N	Correlation	Sig.
Pretest and Posttest	60	.432	.047

Table No. 3

Paired Samples 't' test of Flexibility

t	df	Sig. (2-tailed)	Mean difference	Std.Error Difference
-22.370	59	.000	-7.15000	.31963

Figure 1

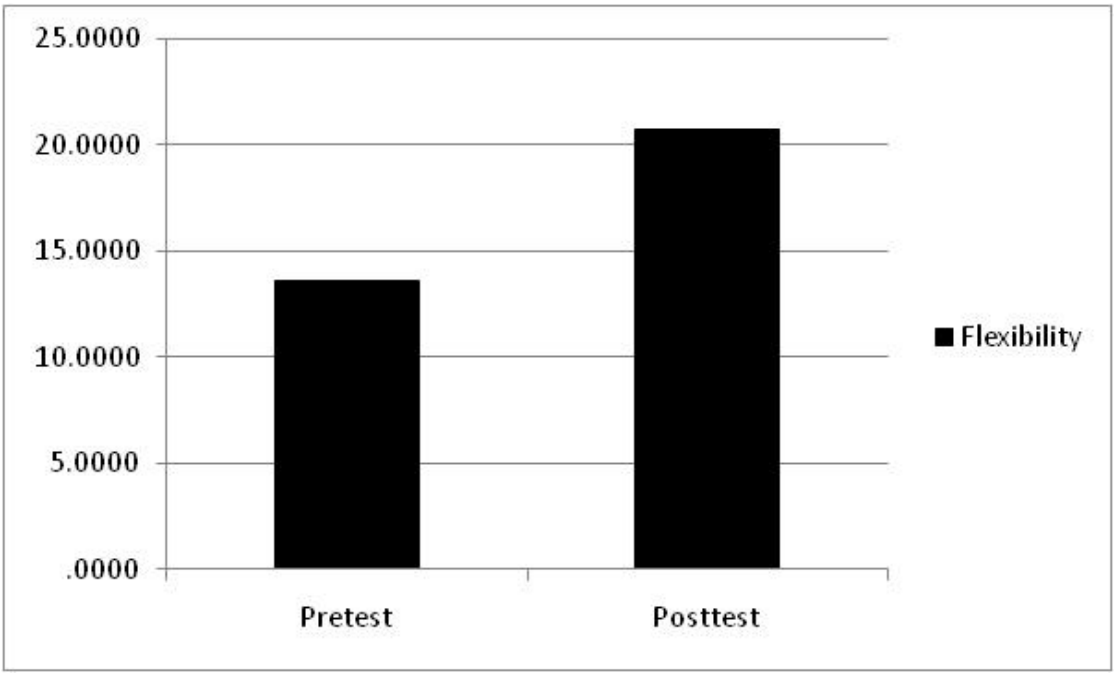

Discussion of Findings :

It was also observed from the findings that there was significant difference between Pretest and Post Test of Flexibility. This indicated that Yoga Asanas training program had positive effect on Flexibility of Students.

Conclusion :-

From the result of the study, it can be concluded that Yoga Asanas training for the period of 4 week was over all effective to increase the Flexibility of College Students.

References :-

1. Dey, R.K., and Sarkar, L.N. (1987), "Effects of Training Break on Selected Physical Fitness Components of Professional Students of Physical Education" Snipes Journal vol. 10 No 1 & 2 p 38.
2. Kansal, D.K, (1996)" test and Measurment in Sports and Physical Education." D.v.S Publication new Dehli(1996) p 120 to 240
3. Mathews, D.K., Fox, E.L. (1971) , "The Physiological and Basis of Physical Education and Athletics", WB Saunder Company, Philadelphia, London, Toronto 1971, P.77.
4. Ms. K. Bharatha Priya* Dr. R. Gopinath** and Dr.S. Chidambara Raja(2012)Effect Of Yogic Practices And Physical Exercises On Blood Glucose And High Density Lipoproteins Among Diabetes Patients. International Journal of Health, Physical Education and Computer Science in Sports Volume No.5, No.1. pp 30-32

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 150-154

वैश्विक युवा बेरोजगारी : चुनौतियाँ

डॉ0 निशा बहल
असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, डी.ए.वी. कालेज, कानपुर।

बेरोजगारी एक ऐसी समस्या है जो विकासशील देशों के लिए अभिशाप है कोरोना के बाद से पूरे विश्व की अर्थ व्यवस्था बदल गई। लेकिन भारत ने अपनी अर्थ व्यवस्था को वापस मजबूत कर लिया अपितु अर्थ व्यवस्था में इस सुधार का भारत की बेरोजगारी दर पर प्रभाव पड़ रहा है। वरन् बेरोजगारी दर दिन प्रतिदिन बढ़ ही रही हैं ताजा आंकड़ों के अनुसार भारत की बेरोजगारी दर अप्रैल 2022 में 7.83 प्रतिशत थी जो मार्च के मुकाबले 0.23 प्रतिशत अधिक है। यह एक ऐसी समस्या है जब कोई व्यक्ति सक्रिय रूप से नौकरी की तलाश करता है और उसे काम नहीं मिल पाता है इसका एक बड़ा कारण रोजगार योग्य, कुशल स्नातक और स्नातकोत्तर देने में हमारी शिक्षा प्रणाली पिछड़ी हुई है। हमारी शिक्षा प्रणाली डिग्री तो देती है पर इससे रोजगार सुनिश्चित नही होता। वैश्विक बाजार में युवा कामगारों की मांग भी बहुत है पर 90 प्रतिशत नौकरियॉ कुशलता पर आधारित है नीति आयोग की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में मात्र 47 प्रतिशत कामगार औपचारिक रूप से कुशल है। सीएमआईई की एक रिपोर्ट के अनुसार 29 प्रतिशत प्रशिक्षित युवा बेरोजगार है, क्योंकि उनकी रोजगार पाने की क्षमता अच्छी नहीं है।[1]

प्रसिद्ध समाजशास्त्रीय कार्ल मार्क्स के अनुसार ''बहुत सी उपयोगी चीजो के उत्पादन से बहुत से लोग बेकार हो गये है।''[2] इस प्रकार बेरोजगारी की शुरूआत होती है।

इसमें उसकी न तो किसी कम्पनी या संस्थान के साथ और न ही अपने ही किसी व्यवसाय में नियुक्ति होती है। अतः किसी देश, राज्य या अन्य क्षेत्र में पूरे श्रम करने वाले लोगों की आबादी में बेरोजगारों का प्रतिशत उस स्थान का बेरोजगारी दर कहलाता है।

संयुक्त राष्ट्र के अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की ''वर्ल्ड एंम्पलायमेंट एंड सोशल आउटलुक'' की रिपोर्ट बताती है कि विकास के नारों के बीच आज स्थिति यह है कि रोजगार के अवसर कम हो रहे हैं। बड़े उद्योगों में रोबोट और स्वचालित मशीनों का उपयोग बढ़ने से हाथ से काम करने वालों के लिए जगह लगातार कम हो रही है। तकनीकी शिक्षा प्राप्त कर चुके दक्ष लोगो के सामने भी नौकरियों की गंभीर समस्या है प्रत्येक दिन तकनीक में बदलाव हो रहा है और जो लोग बदलती तकनीक के साथ सामंजस्य नही कर पा रहे हैं उन्हें बेरोजगारी का संकट देखना पड़ रहा है। यह समस्या वैश्विक है रोजगार के नए अवसर न होने के कई कारण हैं आने वाले समय में कई और समस्या भी खड़ी हो सकती है। जैसे आर्थिक प्रगति की वर्तमान दर रोजगार की आवश्यकताएं पूरा करने में समस्याएं आयेगी पिछले कुछ महीनों में नौकरियों पर संकट जहां औद्योगिक

उत्पादन में एक फीसदी की कमी की जगह से है, वही नोट बन्दी की भार से भी रोजगार के अवसर कम हुए हैं। एच.एफ.एस. की रिसर्च के अनुसार 2030 तक नई प्रौद्योगिकी के कारण नौकरियो में कमी आयेगी। वही श्रम ब्यूरों की सर्वेक्षण की रिपोर्ट के अनुसार ''जहां स्वरोजगार के अवसर कम हुए हैं वही केन्द्र सरकार की विभिन्न योजनाओ से मिलने वाले रोजगार में भी कमी आई है।''[3] इस गिरावट के पीछे वैश्विक मंदी और मांग के अलावा सरकार की कुछ नीतियॉ भी जिम्मेदार है।

प्रतिस्पर्धा के दौर ने भी नौकरियों को प्रभावित किया है। एक अन्य रिपोर्ट में कहा गया है कि ''नौकरियों के घटने की अगर यही दर रही तो वर्ष 2050 तक देश में 70 लाख नौकरियॉ समाप्त हो जायेगी श्रम ब्यूरों के सर्वेक्षण से यह पता चला है रोजगार का विकास धीमा है यातायात, सूचना तकनीक, रत्न–आभूषण, हथकरघा, टेलीकॉम, बैंकिंग, वित्त, खेती, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवाओं आदि की नौकरियॉ समाप्त हो जाएगी। आज युवा लाखों रूपए खर्च करके महँगे संस्थानों से डिग्रियॉ लेकर तो निकल रहे है मगर उन्हें उचित रोजगार नहीं मिल रहा है। उच्च शिक्षा का भी हाल बुरा है करीब 93 प्रतिशत फीसदी एम0बी0ए0 पास युवाओं को नौकरी नहीं मिल रही है इसी तरह लाखों की संख्या में हर साल निकलने वाले इंजीनियरों को रोजगार मिले। इस कारण कौशल विकास और श्रम कानूनों में बदलाव जैसी सिफारिशे भी शामिल की गई है।

भारत जैसे विकासशील देशों में अधिकांश युवा लंबे समय तक बेरोजगार नही रह सकते है लेकिन साथ ही औपचारिक अर्थव्यवस्था में अच्छी नौकरी खोजने के लिए संघर्ष करते हैं नतीजा अधिकांश युवा बेरोजगार है और अनौपचारिक क्षेत्र में जीवनयापन कर रहे हैं यह साल देश के युवाओं के लिए चुनौतियों भरा है। कई राज्यो में बढ़ी रोजगार दर, रोजगर देना, सरकार के लिए चुनौती बनी हुई है। देश में बढ़ती बेरोजगारी ने युवाओं के सामने मुसीबत खड़ी कर दी है। बहुत से युवा इसी वजह से डिप्रेशन का शिकार भी हो रहे हैं। यह साल रोजगार को लेकर चुनौतिपूर्ण रहने वाला हैं अर्थव्यवस्था के जानकार कहते हैं कि साल 2024 में राष्ट्रीय चुनावों से पहले उच्च मुद्रास्फीति को रोकना और नौकरी में आने वाले लाखों युवाओं के लिए रोजगार सृजित करना सरकार के लिए सबसे बड़ी चुनौती है। हरियाणा और अन्य राज्यों की अपेक्षा बेरोजगारी के आंकड़े अधिक होने के कारण सरकार की चिंता बढ़ गई है। बाजार में उपलब्ध नौकरियों और श्रमिकों के कौशल के बीच असंतुलन होने से उत्पन्न बेरोजगारी की समस्या है।

जनेवा (आई.एल.ओ. न्यूज) अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) का अनुमान है कि 2020 में वैश्विक युवा बेरोजगारी दर 13.1 प्रतिशत तक पहुंचने की उम्मीद है और 2022 तक उस स्तर पर बनी रहेगी (2023 में 12.9 प्रतिशत से ऊपर)[4]

आई.एल.ओ. की वर्ल्ड एम्प्लाइमेंट एंड सोशल आउट लुक 2016, ट्रेडस फॉर यूथ रिपोर्ट बताती है कि इसके परिणाम स्वरूप बेरोजगार युवाओं की वैश्विक संख्या इस साल आधा मिलियन बढ़कर 71 मिलियन (तालिका 1) तक पहुँच जाएगी। अधिक चिंता का विषय युवा लोगों की संख्या है विकासशील देशों में नौकरी करने के बावजूद अत्यधिक या मध्यम गरीबी में रहते हैं। वास्तव में 156 मिलियन या 37.7 प्रतिशत कामकाजी युवा अत्यधिक या मध्यम गरीबी में हैं 26 प्रतिशत कामकाजी व्यवस्कों की तुलना में।

युवा बेरोजगारी में खतरनाक वृद्धि और समान रूप से परेशान करने वाले उच्च स्तर के युवा लोग जो काम करते हैं लेकिन फिर भी वे गरीबी में रहते हैं यह दर्शाता है कि 2030 तक गरीबी को समाप्त करने के

वैश्विक लक्ष्य तक पहुंचना कितना मुश्किल होगा जब तक कि हम स्थायी आर्थिक विकास हासिल करने के लिए अपने प्रयासों को दोबारा नहीं बढ़ाते हैं श्रम बाजार में युवा महिलाओं और पुरूषों के बीच व्यापक असमानताओं को भी उजागर करता है जिसे आई.एल.ओ. सदस्य राज्यों और सामाजिक भागीदार द्वारा तत्काल संबोधित करने की आवश्यकता है। जो इस प्रकार है :–

असमन अवसर :– अधिकांश श्रम बाजार संकेतकों में, युवा महिलाओं और पुरूषों के बीच व्यापक असमानताएं मौजूद है जो वयस्कता में संक्रमण के दौरान व्यापक अंतराल को कम करती है और जन्म देती है। उदाहरण के लिए 2016 में युवा पुरूषों के लिए श्रम बल भागीदारी दर 53.9 प्रतिशत है, जबकि युवा महिलाओं के लिए यह 37.3 प्रतिशत है जो 16.6 प्रतिशत अंकों के अंतर को दर्शाता है।

उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं में मंदी के कारण बेरोजगारी बढ़ रही है।

वरिष्ठ अर्थशास्त्री की रिपोर्ट के मुख्य लेखक स्टीवन टोबिन ने कहा ''यह कुछ प्रमुख निर्यात करने वाले देशों में अपेक्षा से अधिक गहरी मंदी और कुछ विकसित देशों में स्थिर विकास से प्रेरित है। युवा बेरोजगारी दर में वृद्धि विशेष रूप से उभरते देशों में चिन्हित है।''[5]

मेहनत करने वाले गरीब :–

रोजगार की खराब गुणवत्ता युवाओं को असमान रूप से प्रभावित कर रही है। उदाहरण के लिए वैश्विक स्तर पर लगभग 70 प्रतिशत पर सबसे अधिक युवा कामकाजी गरीबी दर का सामना कर रहा है। युवा लोगों के बीच कामकाजी गरीबी दर भी बढ़ रही है विकसित अर्थव्यवस्था में गरीबी के आयु वितरण में बदलाव के प्रमाण बढ़ रहे युवाओं के साथ गरीबी के उच्चतम समूह के रूप में बुजुर्ग जगह ले रहे हैं। चुनौती कुछ देशों में विशेष रूप से अधिक है जहां युवा श्रमिकों के लिए गरीबी का जोखिम 20 प्रतिशत से अधिक है।

भारत में कोरोना महामारी से बेरोजगारी पर प्रभाव :–

राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (एन.एस.ओ.) द्वारा जारी नये अत्यधिक श्रम बल सर्वेक्षण (पीएलएलएफएस के अनुसार'' भारत की पहली बेरोजगारी दर 2021 की अप्रैल–जून तिमाही में बढ़कर 12.6 प्रतिशत हो गई। जबकि जनवरी मार्च तिमाही में यह 9.3 प्रतिशत थी यह कोविड महामारी की पहली लहर के समय देखे गए 20. 8 प्रतिशत के स्तर से कम हो गया।

महामारी में बेरोजगारी सबसे अधिक सीएमआईई के अनुसार, देश की बेरोजगारी दर अप्रैल के समय में बढ़ी है जो 7.4 प्रतिशत तक पहुंच गई भारत में उस समय 40 करोड़ से अधिक अनौपचारिक श्रमिक अधिक गरीबी रेखा के नीचे गए। मई 2022 तक भारत में बेरोजगारी दर 7 प्रतिशत दर्ज की गई जो पिछले महीने की तुलना में कम है।[7]

जबकि अप्रैल 2020 में बेरोजगारी चरम पर होने के बाद 2021 के समय बेरोजगारी दर में अधिक गिरावट आई। 2021 में 18–29 आयु वर्ग के लगभग 36 मिलियन भारतीय बेरोजगार थे, जबकि कई अन्य कम वेतन वाली नौकरियॉ कर रहे हैं।

सेंटर फॉर मॉनिटरिंग इंडियन इकोनॉमी (ब्डप्म्) के अनुसार 20 से 29 वर्ष की आयु के लगभग 30 मिलियन भारतीय बेरोजगार थे और 2021 में 85 प्रतिशत बेरोजगार काम की तलाश में थे।[8]

महामहारी के दौरान बेरोजगारी का जो दौर आया था उसे जाने में अभी और वक्त लगेगा। अंतर्राष्ट्रीय

श्रम संगठन (आईएलओ) के अनुसार 2022 के समय दुनिया भर में बेरोजगार लोगों की संख्या 20.7 करोड़ रहने का अनुमान हैं 2019 में यह आंकड़ा 18.6 करोड़ था। इस समय बेरोजगार लोगों की संख्या में 11 फीसदी से ज्यादा की बढ़ोत्तरी आईएलओ द्वारा जारी रिपोर्ट– वर्ल्ड एम्लांयमेंट एण्ड सोशल आउटलुक ट्रेड– 2022 के अनुसार'' 2022 के समय काम के जो घंटों में कमी आने का अनुमान है वह 52 करोड़ फुल टाइम कर्मचारियों के बराबर जो 2019 की चौथी तिमाही से मिलता जुलता है।

यदि रिपोर्ट की माने तो 2021 की तुलना में स्थिति में सुधार आने की सम्भावना है अभी भी रोजगार की स्थिति में सुधार आने में और समय लगेगा। आईएलओ का मानना है कि वैश्विक स्तर पर बेरोजगारी की यह स्थिति कम से कम 2023 तक महामारी से पहले के स्तर पर नहीं पहुंच सकती।

यह आंकड़ा 2022 में 20.7 करोड़ और 2023 में 20.3 करोड़ पर पहुंच जायेगा।

डेल्टा और ओमिकॉन के कारण अनिश्चितता :–

वैश्विक श्रम शक्ति 2020 में घटकर 58.6 फीसदी पर पहुंच गयी थी। वही 2021 में थोड़े सुधार के बाद 59 फीसदी पर पहुंच गई थी जबकि इसके बारे में यह अनुमान है कि यह दर 2022 में 59.3 और 2023 में 59. 4 फीसदी पर पहुंच सकती है। ''रिपोर्ट के अनुसार 2022 के पूर्वानुमान में भी कोविड–19 के नए डेल्टा ओमिकॉन के कारण भी रोजगार पर पड़ने वाले असर के साथ–साथ भविष्य में महामारी को लेकर व्याप्त अनिश्चितता को भी दर्शाता है। इस संदर्भ में आईएलओ के महानिदेशक राइडर के अनुसार ''श्रम बाजार में व्यापक सुधार के बिना इस महामारी से ऊपर उठा नहीं जा सकता।'' इसका अर्थ है कि स्वास्थ्य, सुरक्षा, समानता, सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक संवाद सम्मिलित होने चाहिए।[10] बढ़ती बेरोजगारी कहीं न कहीं गरीबी और असमानता को बढ़ावा दे रही है। खाद्य सुरक्षा स्वास्थ्य सेवाओं पर दबाव बढ़ता जा रहा है जिसका असर पहले ही अपनी जीविका के लिए संघर्ष कर रहे लोगों की परेशानियों को और बढ़ा रहा हैं

सीएमआईई के अनुसार लगातार काम की तलाश करने के बाद भी बेरोजगार बैठे लोगों का बड़ा आंकड़ा चिंताजनक है। भारत जैसे विकासशील देशों के सामने जनसंख्या और बेरोजगारी बड़ी चुनौती है। कोरोना महामारी के चलते बेरोजगारी की समस्या गम्भीर हो चुकी है एक रिपोर्ट के अनुसार देश में बेरोजगारों की संख्या 5 करोड़ से ज्यादा हो गई है इनमें महिलाओं की संख्या भी अधिक है।

बेरोजगारी में महिलाओं की संख्या अधिक :–

CMIE की रिपोर्ट के अनुसार 2021 तक भारत में बेरोजगार लोगों की संख्या 5.3 करोड़ रही इनमें महिलाओं की संख्या 1.7 करोड़ है घर बैठे लोगों में उनकी संख्या अधिक है जो लगातार काम ढूंढ़ने का प्रयास कर रहे है। सीएमआईई के अनुसार लगातार काम की तलाश करने के बाद भी बेरोजगार बैठे महिलाओं का बड़ा आंकड़ा चिंताजनक है।

ढूँढ़ने पर भी काम का न मिलना :–

रिपोर्ट के अनुसार कुल 5.3 करोड़ बेरोजगार लोगों में से 3.5 करोड़ लोग लगातार काम ढूँढ रहे हैं इनमें करीब 80 लाख महिलाएं भी है। बाकी के 1.7 करोड़ बेरोजगार काम तो करना चाहते हैं पर काम नही मिलता है ऐसे बेरोजगारों में 53 प्रतिशत या 90 लाख महिलाएं भी है सीएमआईई का कहना है कि भारत में रोजगार मिलने की दर बहुत कम है और यह अधिक बड़ी समस्या है।

महामारी की सबसे बड़ी क्षति बेरोजगारी :–

भारत की शहरी बेरोजगारी दर 2021 की अप्रैल जून तिमाही में बढ़कर 12.6 प्रतिशत हो गई, जबकि जनवरी मार्च तिमाही में यह 9.3 प्रतिशत थी यह कोविड महामारी की पहली लहर के समय देखे गए 20.8 प्रतिशत के स्तर से कम हो गया। सेंटर फॉर मानिटरिंग इंडियन इकोनामी ;ब्डप्म्द्ध के अनुसार 20 से 29 वर्ष की आयु के लगभग 30 मिलियन भारतीय बेरोजगार थे और 2021 में 85 प्रतिशत बेरोजगार काम की तलाश में थे।

हमारी नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में उच्च शिक्षा संस्थानों में वर्ष 2035 तक 3.50 करोड़ नई सीटों के साथ व्यावसायिक शिक्षा का अनुपात 50 प्रतिशत तक करने का लक्ष्य है नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति व्यावसायिक शिक्षा को मुख्यधारा की शिक्षा के साथ जोड़ने तथा प्रमाणीकरण के साथ उन्हे रोजगार देने योग्य बनाती है नई शिक्षा नीति 2020 के अनुसार 2050 वर्ष तक कम से कम 50 प्रतिशत विद्यार्थियों के पास स्कूल और उच्च शिक्षा के माध्यम से व्यावसायिक अनुभव भी होगा। वोकेशनल स्किल, कोर्स शुरू होने से हर साल लाखों स्कूल ड्रॉप आउट को रोजगार की मुख्य धारा में शामिल किया जा सकेगा यह सुनिश्चित करनी की आवश्यकता है कि संगठित क्षेत्र के उद्योगों में गांवों और कस्बो के अकुशल श्रमिक अधिक है इन कामगारों की कुशलता अच्छी की जाए। हर हाथ को काम के लिए उन्हें सही कुशलता प्रदान करना जरूरी है।

निष्कर्ष हम कह सकते है कि भारत जैसी एक तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी की समस्या एक महत्वपूर्ण चरण में पहुंच गई हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि बेरोजगारी के क्षेत्र में सुधार की बहुत सम्भावनाएं है और अब सरकार और स्थानीय अधिकारियों ने इस समस्या को गम्भीरता से लिया है और बेरोजगारी को कम करने के लिए इस पर काम कर रहे है, साथ ही बेरोजगारी की इस समस्या से निपटाने होगे जोकि भारत की विशाल जनसंख्या है नीति आयोग ने भी अपने तीन वर्ष के एक्शन प्लान में रोजगार बढ़ाने संबंधी कई सुझाव सरकार को दिए। इसमें स्किल डेवलपमेंट और श्रम कानूनों में बदलाव जैसी सिफारिश भी सम्मिलित है। नए विकास की नीतियों के साथ भारत को आगे बढ़ना है जिससे बेरोजगारी की इस समस्या को जड़ से समाप्त कर सके।

सन्दर्भ सूची :–

1. जनगणना 2011 के आंकड़े।
2. जैन, किरण (2013) नवीन संस्करण, अर्थशास्त्र–1, इंटरनेशनल बुक सेन्टर नई दिल्ली, पेज नं0 495
3. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम 2005 (नरेगा) वार्षिक रिपोर्ट अप्रैल 2008 मार्च 2009 पेज नं0 5–6
4. नागवंशी, शैलेन्द्र कुमार (2002–03) लघु शोध।
5. जिला सांख्यिकी पुस्तिका 2020 जिला योजना एवं सांख्यिकी कार्यालय।
6. अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन विश्व रोजगार और सामाजिक 2020
7. वान वर्ग सीआर बेरोजगारी का व्यक्तिगत अनुभव मनोविज्ञान की वार्षिक समीक्षा, 2012
8. उपाध्यक्ष हरे प्रकाश – बेरोजगरी का आयाम, साहित्य भण्डार, इलाहाबाद 2017
9. व्यास, रेनू– बेरोजगार युवा में मानव, साहित्य भण्डार, इलाहाबाद।
10. अखिलेश, अन्वेषण, राधा कृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली 1992

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 155-164

कम्प्यूटर और हिन्दी का अंर्तसंबंध

डॉ. राजपाल
सहायक प्रोफेसर, राजकीय स्नातकोतर विद्यालय, हिसार।

शोध सार :-

इसमें संदेह नहीं कि आधुनिक कम्प्यूटर का उपयोग सर्वप्रथम दूसरे महायुद्ध के दौरान जर्मन सेना के गुप्त संदेशों को जानने के लिए किया गया था और ऐटम बम से संबंधित गणनाओं के लिए भी इसका उपयोग किया गया था, किन्तु उसी युग में लगभग सन् 1949 के आसपास प्रसिद्ध गणितज्ञ वारेन वीवर यह महसूस करने लगे थे कि कंप्यूटर की तार्किक प्रणाली का उपयोग अंकीय गणनाओं के अलावा भाशा संबंधी संश्लेषण, विश्लेषण और संसाधन के लिए भी किया जाता है। किन्तु भाषा के संदर्भ में कंप्यूटर का समुचित और सफल उपयोग तभी संभव था जब भाषाविद एक ऐसी कलनविधि (Algorithm) विकसित की जिसकी सहायता से भाषिक सिद्धान्तों और प्राकृतिक भाषाओं, प्रक्रियाओं को सही तौर पर वर्णित किया जा सकता हो। वीवर युग में भाषा संरचना के नियम इतने रीतिबद्ध (Formils) नहीं थे कि उनकी सहायता से प्राकृतिक भाषाओं का धन्यवाद। रूपतामक और शब्दात्मक विश्लेषण असंदिग्ध रूप से किन सकें, किन्तु पिछले तीन दशकों में कंप्यूटर और भाषा विज्ञान ही क्षेत्रों में इतनी बड़ी क्रांति आई है कि अब कंप्यूटर की सहायता से भाषा संबंधी नियमों को विश्लेषित और पारित करके एक ऐसी कलनविधि का विकास किया जा सकता है, जिससे भाषा संबंधी संश्लेषण, विश्लेषण और संसाधन का कार्य सरलता से किया जा सके।

यह एक ऐतिहासिक संयोग ही है कि कंप्यूटर का विकास सर्वप्रथम ऐसे देशों में हुआ, जिनकी भाषा मुख्यतः अंग्रेजी या रोमन लिपि पर आधारित कोई यूरोपीय भाषा थी। कदाचित् यही कारण है कि रोमनोत्तर भाषाओं में कंप्यूटर साधित भाषा विश्लेषण का कार्य देरी से आरंभ हुआ। इस बात में भी कोई संदेह नहीं है कि रैखिक (Linear) लिपि के कारण रोमन के माध्यम से सूचना संसाधन का कार्य अपेक्षाकृत सरल भी है। यह भी सत्य है कि अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और व्यवहार की प्रमुख भाषा होने के कारण गैर–रोमन लिपियों के लिए विकसित अधिकांश कंप्यूटरों में रोमन लिपि के माध्यम से संश्लेषणश विश्लेषण और संसाधन की सुविधा भी वैकल्पिक रूप में विद्यमान है। इसके अलावा बेसिक, कोबोल, फ़ोर्ट्रॉन आदि उच्चस्तरीय भाषाएं भी रोमन ही है। और उनके समादेश (Commands) भी अंग्रेजी में ही है– जैसे LET, PUT,PRINT आदि। किन्तु इस बात का कोई तकनीकी कारण नहीं है है कि रोमन लिपि या अंग्रेजी कंप्यूटर की दो संकेतों की अपनी एक स्वतंत्र गणितीय भाषा है और उसी में वे हमारी भाषाओं को ग्रहण करके अपने सारे कार्य करते है। इसलिए कंप्यूटर के लिए किसी भी भाषा को अपनाने में कोई तकनीकी बाधा नहीं है।

बीज शब्द :– कंप्यूटर, कलनविधि, तकनीक, संसाधन, हाडर्वेयर, द्विभाषीय।

देवनागरी लिपि एक वैज्ञानिक विधि है। भारतीय भाषाएं विश्व की अनेक भाषाओं की तुलना में वाक्य विज्ञान, ध्वनि विज्ञान और रैखिक दृष्टि से अधिक सुनियोजित है। अमरीकी वैज्ञानिक श्री रिक ब्रिग्ज की यह धारणा है कि संस्कृत भाषा कंप्यूटर प्रोग्राम की दृष्टि से आदर्श भाषा है। इसलिए देवनागरी लिपि में कंप्यूटर पर काम करना कठिन नहीं है। शब्द संसाधान (Word Processing) भाषा संसाधन का आरंभिक और महत्वपूर्ण सोपान है। इसके मुख्यतः तीन क्षेत्र हैः अंकीय निरुपण (digital representation) कुजींयन और मुद्रण। यह तो स्पष्ट है कि कम्प्यूटर में सारी गणनाएं केवल दो संकेतों (0 and 1) की होती है। केवल गणित को ही नहीं, तार्किक कथनों को भी ''हां'' या ''नहीं'' के बीजगणित में ढाला जा सकता है। यही कारण है कि तार्किक चिंतन को अपनाने में कम्प्यूटर समर्थ बन गए है। विभिन्न लिपियों के माध्यम से भाषा के कुंजीयन के लिए द्वि–आधारी कोड (Binary Code) बनाए गए है। रोमन लिपि के कोड को आस्की–7 कोड अर्थात् (American Standard Code for Information Interchange) कहा जाता है। इस 7 अंकीय कोड में रोमन लिपि के सभी अक्षर, अंक और विराम चिन्ह समाहित हो जाते हैं। फ्रांसिसी, जर्मनी, इतालवी, पुर्तगाली और स्पैनिश आदि भाषाओं में प्रचलित विशेषक चिन्हों (diacretric marks) को भी इसमें शामिल किया गया है। जैसे A के लिए 01000001 आदि। रोमनेतर भाषाओं के लिए भी रोमन लिपि पर आधारित प्रणाली ही आरंभ में विकसित हुई। इसे श्री जोजफ डी. बेकर के नेतृत्व में जिरोक्स कॉर्पोरशन, अमेरिका द्वारा विकसित किया गया और स्टार नाम से प्रख्यात इस बहुभाषी सॉफ्टवेयर में चीनी, जापानी, कोरियन, अरबी, हिब्रू और थाई भाषाओं के साथ–साथ हिन्दी भाषा के पाठों को भी रोमन लिपि के माध्यम से कुंजीयन करके कंप्यूटर में डेटा निवेश (input) किया जाता था और उसका निर्गम (output) या मुद्रण अपेक्षित भाषा की लिपि में ही किया जाता था। आज भी अमेरिका में बहुभाषी शब्द संसाधन के लिए यह प्रणाली बहुत लोकप्रिय है। इतना ही नहीं, अमेरिका में बहुभाषी डैस्क प्रकाशन (Desk Top Publishing) के लिए भी इसी सॉफ्टवेयर का अधिकांशतः उपयोग किया जाता है।

रोमनेतर लिपियों में इतनी अधिक भिन्नता है कि उन्हें एक कुंजीपटल पर लाना कोई सहज कार्य नहीं हैं अरबी और हिब्रू दाएं से बाएं लिखी जाती है। चीनी लिपि अधिकांशतः उपर से नीचे लिखी जाती है। चीनी एक रुपमिक (morphemic) लिपि है। इसमें 65,536 भावचित्र (ideographs) है और प्रत्येक भावचित्र का अलग–अलग अर्थ है। ऐसी वैविध्यपूर्ण और विशिष्ट लिपि को स्टार के अंतर्गत 1284 रोमन अक्षरों को गुच्छ (clustre) बन जाता है। इसे 1443 रामेन अक्षरों में समाहित किया गया है। जापानी लिपि में भी लगभग 50000 भावचित्र हैं। इन्हें जापानी भाषा में कुंजी कहा जाता है। इनत माम भावचित्रों को रोमन के 2000 से 3000 अक्षरों में समाहित किया गया है। जहां तक भारतीय भाषाओं का संबंध है, भारत में 18 संविधान सम्मत भाषाएं है और भाषाएं ध्वन्यात्मक है और उर्दू को छोड़कर शेष भाषाओं की वर्णमाला भी एक है। इन सभी सभी लिपियों को ''स्टार' के अंतर्गत रोमन लिपि के माध्यम से निवेश (Input) करने के लिए विशेष व्यवस्था की गई है।

सामान्यतः कंप्यूटर में सूचनाएं बाइट की इकाइयों में संग्रहित की जाती है और प्रत्येक बाइट में 8 बिट होते है। 7 बिट आस्की कोड एक बाइट में ही समाहित है। इसलिए रोमन लिपि में लिखित यूरोपीय भाषाओं का संसाधन एक ही बाईट में हो जाता है। एक बाइट की यह कोडिंग प्रणाली केवल उन भाषाओं पर ही लागू हो सकती है, जिनके अक्षरों की संख्या 256 या उससे कम हो। किन्तु सभी रोमनोत्तर लिपियों के अक्षरों की संख्या

इससे कही अधिक है। यदि एक बाइट से अधिक का स्मृति कोष बनाया जाए तो रोमन, फ्रांसीसी, जर्मन, रूसी और इतालवी लिपियों के लिए कुल स्मृति कोष का दो–तिहाई हिस्सा अप्रयुक्त होने के कारण बेकार पड़ा रहेगा। इस स्थिति से निबटने के लिए लचीली आंतरिक कोडिंग प्रणाली विकसित की गई और प्रत्येक लिपि के लिए अलग–अलग द्वि–आधारित (Binary) कोड संख्या दे दी गई। भारतीय भाषाओं के कुंजीयन के लिए अलग विधि अपनाई गई। इस विधि के अंतर्गत आंतरिक संसाधन के लिए संप्रतीकों (characters) को सीधे स्मृति कोष में संग्रहीत करने के बजाए उनकी मूल ध्वनियों को ही संग्रहीत किया जाता है। इसलिए संप्रतीकों का कोड बनाने के बजाए ध्वनियों का कोड बनाया गया है। इस प्रकार के ध्वन्यात्मक कोड के अनेक लाभ हैं। भारतीय भाषाओं में संप्रतीकों की कुल संख्या 256 से कहीं अधिक है, लेकिन मूल ध्वनियों की संख्या 55 हैं। इन ध्वनियों में ही पूरी देवनागरी लिपि को समाहित किया जा सकता है। इस प्रकार किसी भी भारतीय भाषा के लिए 7–बिट आस्की कोड अपनाया जा सकता है। यद्यपि यह प्रणाली अत्यन्त सरल और सुगम है, लेकिन विभिन्न लिपियों की जटिलताओं और सूक्ष्मताओं को अभिव्यक्त करने में रोमन लिपि की सीमाओं के कारण अमेरिका के बाहर यह प्रणाली अधिक लोकप्रिय नहीं हुई। इस प्रणाली से काम करने के लिए रोमन लिपि का ज्ञान आवश्यक था।

इसलिए अलग–अलग देशों में अपनी–अपनी लिपियों के माध्यम से पाठों के कुंजीयन के लिए अनेक युक्तियां विकसित की गई। भारत में विभिन्न भाषाओं के माध्यम से 'डॉस' परिवेश के अंतर्गत शब्द संसाधन का कार्य करने के लिए अनेक बहुभाषी शब्द संसाधन पैकेज बाजार में मिलते हैं। इनमें प्रमुख हैं – 'अक्षर', 'शब्दमाला', 'शब्दरत्न', 'आलेख', 'भारती', 'बाइस्क्रिप्ट', 'मल्टी वर्ड' आदि। किन्तु 'शब्द संसाधन' की सीमाओं के कारण विभिन्न भारतीय भाषाओं के माध्यम से भाषा संबंधी संश्लेषण, विश्लेषण और संसाधन का कार्य इन सॉफ्टवेयर पैकेजों के जरिए करना संभव नहीं है। यही कारण है कि भारत में और विदेशों में भी भारतीय भाषाओं के अध्ययन विश्लेषण का कार्य रोमन लिपि के माध्यम से ही चलता रहा है। डेटा संसाधन की सुविधा के बिना भाषा संसाधन का कार्य भारतीय लिपियों के जरिए व्यापक रूप में करना संभव नहीं था। इस कमी को पूरा करने के लिए दिल्ली स्थित सॉफ्टेक कंपनी ने डी.बेस. III प्लस के मानक पैकेज का द्विभाषी संस्करण 'देवबेस' के नाम से विकसित किया और बेसिक, कोबोल आदि कंप्यूटर की उच्चस्तरीय प्रोग्रामिंग भाषाओं के अनुभाषक (compiler) भी विकसित किए। किन्तु उसके बाद स्थिति बदल गई।

आई. आई. टी. कानपुर ने जिस्ट (Graphics and Indian Script Terminal) तकनीक पर आधारित एक ऐसी हार्डवेयर युक्ति का विकास किया, जिसके माध्यम से सभी भारतीय लिपियों में और साथ ही रोमन लिपि में भी हर प्रकार के पाठ का कुंजीयन और संसाधन किया जा सकता था। रोमन लिपि के लिए स्वीकृत आस्की –7 कोड भारतीय भाषाओं के लिए भी पर्याप्त था, किन्तु एक ही कोडिंग प्रणाली में भारतीय भाषाओं और रोमन लिपि को एक साथ समाहित करने के लिए आठ बिटों या अंकों की जरूरत पड़ती है। इसलिए भारत सरकार के इलेक्ट्रॉनिकी विभाग ने अगस्त, 1986 में 8–बिट की परिवर्धित कंप्यूटर और हिन्दी/69 कोड प्रणाली को अनुमोदित किया, जिसे 8–बिट इस्की कोड (Indian Script for Standard Code Information interchange) कहा जाता है। भारत में प्रचलित अधिकांश सॉफ्टवेयर या हार्डवेयर युक्तियां इसी 8–बिट इस्की कोड पर आधारित हैं। कुंजीयन के लिए भी सभी भारतीय लिपियों के लिए एक ही ध्वन्यात्मक कुंजीपटल स्वीकार किया गया है। किन्तु भारत सरकार ने सभी भारतीय लिपियों के लिए एक समन्वित उपागम (approach) अपनाने का निर्णय लिया है,

ताकि भारतीय भाषाओं और लिपियों में अंतर्निहित समान विशेषताओं का भरपूर लाभ उठाया जा सके। वैसे तो अधिकांश रोमनेत्तर लिपियों के लिए आज ध्वन्यात्मक कुंजीपटल लोकप्रिय होने लगे हैं। जैसे चीनी लिपि के लिए 'पिनयिन' कुंजीपटल का निर्माण अत्यंत वैज्ञानिक और व्यावहारिक उपागम है।

सभी भारतीय लिपियों के लिए समान कुंजीपटल होने के कारण और समान कोडिंग प्रणाली होने के कारण उनमें परस्पर लिप्यंतरण की सुविधा भी सहज रूप से उपलब्ध हो जाती है। जैस देवनागरी में यदि किसी पाठ का कुंजीयन किया जाए तो उस पाठ को बंगला या किसी अन्य भारतीय भाषा में भी सिर्फ एक कुंजी दबाकर लिप्यंतरित किया जा सकता है। यह सुविधा इस्की–8 कोडिंग प्रणाली पर आधारित सभी सॉफ्टवेयर और हार्डवेयर युक्तियों में उपलब्ध है। कंप्यूटर साधित भारतीय भाषा संसाधन की प्रस्तुत स्थिति से स्पष्ट है कि आज कंप्यूटर की सहायता से भारतीय लिपियों में भाषा संबंधी संश्लेषण, विश्लेषण और संसाधन का अधिकांश कार्य किया जा सकता है, किन्तु मात्र शब्द संसाधन से किसी भी भाषा में कंप्यूटर संबंधी अनुप्रयोगों को संपन्न नहीं किया जा सकता। इसलिए भारत सरकार के राजभाषा विभाग ने केंद्रीय सरकार के कार्यालयों के संदर्भ में कंप्यूटर संबंधी भाषा नीति की घोषणा करते हुए स्पष्ट कर दिया था कि किसी भी कंप्यूटर को तभी द्विभाषी माना जाएगा जब उसमें शब्द संसाधन के साथ–साथ डेटा संसाधन की सुविधा हिन्दी–अंग्रेजी में अर्थात् द्विभाषिक रूप में उपलब्ध होगी।

डेटा संसाधन संबंधी कार्य हिन्दी में संपन्न करने के लिए दो विकल्प उपलब्ध हैं : हार्डवेयर विकल्प और सॉफ्टवेयर विकल्प। जहां तक हार्डवेयर विकल्प का संबंध है, इस दिशा में आई. आई. टी., कानपुर का प्रयास विशेष रूप में उल्लेखनीय है। उनके द्वारा विकसित यह प्रणाली जिस्ट (ग्राफिक्स और इंटेलीजेंस बेस्ड स्क्रिप्ट टैक्नोलॉजी) प्रौद्योगिकी के रूप में प्रसिद्ध है और इस पर आधारित विभिन्न अनुप्रयोगों के विकास का दायित्व भारत सरकार की उसी सोसायटी को सौंप दिया गया है, जिसने 'परम' नाम से सुपर कंप्यूटर का विकास किया है। सी–डैक (सेंटर फॉर डेवलपमेंट ऑफ एडवांस कंप्यूटिंग) नाम से विख्यात यह सोसायटी पुणे (महाराष्ट्र) में स्थित है। इस कार्ड की सहायता से आई. बी. एम., पी. सी. कंप्यूटरों पर शब्द संसाधन तथा डेटा संसाधन के लिए हिन्दी साहित्य चिन्तन प्रचलित रोमन के सभी पैकेजों को प्रयोग द्विभाषिक या बहुभाषिक रूप में किया जा सकता है।

यूनिक्स/सेनिक्स परिचालन प्रणालियों के लिए जिस्ट कार्ड के बजाय जिस्ट टर्मिनल की आवश्यकता होती है। जिस्ट टर्मिनल की सहायता से भी रोमन के सभी समान्य पैकेज का द्विभाषिक रूप में प्रयोग किया जा सकता है। जिस्ट प्रौद्योगिकी के अंतर्गत यह सुविधा सभी भारतीय भाषाओं में सुलभ है और अब यह सुविधा फारसी–अरबी सिंहली तिब्बती और रूसी लिपि में भी उपलब्ध हो गई है। इसके विपरीत सॉफ्टवेयर विकल्प के अंतर्गत कंप्यूटर में किसी प्रकार के परिवर्तन की आवश्यकता नहीं होती। वे पैकेज फ्लॉपी डिस्क के रूप में उपलब्ध होते हैं। ये पैकेज भी दो प्रकार के हैं : (1) समर्पित सॉफ्टवेयर प्रोग्राम (Dedicated Software Program) और (2) सामान्य उद्देश्यीय सॉफ्टवेयर परिवेश (General Purpose Software Environment) समर्पित सॉफ्टवेयर प्रोग्राम के अंतर्गत हिन्दी में डेटा संसाधन का महत्वपूर्ण सॉफ्टवेयर है, 'देवबेस' (द्विभाषी डाटा बेस प्रबंधन प्रणाली)। यह सॉफ्टवेयर की बेस–III प्लस का द्विभाषी संस्करण है और इसका निर्माण नई दिल्ली स्थित मै सॉफ्टेक प्राइवेट लिमिटेड द्वारा किया गया है। दी बेस–III प्लस के अंतर्गत हिन्दी में काम करने के लिए यह एक अच्छा पैकेज है, लेकिन डी बेस के संशोधित पैकेज (जैसे डी बेस– IV या V आदि) में हिन्दी में कार्य करने

के लिए इसमें और संशोधन की आवश्यकता होगी। सामान्य उद्देश्यीय सॉफ्टवेयर परिवंश वह परिवंश है, जिसके अंतर्गत रोमन लिपि के सभी सॉफ्टवेयर पैकेजों (जैसे डी बेस, लोटस, सॉफ्टबेस क्लिपर, फॉक्सो, ओरेकल आदि) में हिन्दी में कार्य किया जा सकता है। इसके अलावा, यह परिवेश बेसिक, कोबोल, सी, पास्कल आदि प्रोग्रामिंग भाषाओं में तैयार किए गए प्रोग्रामों में भी हिन्दी में कार्य करने की क्षमता प्रदान करता है।

वस्तुतः यह परिवेश जिस्ट के ही समकक्ष है। जो कार्य जिस्ट कार्ड के माध्यम से हिन्दी में किए जा सकते हैं, वे सभी कार्य सॉफ्टवेयर विकल्प के रूप में इस परिवेश के अंतर्गत भी किए जा सकते हैं। आर के कंप्यूटर रिसर्च फाउंडेशन, नई दिल्ली द्वारा विकसित 'सुलिपि' नामक यह सॉफ्टवेयर जिस्ट के समान ही सामान्य उद्देश्यीय सॉफ्टवेयर है, जिसके माध्यम से एम. एस. डॉस पर आधारित पर्सनल कंप्यूटरों पर कार्यालय स्वचालन (Office Automation) संबंधी सभी कार्य हिन्दी–अंग्रेजी में साथ–साथ किए जा सकते हैं। जिस्ट के अंतर्गत भारतीय भाषाओं में परस्पर लिप्यंतरण (Transliteration) की सुविधा मौजूद है। इनमें भारत सरकार के इलेक्ट्रॉनिको विभाग द्वारा अनुमोदित इस्की (ISCII) कोड पर आधारित ध्वन्यात्मक इनिक्रप्ट (Inscript) कुंजीपटल की सुविधा भी उपलब्ध है। शब्द संसाधन के समान डी.टी.पी. की द्विभाषी सुविधा भी अत्यंत लोकप्रिय होने लगी है। आरंभ में सुविधा रोमन के इस पैकेज से आप अपने कंप्यूटर पर हिन्दी वाक्यों और शब्दों का प्रामाणिक उच्चारण और वाचन भी सुन सकते हैं। इसके अलावा आप इस पैकेज से देवनागरी लिपि का लेखन भी सीख सकते हैं। यह पैकेज अंग्रेजी माध्यम से है जिसमें एक द्विभाषी हिन्दी–अंग्रेजी कोश भी निहित है ये तमाम सुविधाएं अब तक 'डॉस' परिवेश में ही उपलब्ध थी, किन्तु अब इसे 'विडोज' परिवेश में भी उपलब्ध करा दिया गया है।

इसके अलावा, अब 'डॉस' के बजाए 'विडोज' का प्रचलन बढ़ गया है। इसलिए सी–डैक ने लीप ऑफिस 2.0 नाम से एक ऐसे इंटरफेस का विकास किया है, जिसके माध्यम से एम. एस. से 'वेंचुरा सॉफ्टवेयर पर आधारित' प्रकाशको पैकेजों तक ही सीमित थी, लेकिन अब मेकर में भी इसका प्रयोग बढ़ने लगा है और का 'ऐस्ट्रिक्स', 'सुलेखर' आदि अनेक पैकेज आज बाजार में हो गए हैं। ये पैकेज कोरल डॉ. फोटोशॉप जैसे पैकेजों में में कार्य करने की सुविधा प्रदान करते हैं। इलैक्ट्रो–मैकेनिकल युग से आरंभ होकर टेलीप्रिंटर/टेलेक्स से होते हुए आज यह प्रणाली कंप्यूटर युग पहुंच गई है। आज आप अपने कंप्यूटर पर टेलेक्स कार्ड संदेशों का आदान –प्रदान कर सकते हैं। इस सुविधा को हिन्दी में सुलभ करने के लिए डाटा बाइट, सीएमसी, एचसीएल आदि को कंपनियों ने द्विभाषी उपकरण विकसित किए हैं। इसके अलाव के रिसर्च कंप्यूटर फाउंडेशन ने 'सुलिपि' सॉफ्टवेयर पर आर्थात एक इंटरफेस विकसित किया है, जिसकी सहायता से किसी से कंप्यूटर पर हिन्दी में संदेशों का आदान–प्रदान किया जा सकता है। फिल्मों के उपशीर्षक हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं लिखने का कार्य हाल ही में भारत में आरंभ हुआ है। 1992 में नई दिल्ली में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह अवसर पर दूरदर्शन द्वारा प्रसारित हिन्दी फिल्म 'सलाम' उपशीर्षक (sub & titles) विभिन्न राज्यों में उनकी अपनी भाष में ही प्रदर्शित किए गए थे। लिप्स (LIPS) नाम से प्रसिद्ध प्रौद्योगिकी का विकास सी–डैक, पुणे के जिस्ट ग्रुप द्वारा गया था।

इसी प्रौद्योगिकी के दूसरे चरण में वीडियो चर्स के कार्य को भी हिन्दी में प्रदर्शित करने के लिए आवश्यक सॉफ्टवे विकास कर लिया गया है, जिसकी सहायता से रेलवे आरक्षण, गाड़ियों के आवागमन हवाई जहाजों के आगमन प्रस्थान आदि से संबंधित सूचनाएं टी. वी. मॉनिटर के जरिए हिन्दी में भी प्रदर्शित की जा सकती है।

मै आर के कंप्यूटर रिसर्च फाउंडेशन द्वारा 'मुलिपि' पर आधारित एक इंटरफेस का विकास किया गया है, जिसकी सहायता से वीडियो वर्क्स से संबंधित सभी कार्य में संपर्क किए जा सकते हैं। हाल ही में सी बैंक ने लीला प्रबोध नाम से एक ऐ मल्टीमीडिया स्वयं शिक्षक पैकेज का विकास किया है, जिसकी सहायता से विडोस परिवेश के अंतर्गत कोई भी व्यक्ति कंप्यूटर के माध्यम से हिन्दी सीख सकता है। इसकी शिक्षण साम विदेशी शिक्षण की नई विकसित तकनीकों पर आधारित है।

कम्प्यूटर और हिन्दी भाषा का अंर्तसंबंध :-

कम्प्यूटर के जनक व सभी प्रसिद्ध वैज्ञानिक विदेशी थे जो रोमन लिपि की भाषाओं के जानकार विशेषकर अंग्रेजी भाषी थे। यही कारण है सभी कम्प्यूटरों पर अंग्रेजी भाषा में कार्य करने की सर्वाधिक होती है। परन्तु एक ओर जहाँ कम्प्यूटर शुद्ध गणना के लिए विख्यात है, वहीं हिन्दी भाषा अपनी वैज्ञानिकता के लिए संस्कृत भाषा सर्वाधिक उपयोगी है। वैसे भी विश्व में हिन्दी भाषी लोगों के मध्य इसे लोकप्रिय बनाने के लिए भी विख्यात है। अब अधिकांश कम्प्यूटर वैज्ञानिक इस तथ्य को स्वीकार करने लगे हैं कि कम्प्यूटर का इसका प्रचलन करने के लिए हिन्दी में कार्य करने वाले कम्प्यूटर भी उपलब्ध है।

हिन्दी-शब्द-संसाधक :-

शब्द–संसाधक एक ऐसी व्यवस्था है जो कुछ अवयवों से मिलकर बनती है। कुछ अवयव कम्प्यूटर के भीतर भी होते हैं तो कुछ बाहर से जुड़े होते हैं। अतः शब्द–संसाधक को दो भागों में बाँटा जा सकता है।

(1) बाह्य अवयव (2) भीतरी अवयव

(1) बाह्य अवयव :- इन अवयवों से डाटा को सी.पी.यू. की मैमोरी अर्थात् स्मृति तक भेजा जाता है तथा से डाटा को प्राप्त भी किया जा सकता है। बाह्य अवयवों में फ्लॉपी डिस्क ड्राइव, स्कैनर, कुँजी पटल आदि प्रमुख हैं। किसी फ्लॉपी में एकत्र सूचनाओं को फ्लॉपी डिस्क ड्राइव द्वारा कम्प्यूटर में डाउन लोड किया जा सकता है। परन्तु इन सभी बाह्य अवयवों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पुँजीपटल है। इसे अंग्रेजी में की–बोर्ड भी कहते हैं। इस पर अनेक प्रकार के बटन लगे होते हैं जिन्हें मुख्यतः निम्नलिखित भागों में बाँट सकते हैं (क) वर्णमाला के बटन (ख) संख्यात्मक बटन (ग) फंक्शन बटन (घ) लॉजिकल बटन (ङ) कर्सर कंट्रोल बटन (च) विशिष्ट बटन।

(क) वर्णमाला के बटन :-

कुंजी पटल में अंग्रेजी वर्णमाला के आधार पर कुल तैंतीस वर्णमाला के बटन होते हैं जिनमें से कुछ बटन विशिष्ट विराम चिह्नों यथा–अल्प विराम, पूर्ण विराम (Full Stop) आदि के लिए होते हैं। इन वर्णमाला के प्रत्येक बटन पर प्रायः एक ही वर्ण का चिह्न होता है। सामान्य स्थिति में इसे दबाने पर अंग्रेजी वर्णमाला के छोटे वर्ण (Smail alphabets) टाइप होते हैं जबकि इसके एक विशेष बटन अर्थात् 'शिफ्ट' बटन को दबाकर जब वर्णमाला के बटन को दबाते हैं तब बड़ी वर्णमाला (Capital Letters) टाइप होती है।

(ख) संख्यात्मक बटन :-

कुंजीपटल के दाईं ओर संख्यात्मक बटन लगे होते हैं जिनको दबाकर अंकगणित की संख्या पर आधारित आँकड़ों को कम्प्यूटर में भरा जा सकता है। इनकी कुल संख्या दस होती है।

(ग) फंक्शन बटन :-

कुंजी पटल में वर्णमाला के बटनों के ऊपर फंक्शन बटन होते हैं जिन पर F1 , F2 आदि लिखे रहते हैं,

इनकी कुल संख्या बारह होती है। इन बटनों से दूसरे कार्य निष्पादित किए जाते हैं, जैसे F4 बटन को दबाकर कम्प्यूटर के सॉफ्टवेयर संबंधी अन्दरूनी भागों की सफाई की जाती है।

(घ) लॉजिकल बटन :–

ये बटन लॉजिकल चिह्नों को अंकित करने के लिए होते हैं। इन पर अनेक चिह्न जैसे > < [2] आदि अंकित होते हैं तथा आवश्यकतानुसार बटन दबाकर उस चिह्न संबंधी आँकड़ा कम्प्यूटर में भर दिया जाता है।

(ङ) कर्सर कंट्रोल बटन :–

इनकी कुल संख्या चार होती है तथा इन पर चार विभिन्न दिशाओं के अलग–अलग तीरों का चिह्न यथा– 1, अंकित होता है जिनके दबाने पर कर्सर को वांछित स्थान पर लाया जा सकता है।

(च) विशिष्ट बटन –

कम्प्यूटर के कुंजी पटल पर कुछ विशिष्ट बटन होते हैं जिनमें पेजअप बटन, पेजड़ाउन बटन आदि प्रमुख हैं।

(2) भीतरी अवयव :–

स्कैनर, फ्लॉपी डिस्क ड्राइव (ये दोनों बाह्य अवयव में भी सम्मिलित होते हैं), माउस आदि प्रमुख भीतरी अवयव है। ध्यातव्य है कि ये सभी अवयव केवल हिन्दी भाषा के लिए नहीं बनाए गए हैं, बल्कि ये तो कम्प्यूटर के आवश्यक अंग हैं। माइक्रोप्रोसेसर कम्प्यूटर में शब्द–संसाधक का सबसे महत्त्वपूर्ण भीतरी अवयव है।

हिन्दी में शब्द-संसाधन :–

आज कम्प्यूटर पर अंग्रेजी भाषा ही नहीं बल्कि विश्व की सभी प्रमुख भाषाओं के शब्द–संसाधन प्रस्तुत हैं। हिन्दी–अंग्रेजी दोनों भाषाओं में एक–साथ शब्द–संसाधन करने की क्षमता वाला 'शब्दमाला' शब्द–संसाधक बाजार में उपलब्ध है। 'लिपि' नामक त्रैभाषिक कम्प्यूटर में हिन्दी शब्द–संसाधन की सभी सुविधाएँ उपलब्ध हैं। जैसे– इंटेल का 8088 चिप, 256 KB स्मृति का आंतरिक शब्द कोश, वर्तनी–संशोधन, हिन्दी के साथ अंग्रेजी व अन्य भाषाओं के शब्दों को रखने की सुविधा आदि हिन्दी–ट्रान–मुंबई की ओर से 'आलेख' शब्द–संसाधन बाजार में आया है जिस पर दो भाषाओं में काम किया जा सकता है। इनके अतिरिक्त 'अक्षर', 'मल्टीवर्ड', 'शब्द – रतन', 'भारती' आदि अन्य प्रमुख हिन्दी शब्द–संसाधक है। जिन पर 'वर्डस्टार' जैसे अंग्रेजी शब्द–संसाधनों वाली सभी सुविधाएँ उपलब्ध हैं। इसी प्रकार देवनागरी 'सी बेसिक कंपाइलर', 'डेवबेस', 'सुलिपि' आदि हिन्दी भाषा के लिए विकसित प्रमुख साफ्टवेयर हैं। आज 'पेजमेकर' को हिन्दी पुस्तकों का प्रकाशन कार्य, कॉरल ड्रॉ चित्रण, तस्वीर आदि के लिए प्रयुक्त किया जा रहा है। अब डॉट–मैट्रिक्स, लेजर–मुद्रक आदि के द्वारा देवनागरी लिपि में किए गए कार्य को सुगमता के साथ छापा जा सकता है। अतः संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि वर्तमान समय में कम्प्यूटर पर हिन्दी के शब्द संसाधन का कार्य तेजी से विकास कर रहा है।

(ख) हिन्दी में ऑकड़ा-संसाधन :–

तथ्यों, सूचनाओं आदि के एकत्रीकरण को ही आँकड़ा कहा जाता है। फ्लॉपी डिस्क ड्राइव, स्कैनर, सी. डी. प्लेयर , डी.बी.डी, की–बोर्ड आदि के द्वारा पहले कम्प्यूटर में रॉ–डाटा (Raw Data) अर्थात् कच्चे अव्यवस्थित आँकड़े भर लिए जाते हैं। फिर आवश्यकता के अनुसार इन आँकड़ों को सार्थक एवं उपयोगी सूचना में बदला जाता है, उसे उपयोगी डाटा कहा जाता है। रॉ डाटा को उपयोगी डाटा में बदलना ही आँकड़ा–संसाधन (Data

Processing) कहलाता है। आँकड़ा संसाधन के हार्डवेयर संबंधी क्षेत्र में आई.आई. टी. कानपुर ने 'जिस्ट प्रौद्योगिकी' में पर्सनल कम्प्यूटर के मदरबोर्ड पर 'जिस्ट कार्ड' लगाकर। –ऑकड़ा–संसाधन संबंधी कार्य किया है। इसके अतिरिक्त 'सुलिपि' सॉफ्टवेयर सहायता से द्विभाषिक (अंग्रेजी व हिन्दी आँकड़ा–संसाधन का कार्य किया जा सकता है। यह सॉफ्टवेयर मानकीकृत देवनागरी के कुंजी पटल के लिए भी उपयोगी है। इन दोनों ही सॉफ्टवेयरों के द्वारा भारतीय भाषाओं में परस्पर लिप्यंतरण किया जा सकता है। यद्यपि वे दोनों ही सॉफ्टवेयर ऑकड़ा संसाधन व शब्द संसाधन दोनों के लिए समान रूप से उपयोगी है, परन्तु इन दोनों में मूल अन्तर यही है कि जिस्ट के माध्यम में एम. एस.डॉस में ही हिन्दी–आँकड़ा संसाधन का कार्य करना सम्भव है जबकि सुलिपि में यही कार्य एल.ए.एन. (Local Area Network) के परिवेश में करना सन्भव है।

(ग) हिन्दी में वर्तनी-शोधक :-

हिन्दी भाषा के लेखन में दो प्रकार की गलतियां हो सकती है। वर्तनीगत तथा व्याकरण की अशुद्धियां, इन दोनों गलतियों को शिक्षक को तुरंत सुधार देता है। परन्तु कम्प्यूटर में ऐसी सुविधा नहीं होती। कम्प्यूटर में यह सुविधा नहीं होती कि वह किसी भी वर्तनी अशुद्धि को स्वयं शुद्ध कर दे। परन्तु अशुद्धि की ओर ध्यान आकर्षित करने के लिए उसमें एक व्यवस्था होती है। जब कम्प्यूटर में आँकड़े भरते समय वर्तनीगत अशुद्धि होती है, तब उसके नीचे एक लाल रंग की रेखा खिंच जाती है। यह रेखा लहरदार होती है। अतः कम्प्यूटर पर कार्य करने वाला व्यक्ति यह देख लेता है कि उसने अशुद्ध शब्द लिखा है। यदि उसे शुद्ध शब्द का ज्ञान नहीं है तो वह ऊपर की पंक्ति में लिखे Tool पर माऊस को क्लिक करता है तथा उसके बाद आए खानों (कॉलमों) में से वह 'वर्तनी व्याकरण' पर पुनः क्लिक करता है। तब कम्प्यूटर उस शब्द से मिलती–जुलती वर्तनी वाले शुद्ध शब्दों को प्रस्तुत करता है। उस शब्द से मिलते–जुलते शुद्ध शब्द प्रकट होने पर व्यक्ति शुद्ध व वांछित शब्द का चयन कर लेता है। पहले यह सुविधा केवल अंग्रेजी भाषा में ही उपलब्ध थी क्योंकि अंग्रेजी शब्दकोश को पहले ही कम्प्यूटर में पहले से फीड (भर) कर दिया जाता है।

कुछ समय पहले तक यह सुविधा हिन्दी भाषा में कम्प्यूटर पर काम करने वालों को उपलब्ध नहीं थी। इसीलिए 'ओशोकम्यून इंटरनेशनल, पूणे' ने हिन्दी वर्तनी जाँच के लिए 'ओशो स्पैल बाइंडर' तथा कम्प्यूटर में हिन्दी शब्दकोश को फीड (भरने) करने के लिए 'हिन्दी शब्द सागर' सॉफ्टवेयर का विकास किया। परन्तु यह सॉफ्टवेयर केवल ऐपल मैकिन्टॉश कम्प्यूटर पर कार्य करता है। यह सॉफ्टवेयर हिन्दी के प्रूफीडर का कार्य करता है तथा इसके द्वारा 1000 हिन्दी शब्दों की प्रति मिनट जाँच की जा सकती है। इसके शब्दकोश में लगभग सवा लाख हिन्दी शब्दों को संचित किया गया है। इसी प्रकार सी–डैब ने हिन्दी के वर्तनी शोधन के लिए 'जाँचक' नामक सॉफ्टवेयर का विकास किया है परन्तु इसे चलाने के लिए जिस्ट कार्ड की आवश्यकता पड़ती है। 'स्पेल चेकर' भी वर्तनी शोधक सॉफ्टवेयर है। परन्तु यह अवश्य कहा जाएगा कि जिस प्रकार वर्तमान समय में सभी पर्सनल कम्प्यूटरस पर अंग्रेजी के वर्तनी–शोधक सॉफ्टवेयर पहले से ही लगे होते हैं, वैसी सुविधा हिन्दी के वर्तनी – शोधक सॉफ्टवेयर के रूप में उपलब्ध नहीं है। अब चूँकि हिन्दी भाषी क्षेत्रों में कम्प्यूटर का प्रचलन व प्रयोग बढ़ रहा है, ऐसी दशा में कम्प्यूटर वर्तनी शोधक सुविधा पहले से ही उपलब्ध होनी आवश्यक प्रतीत होती है।

(घ) मशीनी अनुवाद :-

वर्तमान युग में समय ही मूल्यवान है। आज के वैज्ञानिक, चिकित्सक, राजनेता आदि दूसरी भाषा में संबंधित

वैज्ञानिक आदि के विचारों को त्वरित गति से समझना चाहते हैं। ऐसी दशा में कम्प्यूटर द्वारा एक भाषा का दूसरी भाषा में अनुवाद के कार्य को बहुत उपयोगी माना जाने लगा है क्योंकि इस अनुवाद के कार्य को मनुष्य की तुलना में कहीं अधिक तीव्र गति से करता है। कम्प्यूटर पर पहला अनुवाद 7 जनवरी, 1974 को हुआ था जिसमें साठ रूसी वाक्यों का अंग्रेजी में अनुवाद किया गया। जहाँ तक हिन्दी भाषा में दूसरी भाषा के अनुवाद का संबंध है तो इस दिशा में डॉ. ओम विकास ने सबसे सराहनीय कार्य किया। उन्होंने राजभाषा आयोग के सहयोग से कम्प्यूटर पर अनुवाद करने की योजना का प्रारूप बनाया। आज जिस्टकार्ड की सहायता से भारत के विविध राज्यों की भाषाओं का कम्प्यूटर द्वारा 70 से 80 प्रतिशत शुद्धता के साथ हिन्दी में अनुवाद किया जा सकता है। आई.आई.टी., कानपुर ने श्अक्षर भारतीश नामक सॉफ्टवेयर का विकास किया है जो भारतीय भाषाओं का परस्पर अनुवाद करता है। परन्तु इसका प्रयोग पूरी तरह सफल नहीं हुआ है। इसी प्रकार रेलवे सूचना प्रणाली केन्द्र, नई दिल्ली ने भी अंग्रेजी शब्दों का हिन्दी में लिप्यांतरण करने व अनुवाद करने वाला सॉफ्टवेयर विकसित किया है। सी–डैक पूणे द्वारा विकसित 'ट्रशनेन' नामक सॉफ्टवेयर की सहायता से अंग्रेजी भाषा की संज्ञाओं का हिन्दी में अनुवाद करना सम्भव है। 'लिरिक्स' पर चलने वाला 'मैट' सॉफ्टवेयर भी अंग्रेजी भाषा का हिन्दी में अनुवाद प्रस्तुत करता है। परन्तु हिन्दी में अनुवाद कार्य कर सके। इस दिशा में अधिकांश संस्थाएँ अलग–अलग स्तर पर प्रयास कर रही हैं।

निष्कर्ष :–

हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा और राजभाषा दोनों है और आज कंप्यूटर के युग में हिंदी ने कंप्यूटर के साथ मिलकर अपना अपरिमित विकास किया है। 'कंप्यूटर पर हिंदी के निरंतर प्रयोग और विकास ने यह साबित कर दिया कि कंप्यूटर पर केवल अंग्रेजी का ही वर्चस्व नहीं रहेगा, उस पर हिंदी भी अपना अधिकार कर, सकती है। और भारत देश में अभी तक सबसे ज्यादा बोली जा रही हिन्दी भाषा है। आज का युग प्रौद्योगिकी का युग है संचार का युग है सूचना प्रौद्योगिकी तकनीकी उपकरणों के माध्यम से सूचनाओं का संकलन तथा संप्रेषण करता है। सूचना प्रौद्योगिकी में कंप्यूटर का महत्व बहुत ज्यादा है आज के युग में कंप्यूटर के द्वारा सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में जो नई क्रांति हुई है वह है यांत्रिकी और कंप्यूटर की नई भाषाई मांगों को पूरा करना। नई भाषाओं में हिंदी का भी अपना विशेष महत्व है। हिंदी विश्व की तीसरी सबसे बड़ी भाषा है। हिंदी की शब्द संपदा का नित्य विस्तार होने से कंप्यूटर और हिंदी एक दूसरे के पूरक हो गए हैं धीरे–धीरे अन्य देशों में हिंदी के पठन–पाठन और प्रचार प्रसार में तेजी से वृद्धि हुई है। दूरसंचार के माध्यमों ने हिंदी के प्रचार प्रसार में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। क्योंकि हिंदी भाषा का व्याकरण वैज्ञानिक है कंप्यूटर युग में हिंदी के प्रयोग की संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए इलेक्ट्रॉनिक विभाग ने भारतीय भाषाओं के लिए तकनीकी विकास के अंतर्गत विभिन्न परियोजनाओं को शुरू किया है। आज हिंदी के क्षेत्र में कंप्यूटर का विशेष महत्व है क्योंकि हम जो भी करते हैं जो भी सीखते हैं वह हिंदी भाषा में हमें अच्छे से समझ में आता है क्योंकि हमारा राष्ट्रीय भाषा हिंदी है और अधिकतर लोग हिंदी ही जानते हैं।

आज विंडोज प्लेटफार्म में कार्य करने वाले हिंदी के अनेक सॉफ्टवेयर बाजार में उपलब्ध है। जैसा सीधे क्लिप ऑफिसर फॉर विंडोज आदि हिंदी भाषा में वेबपेज विकसित करने के लिए लेकिन पैकेट तैयार किया गया है जिसमें कोई भी व्यक्ति या संस्था अपना वेब पेज हिंदी में प्रकाशित कर सकता है। कंप्यूटर एवं नेटवर्क के

परस्पर सहयोग दे हिंदी भाषा का प्रचार तीव्र गति से होने की संभावनाएं बढ़ गई हैं। माइक्रोसाफ्ट रेडी गूगल याहू आदि विदेशी कंपनियां अपनी वेबसाइट पर हिंदी भाषा को स्थान दे रही है। इंटरनेट सेवा के अंतर्गत ईमेल वॉइस मेल आदि के कारण हिंदी भाषा के विकास व संप्रेषण की संभावनाएं बढ़ गई है। हिंदी वर्ड नेट पर हिंदी शब्दों के एक विशाल भंडार को विकसित किया गया है निष्कर्ष हिंदी और कंप्यूटर को जोड़ने के काफी प्रयास किए गए हैं। परंतु अभी भी हिंदी तकनीकी के दृष्टिकोण से पूर्ण विकसित नहीं है इन क्षेत्रों में अभी युद्ध स्तर पर कार्य करने की आवश्यकता है। जिससे हिंदी के प्रचार प्रसार में वैश्विक रूप से महत्वपूर्ण वृद्धि की जा सके हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा है और तकनीकी में भी हिंदी की बहुत ज्यादा जरूरत पड़ती है और हिन्दी और कंप्यूटर का अटूट अंतर संबंध है।

संदर्भ :–

1. कम्प्यूटर और हिन्दी, विकिपीडिया।
2. कम्प्यूटर और हिन्दी संबंध, डिजिटलटॉक डॉट कॉम।
3. कम्प्यूटर और हिन्दी संबंध, अजय कुमार।
4. हिन्दी भाषा और कम्प्यूटर, संतोष गोयल।
5. कम्प्यूटर और हिन्दी, डॉ० हरिमोहन, तक्षशिला प्रकाशन, अन्सारी रोड़, दरियागंज, नई दिल्ली – 110002
6. अनुवाद विज्ञान, सिद्धान्त और अनुप्रयोग, डॉ नगेन्द्र, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।
7. कम्प्यूटर के भाषिक अनुप्रयोग, विजय कुमार मल्होत्रा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. हिन्दी साहित्य चिन्तन, सुधाकर पाण्डे, कला प्रकाशन नई दिल्ली।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 165-169

सूर का वात्सल्य वर्णन हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि

डॉ. बी. आर. भद्री
सहायक प्राध्यापक हिन्दी, रा. म. वि. पौखाल, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखंड।

भक्ति काल के कृष्णभक्ति शाखा के प्रसिद्ध कवि सूरदास जी का जन्म संवत 1535 को माना जाता है।[1] कुछ विद्वान इनका जन्मस्थान रुनकता नामक ग्राम में मानते हैं तो कुछ विद्वान दिल्ली के निकट सीही नामक स्थान को मानते हैं। वे भक्त कवियों के शिरोमणि माने जाते हैं। उनकी काव्य रचना इतनी काव्यपूर्ण है कि आने वाले कवियों की श्रृंगार और वात्सल पर आधारित रचनाएं सूर की जूठन सी लगती है।[2] उनके जैसा वात्सल्य वर्णन अन्यत्र दुर्लभ हैं। बचपन में मिले मां–बाप, दादा–दादी, नाना–नानी, या अपने से छोटे बच्चों के लिए मन में उत्पन्न प्रेम ही वात्सल्य की सृष्टि करता है। सूरदास जी ने अपने वात्सल्य वर्णन में देवकी, वसुदेव, नंद, यशोदा, ग्रामीणों आदि के मन में कृष्ण के सुंदर रूप सौन्दर्य की ऐसी छाप बनाई है जोकि अत्यंत मर्मस्पर्शी है। उन्होंने वात्सल्य का इतना नैसर्गिक व भावुक वर्णन किया है कि वज्र जैसे कठोर हृदय में प्रेम उत्पन्न हो जाता है।

डॉ. हरवंशलाल शर्मा जी के अनुसार, "सूर का वात्सल्य भाव विश्व साहित्य में अपना विशेष स्थान रखता है।"[3] उनका कृतित्व महान व सार्वकालिका है। अपने इसी अमूल्य कृतित्व से उन्होंने भाव और भाषा के दृष्टिकोण से साहित्य का काया कल्प किया और व्रज भाषा का आश्रय लेकर धार्मिक जगत में कृष्ण काव्य की विशिष्ट परंपरा को प्रारंभ किया है।[4] कृष्ण भक्ति शाखा के प्रमुख कवि एवं भगवान कृष्ण के अनन्य आराधक महाकवि सूरदास जी ने श्री कृष्ण के जन्म से लेकर मथुरा जाने तक के अनेक दृश्य सूरसागर में चित्रित किए हैं। कृष्ण जन्म, बाल सुलभ क्रीड़ाएं, घुटनों के बल चलना,गाय चराने की इच्छा प्रकट करना, ग्वाल बालों कावन जाना, वन में अनेक खेल खेलना, हार जाने पर रोना, माता से ग्वाल–बालों की शिकायत करना, माखन चोरी आदि ऐसे प्रसंग हैं जिनका उन्होंने मनोहरी चित्रण किया है।

सूरदास जी ने अपने काव्य में श्रृंगार और वात्सल्य रसों को प्रधानता दी है। श्रृंगार के संयोग और वियोग दोनों पक्षों के निरूपण में उन्हें अद्वितीय सफलता मिली है। सूरदास जी के विषय में श्री वियोगी हरि जी ने लिखा है कि सूर ने यदि वात्सल्य को अपनाया है तो वात्सल्य ने सूर्य को अपना एकमात्र आश्रय स्थान दिया है।[5] सूरदास जी ने वात्सल्य वर्णन बड़े विस्तार से किया है। बालक व युवक कृष्ण की लीलाओं को उन्होंने बड़े सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया है। कृष्ण के रूप वर्णन, चेष्टाओं का वर्णन, क्रियाओं का वर्णन, अंतरभावों आदि का वर्णन, उन्होंने अत्यंत मार्मिक ढंग से किया है। श्रृंगार रस के समान ही वात्सल्य रस के दोभेद किए जा सकते हैं संयोग वात्सल्य और वियोग वात्सल्य सूरदास जी के काव्य में इन दोनों वात्सल्यों को देखा जा सकता है जिनका उन्होंने अत्यंत मार्मिक ढंग से वर्णन किया है। संयोग वात्सल्य के उदाहरण इस प्रकार से है– यशोदा कृष्ण

केपालने को हिलाकर सुलाने का प्रयत्न करती है किन्तु कृष्ण जब तक पालना हिलता है व मैया की मधुर गान की आवाज सुनता है तब तक चुप रहता है और जब यह सब बंद हो जाता है तब आंख खोलकर देखने लगता है जिसका चित्रण इस प्रकार से है :–

यशोदा हरि पालने झुलावे,
हलरावे दुलरावे, मल्हावे जोशी सोई कुछ गावै।
मेरे लाल को इन निंदिया, काहे न आनिसुआवै।
कबहुं पलक हरि मूंद लेते है, कअधर फरकावै।
सोवत जानि मौन है रहि, करि–करि सैन बनावै।[6]

बाल चेष्टाओं का वर्णन –

सूरदास जी ने कृष्ण की बचपन की विविध चेष्टाओं का सजीव एवं मर्मस्पर्शी वर्णन किया है। उन्हें माता का स्नेह, ममता पिता के संतुलित स्नेहपूर्ण हृदय तथा तथा भ्राता, गुरु, प्रेयसी एवं शत्रु के हृदय में प्रवेश करने की दृष्टि प्राप्त थी। उनका सहज एवं स्वाभाविक वर्णन ही इसका प्रमाण है। जन्म के पश्चात जब माता उन्हें पालने में जो जाती है उसका वर्णन इन पंक्तियों में देखने को मिलता है–

कबहुं पलक हरि मूंद लेता है, कबहुं अधर फरकावै

थोड़ा बड़े होने पर वह अपने पैर का अंगूठा चूसने लगते हैं यथा –

चरण गहि अंगूठा मुख मेलत,

घुटनों के बल चलना–

किलकत कान्हा घुटुरुवनि आवत।

घुटनों के बल पर कृष्ण को चलते हुए देखकर यशोदा अत्यंत प्रसन्न होती है वह उसे पैरों से चलना सिखाती है कृष्ण लड़खड़ाते हुए पैरों से चलने की कोशिश करते हैं :

सिखवती चल जसोदा मैया, कबहुंक सुंदर बदन विलोकति उर आनंद अरि लेती बलैया।
कबहुंक कुल देवता मनावति चिर जीवहुं मेरो कुंवर कन्हैया।[7]
बाल–सौन्दर्य–
शोभित कर नवनीत लिए।
घुटुरुनि चलतरेनु तन मंडित मुख दधि लेप किए।
चारु कपोल लोल लोचन, मुख दधि लेप किए।
लट लटकनि मनु मंत्र, मधुप–गन मादक मधुहिं पिए।
कठुला–कंठ, वज्र केहरि–नख, राज्य रुचिर हिज।
धन्य सूर एकौ पर हिंदी सुख, का संत कल्प जिए।[8]

गाय का दूध दुहने की हठ :–

ग्वालों द्वारा दूध धोते समय दूध की धार की आवाज सुनकर कृष्ण को आनंद आता है इसलिए वह दूध दोहना सीख कर दूध की धार बजाने के लिए उत्सुक होते हैं जिसका वर्णन इन पंक्तियों में देखने को मिलता है–

मैया दुहियौ मोहि सिखावहुं।

कैसे गहत दौहनी घुटवनि, कैसे बछरा थन लै लावहु।

गाय चराने की इच्छा :–

बड़े होने पर कृष्ण ग्वाल बालों के साथ गाय चराने की जिद करते हैं। माता यशोदा उनकी बात स्वीकार कर लेती है किंतु जब वह सुनती है कि ग्वाल वालों ने पेड़ के नीचे बैठकर कृष्ण से गाय हंकवाई है तो वह गुस्से में कहती है :–

मैं पठवति अपने लरिका कौ, आवैं मन बहराई।
सूर श्याम मेरे बालक, मारत ताहि रिंगाई।

खेल-खेल में रूठना :–

कृष्ण जब ग्वाल–बालों के साथ खेलते हैं तो हार जाने पर रूठ जाते हैं और कभी–कभी गुस्सा करने लगते हैं यथा –

खेलत में काको गुसैंया।
हरि हारे जीते श्रीदामा, बरबस हीं कतकरत रिसैंया।
जाति–पाति हमसे बढ़ नाहिं, नाहिंन बहन तुम्हारी छैंया।
अति अधिकार जनावत यातें, अधिक तुम्हारे हैं कुछ गैयां।[9]

माता की अभिलाषा :–

मां का ह्रदय पुत्र की अनेक प्रकार की अभिलाषाओं का केंद्र होता है। सूरदास जी ने मात्र ह्रदय के भावों को जिस प्रकार से अभिव्यक्ति दी है उससे माता की स्नेहका अजस्र स्रोत प्रवाहित होता है जो कि इन पंक्तियों में देखा जा सकता है :–

जसुमति मन अभिलाष करें।
कब मेरो लाल घुटुरुनि रेंगे, कब धरती पग द्वैक धरे।
कब द्वै दांत दूध के देखों, कब तोतरैं मुख बचन झरैं।
कब नंद बाबा कहि बोलैं, कब जननी कहि मोहिं ररैं।[10]

चंद्रमा पाने की हट :–

जब यशोदा मैया कृष्ण का मन बहलाने के लिए चंद्रमा दिखाती है तो कृष्ण चंद्रमा को लाने की हट करते हैं। वे मैया से कहते हैं कि मुझे खेलने के लिए चंद्रमा ही चाहिए नहीं तो मैं धरती पर लेट जाऊंगा। गाय का दूध भी नहीं पिऊंगा और तेरी गोद में भी नहीं आऊंगा तथा चोटी भी नहीं बढाऊंगा वतेरा पुत्र नहीं बल्कि नंद बाबा का पुत्र कहलाऊंगा यथा–

मैया मैं तो चंद्र खिलौना लैहौं।
जै होंलौटी धरनीं पर अबहिं, तेरी गोद न ऐ हों।
सुरभि कोपय पान नकरिहौं, बेनी सिर न गुहै हौं।
है पूत नंद बाबा के, तेरो सुतन कहै हौं।

मां का दूध पीना :–

बालकृष्ण लगभग तीन–चार वर्ष के होकर भी अभी मां का दूध पीते हैं उनकी आदत छुड़ाने के लिए माता

यशोदा कहती है अब तो बड़ा हो गया है तुझे मेरा दूध नहीं पीना चाहिए तुम्हें अब कजरी गाय का दूध पीना चाहिए तुझे देखकर तेरे साथी हसेंगे तब कृष्ण मां के आंचल में मुंह छिपाकर मुस्कुराते हैं। यशोदा कहती है–

कजरी कोपय पियहुं लाल, जाहौं तेरी बेनी बढै।

मां की बात का स्मरण करते हुए वे कहते हैं कि मुझे दूध पीते हुए कितने दिन हो गए हैं किन्तु मेरी चोटी नहीं बढ़ी। आप तो कहती हैं कि दूध पीने से तेरी चोटी बढ़ेगी किन्तु अभी वह छोटी ही है।

मैया कबहिं बढैगी चोटी,
किती बार मोहिं दूध पिबत भई यह अजहुं है छोटी।[11]

माखन चोरी :–

जब कृष्ण और बड़े हो जाते हैं तो ग्वाल–बालों के साथ खेलते हैं एक दिन उन्होंने एक ऐसी युक्ति निकाली कि जिससे सबका मनोरंजन भी हो और खाने के लिए दूध, दही और मक्खन भी मिले। उन्होंने माखन चुराने का निर्णय लिया वे रोज माखन चुराते थे और स्वयं भी खाते थे व साथियों को भी खिलाते थे जिससे एक बड़ा उपद्रव हो गया। पकड़े जाने पर वह कहते हैं कि–

मैया मोरी मैं नहीं, माखन खायो।
ख्याल परै ये सखा सबै मिलि, मेरे मुख लपटायो।
देखी तुहि छींके पर भाजन, ऊंचे धर लटकायो।
तुही निरखहिं नान्हें कर अपने, मैं कैसे धरि पायो।[12]

कभी–कभी ग्वाल बाल कृष्ण को चिढाते थे तो वह रूठ जाते और खेलने जाने से मना करते तो यशोदा का मन द्रवित हो जाता था वह रोने लगती थी और शपथ खाकर कहती थी कि तू मेरा ही पुत्र है मैं ही तेरी मां हूं जिसका एक उदाहरण इस प्रकार से है–

मैया मोहि दाऊ बहुत खिजायौ।
मोसौ कहत, मोल का लीन्हौं, तै जसुमति कब जायौ।
कहां कहौं एहि रिस के मारे, खेलते सौं हौं नहीं जात।
पुनि–पुनि कहत कौन है माता,को है तुमरो तात।
सूर श्याम मोहि गोधन की सौं, हौं माता तू पूत।[13]

वियोग वात्सल्य :–

सूरदास जी ने जिस प्रकार से वात्सल्य के संयोग पक्ष का हृदय स्पर्शी वर्णन किया है उसी प्रकार से वियोग पक्ष का भी किया है। कृष्ण के मथुरा जाने के पश्चात यशोदा मैया अपनी भावना व्यक्त करते हुए नन्द जी से कहती है यथा–

नंद ब्रज लीजै ठोकि बजाइ।
देहु विदा मिलि जेहि मधुपुरी, जहां गोकुल के राई।

कृष्ण वियोग :–

कृष्ण वियोग यशोदा सहन नहीं कर पाती है। वह रोज कृष्ण के मथुरा सेलौटने का इंतजार करती है। माखन देखकर उसे कृष्ण की बार–बार याद आती है और मन ही मन परेशान होती है। वह कहती है –

सूलहोत नवनीत देखि, मेरे मोहन के मुख जोग।

यशोदा दूत के पास देवकी के लिए संदेश भेजती है वह कहती है :–

संदेसौ देवकी सौ कहियौ।

हौं तो धाई तिहारे सुत की, दया करते ही रहियौ।।

वह संदेश के माध्यम से कहती है कि कृष्ण को माखन और रोटी अच्छी लगती है तथा उनको स्नान के लिए बार–बार मनवाने की आदत पड़ गई है मुझे इस बात की चिंता है कि वहां मेरा लाडला संकोच वर्ष इच्छा पूरी करता होगा या नहीं यथा–

यद्धपि देवकी तुम जानती हौ, तऊ मोहीं कहिए आवै।

प्रातः होत मेरे लाल लडेते, माखन रोटी भावै।।

तेल उपटनौ अरुतातौ जल, ताहि देखि भजि जात।

जोई–जोई मांगत सोई–सोई देती, क्रम क्रम करि कै न्हात।।

सूरपथिक सुनि मोहि रैन–दिन, बढयौ रहते उर सोच।

मेरौ अलक लडैतो मोहन, ह्वैहै करत संकोच।।[14]

यशोदा की इस प्रकार से विरह जनित व्याकुलता में पुत्र स्नेह की संपूर्ण कोमल भावनाएं समाहित हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी के अनुसार "वात्सल्य और श्रंगार के क्षेत्रों का जितना अधिक उदघाटनर्सू ने अपनी बंद आंखों से किया है उतना किसी अन्य कवि ने नहीं वे इन क्षेत्रों का कोना–कोना झांक आए हैं।"[15] सूर की भाषा में शब्द इतने सरल और सरस होते हैं कि गीत के भाव शायद ही में व्यक्त कर पाठक के हृदय को भी आनंदित कर देते हैं।

अतः हम कहते हैं कि सूरदास जी ने श्रृंगार और वात्सल्य का वर्णन विशद, मनोरम परिस्थितियों के धरातल पर किया है। उन्होंने बाल वर्णन में देखी, सुनी, परखी भावनाओं को ही कुशलता के साथ अभिव्यक्त किया है। उन्होंने बालकों की सहज प्रकृति और माता के स्वाभाविक स्नेह का दर्शन कराया है। उनके द्वारा ऐसे रचित वात्सल्य पूर्ण पद मातृ स्नेह का वर्णन पाठक वर्ग को मंत्रमुग्ध करता है। इस प्रकार से हम कर सकते हैं की सूर का वात्सल्य वर्णन हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. संपादक डॉ. मानवेंद्र पाठक, प्राचीन एवं मध्यकालीन काव्य मंजूषा, पृ.सं. 47, अंकित प्रकाशन, हल्द्वानी।
2. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, पृ.सं. 537
3. हरवंश लाल शर्मा, सूर और उनका साहित्य, पृ.सं. 243
4. डॉ. एम.एल.पाण्डे, मध्य कालीन हिन्दी कविता, पृ. सं. 71, अंकित प्रकाशन, हल्द्वानी।
5. आर.एन.गौड़, जे.एन. मिश्रा, हिन्दी निबन्ध
6. सूरसागर।
7. सूरसागर, पृ.सं. 162
8. संपादक,मानवेंद्र पाठक, प्राचीन एवं मध्यकालीन काव्य मंजूषा, पृ. सं. 94, अंकित प्रकाशन, हल्द्वानी।
9. आर.एन.गौड़, जे. मिश्रा, हिन्दी निबन्ध।
10. सूरसागर।
11. सूरसागर, पृ. सं. 793
12. सूरसागर, पृ. सं. 952
13. सूरसागर, पृ. सं, 833
14. सूरदास, पृ.सं. 3793
15. डॉ. जगदीश शरण यूं.जी. सी. नेट, उपकार, पृ. सं. 228,

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 170-175

थर्ड जेंडर : एक दर्द भरी दास्तान

(हिंदी साहित्य के संदर्भ में)

डॉ. भावना

असिस्टेंट प्रोफेसर (हिंदी विभाग), हु0सि0बो0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सोमेश्वर, अल्मोड़ा।

सारांश :–

हमारा समाज पुरुष और स्त्री रूपी दो स्तम्भों पर टिका हुआ है। इन दो लिंगों के अतिरिक्त एक तीसरे लिंग का भी अस्तित्व हमारे समाज में है, जिसे थर्ड जेंडर, किन्नर, नपुंसक, छक्का, खोजा, हिजड़ा इत्यादि नामों से पुकारा जाता है।

इन नामों को सुनते ही हम अचानक हँसने लगते हैं। इनको देखकर हम मुँह फेर लेते हैं और वहाँ से भागने लगते हैं। हम इन्हें हँसी का पात्र समझ लेते हैं और ये भूल जाते हैं कि ये भी हमारी ही तरह एक साधारण मनुष्य हैं। इन्हें भी समाज में सम्मान के साथ जीने का अधिकार है। अगर हम किसी के साथ अच्छा व्यवहार नहीं कर सकते तो हमें दुर्व्यवहार करने का भी कोई अधिकार नहीं है। धरती पर जब से मनुष्य जाति का जन्म हुआ तभी से थर्ड जेंडर समुदाय का अस्तित्व भी प्राप्त होता है। लेकिन हजारों वर्षों के बाद भी आज तक इस समुदाय को समाज में बराबरी का स्थान नहीं मिल पाया। थर्ड जेंडर का वर्णन हमारे पुराण ग्रन्थों में भी मिलता है। इन सबके बावजूद भी आज थर्ड जेंडर का स्थान समाज में नगण्य है। चूँकि साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है और यही कारण है कि हिंदी साहित्य के रचनाकारों ने थर्ड जेंडर की दर्द भरी दास्तान को साहित्य के माध्यम से उजागर करने का एक सफल प्रयास किया है।

मुख्य शब्द :– थर्ड जेंडर, समाज, लिंग भेद, किन्नर विमर्श, असमानता, वेदना आदि।

''जितना श्रापित मेरा जीवन, दुखद अधिक मर जाना।
जूते चप्पल मार लाश को, कहते लौट न आना।।''[1]

थर्ड जेंडर से हमारा अभिप्राय उन लोगों से है, जिनके जननांग पूरी तरह से विकसित नहीं हो पाते हैं। सरकार व समाज के द्वारा इस समुदाय के लोगों को ट्रांसजेंडर नाम दिया गया है।

अमेरिकी वैज्ञानिक संगठन के अनुसार–''जिनकी लैंगिक पहचान, अभिव्यक्ति या व्यवहार उनके निर्धारित लिंग से भिन्न होते हैं, किन्नर कहलाते हैं। कभी–कभी किन्नरों को चिकित्सकीय सहायता से दूसरे लिंग में परिवर्तित व्यक्ति या इच्छुक व्यक्ति भी कहते हैं।''[1]

भारतीय समाज में किन्नरों के चार प्रकार बताए जाते हैं–बुचरा, नीलिमा, मनसा तथा हंसा। इनमें से बुचरा वास्तविक हिजड़े होते हैं, क्योंकि ये न तो जन्मजात पुरुष होते हैं और न ही स्त्री। नीलिमा वर्ग के अन्तर्गत वे

किन्नर आते हैं जो किसी कारणवश किन्नर बनने को समर्पित हो जाते हैं।

शारीरिक रूप के बजाय मानसिक रूप से स्वयं को पुरुष के स्थान पर स्त्रीलिंग के अधिक निकट महसूस करने वाला वर्ग मनसा कहलाता है तथा शारीरिक कमी या यौन न्यूनताओं के कारण बने किन्नर हंसा वंर्ग में आते हैं। इनके अतिरिक्त जो धन लोभ के कारण किन्नर होने का नाटक करते हैं ऐसे नकली हिजड़े अबुआ कहलाते हैं। साथ ही जबरन किन्नर बनाया गया वर्ग छिबरा कहलाता है।

थर्ड जेंडर वर्ग वर्तमान आधुनिकता के दौर में भी विकास के पैमाने पर हांशिये पर खड़ा हुआ है। इस वर्ग के विकास की अनदेखी एक ज्वलंत मुद्दा बनते जा रहा है। आज सभी समुदाय के वर्गों के अधिकारों व विकास की बात की जाती है। लेकिन थर्ड जेंडर की चर्चा करना कोई नहीं चाहता। थर्ड जेंडर को सभी अधिकारों से वंचित कर आज जन के द्वारा इनके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है। हमारा समाज गुनाहगारों को तो बड़ी आसानी से माफ कर देता है, लेकिन प्राकृतिक भूल के शिकार व्यक्तियों को कभी नहीं अपनाता है। जैसे थर्ड जेंडर ने धरती पर जन्म लेकर कोई बहुत बड़ा गुनाह कर दिया हो। थर्ड जेंडर को जन्म से लेकर मृत्यु तक अनेक प्रकार के सामाजिक शोषणों का शिकार होना पड़ता है।

वर्तमान में विमर्शों का जो दौर चल रहा है उसमें हाशिए पर धकेला गया यह थर्ड जेंडर वर्ग भी अपनी अस्मिता, अस्तित्व व अधिकारों के लिए निरन्तर संघर्षरत है। भारतीय संविधान में इन्हें किन्नर नाम से सम्बोधित किया गया है।

हमारे घरों में शादी–ब्याह या बच्चे के जन्म के अवसर पर नाच–गाना करके सबको आशीर्वाद देने वाले इस थर्ड जेंडर का जन्म सिर्फ नाचने–गाने या भीख मांगने के लिए नहीं हुआ है, इन्हें भी स्वतंत्र जीवन जीने का अधिकार है।

अपना घर परिवार होते हुए भी कोई इनको अपनाना नहीं चाहता। कोई इनको किराये पर घर देने के लिए तैयार नहीं होता। इस कारण ये लोग झोपड़ियों में रहने के लिए विवश होते हैं। ये घर–घर जाकर स्टेशनों पर भीख मांगने को मजबूर हैं। क्योंकि इन्हें कोई नौकरी देने का तैयार नहीं होता।

हम जब किसी भी प्रकार का कोई आवेदन फार्म भरते हैं तो उसमें एक कॉलम जेंडर (लिंग) का भी होता है। जिसमें स्त्री, पुरुष एवं अन्य लिखा होता है। उस अन्य वाले कॉलम में तो थर्ड–जेंडर को जगह मिल गयी, लेकिन हमारे पढ़े–लिखे समाज में आज भी इनके लिए कोई जगह नहीं है।

हिंदी साहित्य में किन्नर विमर्श हालांकि अभी अपनी अपरिपक्व अवस्था में है, लेकिन इसके बावजूद भी यह साहित्य में एक अलग और विशिष्ट पहचान बना रहा है।

विमर्शों के दौर में हिंदी साहित्य के अनेक रचनाकारों ने जब इनकी दुनियां की तरफ दृष्टि डाली, इनकी चीखों की गूँज सुनी, इनकी वेदना, दुख–दर्द को महसूस किया तो अपनी रचनाओं में इनकी करुणा को उजागर करने से वे खुद को रोक नहीं पाये। इस प्रकार थर्ड जेंडर की समस्याओं की मुखर अभिव्यक्ति के लिए साहित्य में किन्नर विमर्श सामने आया।

हमारे समाज में किन्नरों को जिस हिजड़ा शब्द से संबोधित किया जाता है, यह शब्द इस वर्ग के लोगों की अपार पीढ़ा का कारण बन जाता है। हमारे पढ़े–लिखे समाज के द्वारा प्रयुक्त होने वाले इस शब्द को सुनते ही ऐसा महसूस होता है मानो मनुष्य की सारी संवेदनाएं ही खत्म हो चुकी हों। हिजड़ा शब्द के प्रयोग से किन्नरों

को मिलने वाली असहनीय पीढ़ा को काव्य के माध्यम से व्यक्त करते हुए राज किशोर राजन ने लिखा है कि–

''हिजड़ा कहते ही दुनियाँ की सारी गालियाँ,
नग्न होकर करने लगती हवा में नृत्य जिसमें नहीं होते,
शब्द, स्पर्श, रूप रस और गंध की छटांक भर
बस होता है चित्कार, हाहाकार, रूदन
कि जैसे फट गया हो धरती का कलेजा,
हिजड़ा कहते ही मनुष्य की आदिम बर्बरता,
अपनी पूरी ताकत के साथ रखती धरती पर पैर
और धरती की आँखों से ढुलक पड़ते अश्रुजल।''[2]

ऐसे ही हिंदी साहित्य के अनेक साहित्यकारों के माध्यम से अपनी कविताओं, कहानियों, उपन्यासों इत्यादि के माध्यम से थर्ड जेंडर के प्रति सहानुभूति प्रकट करते हुए उनकी वेदना को मुखर अभिव्यक्ति प्रदान की गयी है।

हम देखते हैं कि जब भी किसी के घर परिवार में बेटे का जन्म होता है तो उस घर में उत्सव मनाया जाता है। खूब बधाइयाँ दी जाती हैं। घर के सभी लोग खुशियाँ बाँटते हैं लेकिन वही बेटा यदि किन्नर पैदा हुआ तो उसका सारा दोष उसकी माँ के सिर पर मढ़ दिया जाता है। आज भी हमारा पढ़ा–लिखा समाज बेटे व बेटी के जन्म दिवस पर भेद–भाव करता नजर आता है।

बेटे के जन्म पर जहाँ उत्सव मनाया जाता है, वहीं बेटी के जन्म पर भले ही सब यह बोलते हों कि घर में लक्ष्मी आयी है किन्तु कहीं न कहीं सबके मन में यह बात जरूर रहती है कि काश बेटा हुआ होता। जब बेटी के पैदा होने पर ऐसा भेद–भाव पूर्ण व्यवहार किया जाता है तो सोचिए किन्नर के पैदा होने पर क्या स्थिति होती होगी। एक माँ के लिए तो उसकी सारी औलादें बराबर होती हैं। फिर चाहे वह बेटा हो या बेटी हो या फिर किन्नर ही क्यों न हो। किन्नर को जन्म देने वाली माँ को भी समाज अवहेलना की दृष्टि से देखता है। उसे भी बार–बार ताने सुनने को मिलते हैं। एक थर्ड जेंडर बच्चे की माँ के दुख–दर्द उसकी वेदना को सुशीला जोशी ने अपनी कविता 'एक किन्नर माँ की व्यथा' में मार्मिकता प्रदान करते हुए लिखा है :–

''घर में पैदा हुआ नपुंशक/सबके मुँह से निकली हाय
फूट–फूट कर मैया रोवे/उसकी पीर सही न जाए
दूध पिलाती मैया रोवे/पिता भी मन में बिलखा जाय
जैसे–तैसे यह तो रह ले/लोक नजर सही न जाय
हँसी उड़ावे ताना मारे/माँ की पीर सही न जाय।
मेरा तो यह जिस्म अंश है/इसकी ममता छोड़ी न जाए
कैसे भी बस जी ले बेटा/तेरी पीर कही कित जाए।''[3]

थर्ड जेंडर का जीवन अनंत त्रासदियों से भरा हुआ है। दिन–रात इन्हें न जाने कितनी यातनाएँ सहन करनी पढ़ती हैं। जैसा व्यवहार हम समाज से अपने लिए चाहते हैं, जिस मान–सम्मान की उम्मीद हम अपने लिए करते हैं, ऐसी ही उम्मीद थर्ड जेंडर लोग हमसे भी रखते हैं। वे भी चाहते हैं कि उनके साथ भी मानवीय

दृष्टि रखते हुए सम्मानपूर्ण व्यवहार किया जाये।

हिंदी के साहित्यकारों ने अपने साहित्य के माध्यम से थर्ड जेंडर के प्रति समाज का जो नजरिया है, उसे बदलने का भरसक प्रयास किया है। मानवीय दृष्टि एवं मान–सम्मान की इसी भावना को अभिव्यंजित करती हुई कात्यायानी सिंह पूजा की कविता 'हमको भी करो प्यार' की निम्न पंक्तियाँ यहां पर उद्धृत हैं–

''हमारे सूखे दिल में/पड़ी हैं हजारों दरारें
जिसमें पड़ी रहती हैं/कुछ मनचाही इच्छाएँ
काश! हमारा भी कुछ होता
घर–परिवार और कुछ मासूम बच्चे
जिनकी किलकारी से होता/गुजलार हमारा भी घर–आँगर।''[4]

हिंदी साहित्य की यदि बात करें तो पांडेय बेचन शर्मा उग्र की कहानियों व साथ ही शिव प्रसाद सिंह की कहानियों (बहाव वृत्त और बिंदा महाराज) में भी हमें थर्ड जेंडर विमर्श देखने को मिलता है।

ऐसे ही वृंदावन लाल वर्मा द्वारा रचित एकांकी 'नीलकंठ' में एक थर्ड जेंडर व्यक्ति के उस संघर्ष को उल्लेखित किया गया है जिसमें कि वह सामाजिक सतुंलन को बचाने के लिए अथक प्रयास करता है।

थर्ड जेंडर से संबंधित उपन्यासों की यदि चर्चा की जाए तो उनमें निम्न पाँच उपन्यास–नीरजा माधव द्वारा लिखित उपन्यास 'यमनदीप', प्रदीप सौरभ द्वारा लिखित उपन्यास 'तीसरी ताली' (2011), महेन्द्र भीष्म कृत 'किन्नर कथा' (2011) निर्मला भुराड़िया का उपन्यास 'गुलाम मंडी' (2014) तथा चित्रा मुद्गल द्वारा लिखित उपन्यास 'पोस्ट बॉक्स नं0 203 नाला सोपारा' (2016) प्रमुख हैं। यमनदीप उपन्यास के माध्यम से नीरजा माधव ने थर्ड जेंडर की मानसिक यातनाओं, उनकी विविध समस्याओं व उनसे संबंधित ऐतिहासिक संदर्भो को उजागर करने का एक सफल प्रयास किया है। साथ ही थर्ड जेंडर को समाज की मुख्यधारा से जोड़ने का प्रयास भी किया गया है। अपने तीसरी ताली (2011) उपन्यास के माध्यम से प्रदीप सौरभ ने थर्ड जेंडर से संबंधित ऐसे अवांछित प्रसंगों को उठाया है, जिन पर कि हमारा पढ़ा लिखा सभ्य समाज बात करना तक पसंद नहीं करता।

यह उपन्यास थर्ड जेंडर से सम्बन्धित एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है, जिसमें लेखक ने एक थर्ड जेंडर बच्चे की व्यथा एवं उसके मन के अंतर्द्वन्द्व को बखूबी चित्रित कर दिया है–''समय बीतने के साथ–साथ गौतम साहब के बेटे में लड़कियों जैसे गुण पैदा होने लगे। शारीरिक बदलाव भी प्रखर हो गए। गौतम साहब यह सब देखकर चिंतित थे। विनीत गौतम नाम रखा था उन्होंने अपने बेटे का। विनीत घर से निकलने में कतराने लगा। बाहर निकलता तो उसके साथ खेलने वाले बच्चे भी उससे किनारा कर लेते। वह अजीब मानसिकता से गुजर रहा था। कई–कई हफ्ते घर के अन्दर बन्द रहता। उसे लगता कि उसके पिता उसे जबरिया लड़का बनाने पर तुले हैं। वह अपनी बहनों की तरह ही अपने को लड़की मानता था। उसे लड़कों के कपड़े पहनने से परहेज होने लगा।''[5]

थर्ड जेंडर को लेकर लिखे गये अपने महत्वपूर्ण उपन्यास 'किन्नर कथा' में महेन्द्र भीष्म ने एक राजवंश में पैदा हुई थर्ड जेंडर लड़की के जीवन संघर्ष को अभिव्यक्ति प्रदान की है। इस उपन्यास में लेखक ने भारतीय समाज की खोखली परम्पराओं पर प्रहार करने के साथ ही साथ थर्ड जेंडर के लिए नीवन जीवन मूल्यों की आवश्यकता पर बल दिया है। लेखक ने उपन्यास के प्रमुख पात्र तारा के माध्यम से थर्ड जेंडर की उस पीढ़ा

को मार्मिक अभिव्यक्ति प्रदान की है, जिसमें कि ये लोग अपने ही घर परिवार द्वारा परित्यक्त होकर समाज में उपेक्षा व शोषण के शिकार बनकर रह जाते हैं। तारा अपने थर्ड जेंडर होने के दर्द को बयाँ करती हुई कहती है कि–''भगवान मेरे साथ अन्याय क्यों किया? मैं हिजड़ा हूँ तो इसमें मेरा क्या कसूर? मुझ निर्दोष को किस बात की सजा मिल रही है। मेरा अपना कौन है? घर–बाहर, माँ–बाप, भाई–बहन, बच्चे कोई नहीं है मेरा, जिसे मैं अपना कह सकूं। सब कुछ होते हुए भी कोई मुझसे रिश्ता नहीं रखना चाहता, कोई मुझे अपनाने को तैयार नहीं है। बचपन से आज तक बस अपने आप में ही दर्द पीते हैं। दूसरे को हंसाते आए हैं। आशीष के सिवा किसी को कुछ नहीं दिया। ईश्वर से बस एक शिकायत है आखिर क्यों उसने हमें ऐसा बनाया? क्यों हिजड़ा होने का दण्ड दिया? काश! हम भी औरो की तरह स्त्री या पुरुष होते। हिजड़ा होना इतनी बड़ी सजा है यह कोई हिजड़ा ही समझ सकता है दूसरा कोई भी नहीं।''[6]

ऐसे ही देह व्यापार एवं किन्नरों की समस्याओं पर आधारित उपन्यास 'गुलाम मंडी' निर्मला भुराडिया का नवीनतम उपन्यास है। जो इंसान को इंसान मानने की वकालत करता है। निर्मला भुराडिया हिंदी की सुप्रसिद्ध संवेदनशील लेखिका हैं जो गहनतम संवेदना के स्तर पर गुलाम के दंश को बड़ी कुशलता के साथ अभिव्यक्त करते हुए लिखती हैं कि–''बचपन से ही देखती आई हूँ उन लोगों के प्रति समाज के तिरस्कार को जिन्हें प्रकृति ने तयशुदा जेंडर नहीं दिया। इसमें इनका क्या दोष? ये हमेशा त्यागे गए, दुरदुराए गये, सताए गये और अपमान के भागी बने? इन्हें हिजड़ा, किन्नर, बृहन्नला आदि कई नामों से पुकारा जाता है। मगर हमेशा तिरस्कार के साथ ही क्यों? आखिर ये बाकी इन्सानों की तरह मानवीय गरिमा के हकदार क्यों नहीं?[7]

इस प्रकार इस उपन्यास में लेखिका ने हर उस सच को उघाड़कर सबसे सामने रख दिया, जिसे दो चेहरों वाला सभ्य समाज अपनी मायावी दुनिया से हमेश अलग रखने की कोशिश करता है।

'पोस्ट बॉक्स नंबर 203 नाला सोपारा' उपन्यास चित्रा मुद्गल कृत मुंबई के एक खाते–पीते परिवार के बच्चे विनोद की कहानी है। यह उपन्यास किन्नर समाज की दशा व दिशा से समाज को परिचित कराता है। उपन्यास में थर्ड जेंडर के जीवन से संबंधित व्यक्तिगत व सामाजिक सरोकारों को उघाड़ते हुए लेखिका कहती है कि–''लंबे समय से मेरे मन में पीड़ा थी, एक छटपटाहट थी, आखिर क्यों हमारे इस अहम हिस्से को अलग–थलग किया जा रहा है। हमारे बच्चों को क्यों हमसे दूर किया जा रहा है। आजादी से लेकर अभी तक कई रूढ़ियां टूटी लेकिन किन्नरों की जिंदगी में कोई बदलाव नहीं आया।''[8]

यह उपन्यास हमें गम्भीरता से यह प्रश्न सोचने के लिए विवश कर देता है कि आखिर क्यों प्राकृतिक भूल के शिकार व्यक्ति हो हमारा समाज बहिष्कृत कर देता है?

इस प्रकार एक थर्ड जेंडर को जन्म से लेकर मृत्यु तक अनगिनत सामाजिक यातनाओं को झेलना पड़ता है। मृत्यु के पश्चात भी इनके शव को जूते–चप्पलों से पीटा जाता है। यह कहते हुए कि अगले जन्म में फिर से थर्ड जेंडर पैदा मत होना। जब तक थर्ड जेंडर के प्रति हमारे समाज की सोच नहीं बदलेगी जब तक ये लोग अपने अस्तित्व, अपनी पहचान को समाज में हांशिए पर ही पाएंगे। जिस प्रकार शुभ कार्यों के अवसर पर हम इनके मंगल कामना की आश करते हैं, ठीक ऐसे ही एक इंसानियत के नाते हमारे समाज में रहकर इनके लिए कुछे ऐसे कार्य करें कि इनका भी कुछ मंगल हो सके।

हांलाकि वर्तमान में थर्ड जेंडर समुदाय की सामाजिक एवं संवैधानिक स्थितियों में काफी परिवर्तन देखने

को मिल रहा है। लेकिन इसके बावजूद भी हम सभी का उत्तरदायित्व बनता है कि हम अपने पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर इनके साथ प्रेम व उदारतापूर्ण व्यवहार करें। हमारा यह किन्नर विमर्श भी तभी सार्थक होगा जब हम थर्ड जेंडर समुदाय के प्रति एक सकारात्मक दृष्टिकोण अपनायेंगे।

सन्दर्भ :–

1. हिंदी साहित्य में थर्ड जेंडर विमर्श, सं0 डॉ. पायल लिल्हारे एवं डॉ श्याम मोहन पटेल; पृ0–172
2. अस्तित्व और पहचान, डॉ0 विजेन्द्र प्रताप सिंह; पृ0–13
3. वही; पृ0–33
4. वही; वही; पृं0–37
5. हिंदी साहित्य में थर्ड जेंडर विमर्श, सं0 डॉ पायल लिल्हारे एवं डॉ0 श्याम मोहन पटेल; पृ0–175
6. वही; पृ0–175
7. गुलाम मंडी, निर्मला भुराडिया; पृ0–07
8. हिंदी साहित्य में थर्ड जेंडर विमर्श, सं0 डॉ पायल लिल्हारे एवं डॉ0 श्याम मोहन पटेल; पृ0–138

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 176-179

ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा

डॉ. अलका गुप्ता
कला निष्णात, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली–110007

परिचय :-

युग युगान्तर से हमारी पृथ्वी पर दो प्रायोजन निरंतर चलते आ रहे हैं। पहला है परिवर्तन और दूसरा है प्रगति। परिवर्तन केवल वातावरण और अन्य बाहरी कारकों के कारण होता है परन्तु प्रगति सदैव मानव की इच्छाशक्ति, निश्चय और प्रयोगात्मकता के विशेष गुणों के आधार पर ही संभव हो पाती है। प्रगति पथ पर अग्रसर मानव पुरा–पाषाण युग से चलकर आधुनिक युग में आ पहुँचा है और द्रुतवेग से आगे बढ़ा चला जा रहा है। व्यक्तिगत जीवन, व्यापार, यात्रा, सूचना संप्रेषण और तकनीकी उन्नति के आधार पर सुगमता की राह वृहदतम हो चली है। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि इसी साधन सुलभ सुगमता में एक विशेष अध्याय जुड़ चुका है जिसके कारण आज पूरी शिक्षा व्यवस्था बहुत बड़े परिवर्तन को लगभग पूर्ण स्वीकृति दे चुकी है। यह परिवर्तन है शिक्षा क्षेत्र में ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा के अभूतपूर्व प्रचार एवं प्रसार का। प्रस्तुत लेख ऑनलाइन एवं डिजिटल माध्यम के शिक्षा क्षेत्र में सम्मिलित होने, उसके प्रभाव, प्रभुत्व, संभावनाएं और कालोत्तर में आशंकित दुष्प्रभावों को व्यक्त करने का लघु प्रयास है।

सार्वजनिक सुप्तावस्था :-

यदि हम शिक्षा क्षेत्र में ऑनलाइन एवं डिजिटल सुविधा की बात करें तो इसमें बहुत समय तक लगभग सार्वजनिक सुप्तावस्था की स्थिति बनी रही जिसके कई कारण हमें स्पष्ट दिखाई देते हैं। पहला कारण संशय का रहा जिसमें किसी भी नये प्रयोग को किसी भी क्षेत्र मे सहर्ष स्वीकृति साधारणतः मान्य नहीं होती। दूसरा कारण यह है कि स्थितिवश स्वाभाविक आवश्यकता का कभी पूर्ण आभास हुआ ही नहीं था क्योंकि शिक्षा की नियमितता तो धाराप्रवाह ही चलती चली आ रही थी। तीसरा कारण साधन क्षमता और दक्षता का अभाव और चौथा तथा सबसे महत्वपूर्ण कारण यह रहा कि शिक्षा क्षेत्र ने कभी लम्बे समय तक किसी अप्रत्याशित संकट का सामना किया ही नहीं था। यद्यपि कुछ उच्चस्तरीय निजी शिक्षण संस्थानों और व्यवसायिक वातावरण में ऑनलाइन एवं डिजिटल माध्यम का प्रयोग व प्रसार काफी समय से आंतरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया जा रहा था और यह सर्वविदित भी था। किन्तु व्यापकता अभी भी सार्वजनिक सुप्तावस्था में ही थी यह कहना गलत नहीं होगा।

शैक्षिक पूर्णोदय :-

वर्ष 2020 में कोविड–19 नें समस्त विश्व में देखते ही देखते त्राहि मचा दी जिसने लगभग 02 वर्ष से

अधिक समय तक मानव जाति की कठिन परीक्षा ली। लाखों लोगों को अपने जीवन से हाथ धोना पड़ा। समस्त गतिविधियां इस तरह से थम सी गईं जैसे वर्षों तक कोई परिवर्तन नहीं आने वाला और अब तो सबको बस सीमित रह कर ही जीवन यापन करना पड़ेगा। यातायात के माध्यम, कल–कारखाने सरकारी और निजी दफ्तर, स्कूल–कॉलेज सब बन्द कर दिये गये क्योंकि आवागमन पर पूर्ण प्रतिबन्ध लग चुका था और सामूहिक कार्यों की भी छूट नहीं रही। ऐसे काल में ऑनलाइन और डिजिटल माध्यम का पूर्ण उदय हुआ जिसने लोगों के लिए संजीवनी बूटी सा काम किया। अब घर बैठे ही ऑनलाइन माध्यम से कारोबार होने लगा तथा दफ्तरी काम की परिभाषा भी ''वर्क फ्रॉम हॉम'' में परिवर्तित हो गई। स्कूल कॉलेज और उच्चस्तर के शिक्षण संस्थानों ने भी इसका तुरंत संज्ञान लिया और देखते ही देखते ऑनलाइन क्लास, ऑनलाइन परीक्षा तो जैसे छात्र जीवन का अटूट हिस्सा ही बन गई। जीवन की गाड़ी फिर से वेगमान हो गई और शिक्षा भी ऑनलाइन और डिजिटल माध्यम की मुग्धता में बह चली। नित नये प्रयोग होने लगे और सभी संशयों पर जैसे विराम लग गया। अध्यापक और छात्र वर्ग ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा माध्यम से सीखने तथा सिखाने की स्पर्धा में सहर्ष प्रतिभागी बनते चले गये क्योंकि अब जीवन सबके लिए आसान हो चला था। कुल मिलाकर कोविड–19 ने ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा के पूर्णोदय का मार्ग प्रशस्त कर ही दिया।

आधिपत्य स्थापना :–

कोविड–19 के कारण शैक्षिक वातावरण में हुए ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा माध्यम के समावेश का दूरगामी प्रभाव स्पष्ट दिखाई देने लगा है। कोरोना काल तो लगभग बीत गया है परन्तु ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा माध्यम का प्रभाव दिन प्रतिदिन बढ़ता ही चला जा रहा है। स्थिति यह हो चली है कि अब पी0पी0टी0, विडियों प्रेजेंटेशन, ऑनलाइन असेम्बली, ई–लर्निंग, माइक्रोसॉफ्ट जूम एवं गूगल क्लास तथा मीटिंग, गूगल फार्म, ऑनलाइन क्विज तथा प्रतियोगिता परीक्षा आदि शिक्षा के प्रभावी माध्यम बन गये है और इसके बिना शिक्षा का विचार जैसे अधूरा सा लगने लगा है। ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा से तो जैसे ज्ञान के अनेकानेक स्त्रोत खुल गये हैं और अब शिक्षक तथा विद्यार्थी परस्पर आश्रित नही दिखते। गाँव, शहर, राष्ट्र और विश्व स्तर पर अब ज्ञान का भरपूर आदान प्रदान होने लगा है। कुल मिलाकर ऑनलाइन एवं डिजिटल माध्यम ने शिक्षा क्षेत्र में कभी ना ढीली होने वाली पकड़ बना ली है और सही शब्दों में कहें तो आधुनिक युग की शिक्षा प्रणाली पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया है।

अभूतपूर्व परिवर्तन क्षमता :–

इसमें कोई दो राय नही कि ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा माध्यम में अभूतपूर्व परिवर्तन क्षमता है। अब छात्रों को अपने संशय दूर करने के लिए अगले दिन और विषय विशेष के अध्यापक की राह देखने की आवश्यकता नही रही है। जहाँ संशय हो वही गूगल समाधान प्राप्ति संभव है और वो भी तुरंत। ऑनलाइन एवं डिजिटल माध्यम से छात्र कहीं से भी अपने सहपाठियों और शिक्षक से संपर्क कर समाधान प्राप्त कर सकते है। अस्वस्थ होने की स्थिति में या किसी आवश्यकतावश यदि छात्र स्वयं प्रस्तुत नही हो सकते तो भी परीक्षा में ऑनलाइन माध्यम से प्रतिभागी बन सकते है। राजधानी दिल्ली का वर्चुअल शिक्षा स्कूल जिसे कोविड महाकाल के समय शुरू किया गया था इस प्रकार की सुविधा का जीवंत उदाहरण है। आजकल तो कृत्रिम बुद्धि वार्ताकार यानि AI Chatbot भी खूब प्रचलन में है जो आपसे बात कर सकता है और आपकी सभी व्याहारिक और शैक्षिक

समस्याओं की समीक्षा कर चुटकियों में समाधान दे देता है। चित्र–मानचित्र वैज्ञानिक रेखाचित्र परिदृश्य आदि अब महीनो और दिनों में नहीं बल्कि मिनटों में तैयार किये जा सकते हैं। बड़ी से बड़ी गणना पलक झपकते ही हो जाती है क्योंकि डिजिटल माध्यम में सभी कुछ पूर्व नियोजित है और सर्व सुलभ है। इन्ही अभूतपूर्व परिवर्तन क्षमताओं के कारण ही ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा माध्यम अपनी पकड़ और भी मजबूत करता जा रहा है।

असीमित सम्भावनाएँ :–

वह समय चला गया जब विद्यार्थी खींची खिंचाई लकीरों पर चलकर अपना भविष्य निर्धारण करते थे। आज के विद्यार्थी सिर्फ डॉक्टर, इंजीनियर, शिक्षक, अधिकारी या सरकारी नौकर नही बनना चाहते बल्कि सब नए–नए कार्यक्षेत्रों में अपनी विशिष्ट पहचान बनाने की कवायद में जुट चुके है। अंतरिक्ष विज्ञान खगोलशास्त्र कोशिका अनुसन्धान रोबोटिक्स कृत्रिम बुद्धिमत्ता सूक्ष्म तकनीकी वेब डिजाइनिंग एनीमेशन डाटा एनालिटिक्स जैसे जटिल विषय अब हर छात्र की पहुँच में हैं और सब अपनी रूचि एवं दक्षता के अनुसार अपने भविष्य का निर्धारण कर रहे हैं। पढाई के साथ–साथ कमाई की भावना के चलते आज छात्र अपने यूट्यूब चौनल और ब्लॉग चला रहे हैं और अपनी महत्वकांक्षाओं की पुर्ति हेतु हर संभव प्रयास कर रहे हैं। ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा माध्यम ने हर विद्यार्थी के लिए संभावनाओं का ऐसा पिटारा खोल दिया है कि हर कार्यक्षेत्र में संभावनाओं के असीमित द्वार खुल गए है जिसका कदापि पहले बहुत ही कम ज्ञान होता था।

मौलिक शिक्षा का हनन :–

ऑनलाइन शिक्षा में जहाँ ज्ञान के आदान प्रदान की सुविधा चहुँ और सुलभ बना दी है वही मौलिक शिक्षा पर इसने कड़ा प्रहार भी किया है। आज का छात्र अब स्वय सिद्व होने की बजाए ऑनलाइन सिद्व होना कहीं बेहतर समझने लगा है। प्रतिस्पर्धा एक कारण हो सकता है परन्तु प्रतिस्पर्धा तो शिक्षा की कभी से मूल भावना रही है पर अब फर्क ये हो चला है कि छात्र आश्रित प्रतिस्पर्धा का धनी बन गया है और व्यक्तिगत प्रतिस्पर्धी गुणों की महत्ता को भूलता जा रहा है। वह बौद्धिक क्षमता ह्रास का शिकार होता जा रहा है। अब छात्र स्वयं से हल नही ढूँढता बल्कि यह काम उसके लिए ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा माध्यम करने लगा है। अत्यधिक ऑनलाइन निर्भरता के कारण गणना करना पहाड़े याद रखना अपने हाथ से नोट्स बनाना बारम्बार लिखकर अभ्यास करना जैसी मौलिक और कारगर शिक्षा पद्धति अब छात्रों को नहीं लुभाती अब तो सब रेडीमेड हैए ऑनलाइन है और यही सही है के वहम में आज के छात्र रूपी पौधे पनप तो रहे हैं पर गमलों की प्रतिबन्धिता के वातावरण में जड़ों का ज़मीन से जुड़ाव धीरे धीरे समाप्त होता जा रहा है। शिक्षा में छात्र की आत्मसंघर्ष क्षमता क्षीण हो चली है जिससे शिक्षा की मौलिकता आज क्षुब्धता के अश्रु बहाती दृष्टिगोचर हो रही है।

व्यावहारिक बुद्धि का पतन :–

यदि सब कुछ बिना श्रम किये प्राप्त होने लगे तो व्यवहारिक बुद्धि का पतन अवश्यम्भावी है। आजकल ऐसा ही कुछ हमारी शिक्षा व्यवस्था में भी देखने को मिल रहा है। अब तो ऐसा प्रतीत होने लगा है जैसे छात्रों को शिक्षक की कोई विशेष आवश्यकता नहीं रही क्योंकि सब कुछ तो ऑनलाइन उपलब्ध है। शैक्षिक व्यक्तिगत संपर्क सिकुड़ते जा रहे हैं और गुरू शिष्य का संम्बंध गौण होने लगा है। ज्ञानार्जन मार्ग पर भी छात्र स्वयं में ही खोया रहने लगा है क्योंकि उसकी शैक्षिक आवश्यकताएँ तो ऑनलाइन ही पूरी हो जाती हैं। आज के छात्र को मित्रवत व्यवहार, बडे–छोटे का भेद, आदर सम्मान सब मिथ्या प्रतीत होने लगे हैं। छात्रों का एक वर्ग ऐसा

भी है जो ऑनलाइन माध्यम से अल्प समय में अप्रत्याशित प्रसिद्धि की चाह में या तो स्वयं नशे और कुरीतियों के मकड़जाल में रोज़ फंस रहे हैं या फिर अति महत्वाकांक्षा के चलते साधारण तथा अबोध छात्रों को जानबूझकर इस और धकेल कर उनका भविष्य ख़राब कर रहे हैं। संस्कारविहीनता और सामान्य सामाजिक व्यव्हार में दुराचारी मानसिकता को भी ऑनलाइन माध्यमों ने खूब बढ़ावा दिया है जिसके दूरगामी परिणाम अत्यंत घातक हो सकते हैं। अतः कहा जा सकता है कि व्यवहारिक बुद्धि का पतन तो हो ही रहा है।

व्यक्तिगत निर्भरता का डरावना सत्य :-

ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा माध्यम पर आज के छात्र की व्यक्तिगत निर्भरता दिनोंदिन बढती ही चली जा रही है। आज का छात्र एक बार को बिना परिवार, बिना मित्र या सहपाठी, बिना शिक्षक के मार्गदर्शन के तो रह सकता है पर यदि कुछ सीमित समय के लिए भी उसका ऑनलाइन माध्यम किसी कारणवश यदि काम नही करता तो उसकी हालत मरूस्थल में पानी को तरसते किसी दीनहीन पथिक जैसी हो जाती है। वह मेले में खोऐ बालक की तरह व्याकुल और अधीर हो उठता है जो अपने परिजनों को फिर से पाकर ही चौन की सांस ले पाता है। ऑनलाइन माध्यम पर व्यक्तिगत निर्भरता की यह स्थिति किसी भी छात्र के लिए बड़ी दयनीय हो सकती है क्योंकि स्वयं का सामर्थ्य भूल जाने वाला योद्धा या तो अकारण खेत रहता है या फिर पीठ दिखाकर भाग खड़ा होता है। वह अपने बल पर कभी युद्ध लड़ना ही नहीं चाहता वह तो अग्रिम पंक्ति के पीछे चलकर ही अपनी वीरता का लोहा मनवाना चाहता है। ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा माध्यमों पर व्यक्तिगत निर्भरता कुछ ऐसा ही खेल, खेल रही है आज के छात्र के साथ। अत्यधिक ऑनलाइन निर्भरता के कारण अधिकतम छात्रों का सामान्य ज्ञान निम्नतम स्तर पर जाता प्रतीत हो रहा है। वे दिखावटी प्रतिष्ठा के भ्रम में पड़कर खानपान वेशभूषा आचार विचार सभी में पश्चिम का बनावटी अंधानुकरण कर रहे हैं। उनकी सहनशक्ति दिनप्रतिदिन क्षीण होती जा रही हैए वे एकाकी हो रहे हैं असामान्य होते जा रहे हैं और छात्रों में अस्वाभाविक व्यव्हार मुखर होता जा रहा है जो भविष्य के लिए अच्छा संकेत तो कतई नहीं कहा जा सकता।

आशंकित भविष्य एवं सारांश :-

अपार संभावनाओं से लबालब भरे ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा माध्यम में अनेक संभावनाएं है, उन्नति प्रगति के प्रचुर अवसर हैं परन्तु अन्ध आसक्ति का हलाहल भी भरा पड़ा है इसमें। आज के युग का शिक्षक और छात्र यदि इस अंध आसक्ति के हलाहल को पी गया तो भविष्य केवल कलपुर्जों और उनके निर्देशों पर मानव जाति को नर्तन कराने को तैयार खड़ा है और यदि शिक्षक तथा छात्र परस्पर निर्भरता की मौलिकता और व्यक्तिगत सामर्थ्य को प्राथमिकता देते रहेंगे तो यही ऑनलाइन एवं डिजिटल शिक्षा माध्यम ज्ञान पोषण का कार्य निर्बाध रूप से और वांछित वेग से करता रहेगा तथा शिक्षा क्षेत्र की उन्नति और प्रगति में अप्रत्याशित सहयोग देता रहेगा।

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 180-187

India's Special Economic Zones (SEZs) Problems and Prospects

MOTIRAM DAS

Assistant Professor, Department of Commerce, JDSG College Bokakhat.

ABSTRACT :

India has adopted new economic policy of liberalization, privatization and globalization which is to achieve economic growth in every sector of economy and thereby to enhance the rate of growth and to make the Indian economy globally more competitive. Hence, India has announced the Special Economic Zones (SEZs) policy in 2000. It aims to attract large foreign investment in India. This policy intended to make SEZs an engine for economic growth supported by quality infrastructure complemented by attractive fiscal package, both at the centre and state level, with the minimum possible regulation. On the basis of careful observation of the positive effects of SEZs in China, the NDA Government took initiative in its 1997 – 2000 EXIM policy to encourage all the state Government to started SEZs in their respective states.

This study is an attempt to throw light on progress and performance of SEZs in India and their problems and challenges. SEZs specially delineated duty free enclave and shall be deemed to be foreign territory for the purpose of trade operations and duties for economic development of the country.

Key words : Progress of SEZs, export promotion, rehabilitation of SEZs, implications, employment opportunities, development, and challenges.

Introduction :-

India has adopted new economic policy of liberation, Privatization and Globalization (LPG) since July 1991 in order to achieve economic growth in every sector of economy and thereby to enhance the rate of growth and to make the Indian economy globally more competitive. For the matter, several reform measures have been adopted in India. Development of foreign trade is one of measures adopted as a part of LPG. From this point of view, it requires export oriented industrial units producing export quality products. Considering the need to promote export from the country as

well as to enhance foreign investment and to make Indian manufacturers competitive globally, the Government of India had announced the introduction of Special Economic Zones (SEZs) policy in April 2000. On the basis of careful observation of the positive effects of SEZs in China, the NDA Government took initiative in its 2002 EXIM policy to encourage all the state Governments to start SEZs in their respective states. The UPA Government has provided the concrete shape to SEZ by passing the SEZ Act, in May 2005 and it was approved by the President of India on June 23, 2005. The Act came into effect from February 16, 2006.

Objectives :-

1. To examine the growth of special economic zones and the export promotion in India.
2. To discuss the socio- economic implications of the special economic zones in India.
3. To examine the issues related to the special economic zones in India.

Review of Literature :-

Asit Gope, Arindam Ghosh (2009) they suggest SEZs schemes should be made combining and highlighting these positive factors and finally the central SEZ legislation and the state level SEZ policy must be accompanied by the labor reforms Gokhan Akinci & James Crittle (2008) study analyzes the major development trends in terms of zone configuration, ownership, development, management, and regulation approaches, and identifies good practices. It evaluates the overall economic performance of zones in light of these changes, and assesses the relationship of zines and economic reform efforts.

Sivaramakrishnan (2009) reflecting on enclave approach inherent in SEZ policy says, factories and office buildings can be gated with control access and exit but communities cannot be. In India created numerous new industrial town which were best with this problem, unresolved to date, yet SEZs go back to the same concept of a privately built and managed company township.

Arradhana Agarwal (2009) find that the SEZs helped India in exporting certain new products. However, these could not induce technology- based dynamism. Patanker (2009) presented his study of struggle of people in Alibag, Raigad District, Maharastra over the last two years. He urgues that the scale of planned power projects substantially exceed the energy needs of the entire state of Maharastra in the near future, and further that these projects will spell an ecological disaster.

Join (2009) pointed to contradictions between basic tenets of a democratic society and SEZs and further suggested that provisions of SEZ Act run counter to the basic character of Indian Constitution. Karima Omar and William A. Stoever (2008) point out the critical aspects of a successful export processing zones namely the nature of backward linkages and gradual integration in the rest of the host economy. They argue the successful export processing zones can be a catalyst for structural transformation of the wider economy.

Jean- Pierre C., Mireille R. and Francois R. (2007) the study shows that success of Export Processing Zones in Madagascar is, with the exception of Mauritius, an isolated and unrecognized case in Africa. Aradhana Aggarwal (2007) exams the impact of special economic zones on human development and poverty reduction in India. The study find that modality differ significantly according to the characteristic of the special economic zone and labor intensive , skill intensive and technology intensive co-exist in Indian zones.

Methodology :-

This study is both descriptive and analytical in nature. Important inputs for the study were received from different books, journals, research papers, news papers and various websites. Personal experience and knowledge in the field also helped to make meaningful interpretation.

Analysis of the Study :-

Today, we have 15 SEZs operating in our country each with minimum of 200 acres specially earmarked for the purpose. Exports from SEZs were worth Rs. 34,615 crores in the year 2009-10. The Government of India has permitted starting of SEZ in large scale so that regional imbalance is corrected. Thus, there are no restrictions on any number. Consequently, a large number of industrial houses are approaching the Government for establishing SEZs. This is due to the extraordinary privileges enjoyed by SEZs they are :-

1. Units in SEZs will not have to pay income tax on their profits for the first 5 years and 50 percent of tax for 2 years thereafter.
2. For SEZs developers, all raw materials like cement, steel, etc. shall be exempt from any tax/ duty. All imports for developing and improving SEZs are exempt from any custom duty.
3. Sector specified SEZs will be allowed to have additional operations including Hotels, Schools, and Technical Institutions. A multiproduct SEZs will also be allowed to have ports and airports.
4. SEZs would be exempt from the applicability of labor. So labor commissioner will have no jurisdiction even to implement safety and environmental norms in the units.

Performance of SEZs : Tax Benefits

Government of India, in its annual budget has been extending number of tax concessions foe units coming under SEZs. In this connection the study made by National Institute of Public Finance and Policy (NIPFP) have revealed that and expressed doubts with regard to benefits that have come from this area. This institute estimated a total loss around Rs. 1, 00,000 crores for the year 2006-10. The Finance Ministry estimated total loss tax revenue worth Rs. 1, 02,621 creres for the same period. Further, SMEs in India are performing excellently both in manufacturing and export area when compared with SEZs. But they have not been extended with such tax benefits which are enjoyed by SEZs.

Export Performance :

Table 1: Export from SEZs

Year	Exports Value in Crores	Billion USD
2005-06	22,840	5.08
2006-07	34,615	7.69
2007-08	66,638	14.81
2008-09	99,689	21.71
2009-10	2,20,711	46.54
2010-11	3,15,868	69.30
2011-12	3,64,478	76.01
2012-13	4,76,159	87.45
2013-14	4,94,077	81.67
2014-15	4,63,770	75.84
2015-16	4,67,337	71.08
2016-17	5,23,637	78.07
2017-18	2,66,773	41.44

Source : www.sez.nic in

India's SEZs and Foreign Countries SEZs :-

The SEZ concept proved a success in China and Poland. In China over 20 percent of Foreign Direct Investment (FDI) flows into SEZ and generated 10 percent of exports. The success of SEZs in China stemmed from their foreign- invest- friendly in nature. China provided the whole package that ensures success of SEZs. These include unique location, large size, attractive incentive package, liberal customs procedures, flexible labor laws, strong domestic market, and allowing local governments to administer the SEZs.

Chinas approach has been gradual; it has so far set up only five SEZs. But India simply seemed to approved left and right, raising skepticism over the real intent behind setting up these zones. China established the SEZs at strategic locations, that is, close to ports or major industrial locations. But in India, SEZs have been approved across the length and breadth of the country. In China, all the five SEZs were developed by the government. In India, only nine SEZs have been developed by the government. None of the 234 SEZs that have formal approval is to be developed by the government.

Implications of SEZ:

A SEZ unit has both advantages as well as disadvantages. Today SEZ policy is the more

controversial and hot policy in the economy. While on one hand SEZ is presented as a driver of future growth of the Indian economy on the other SEZ concept looked at with suspicion and contempt by some sections of political spectrum as medium of exploitation of the farming community.

Table 2: Exports from the functioning SEZs during the Last Five Years

Year	Value (Rs crores)	Growth Rate
2013-14	4,94,077	81.67
2014-15	4,63,770	75.84
2015-16	4,67,337	71.08
2016-17	5,23,637	78.67
2017-18	2,66,773	41.44

Advantages :-

SEZ benefited the economy in the form of investment, employment, exports and infrastructural developments additionally generated. This profit is created by multiplier effect of investment. By December 2012, 100,000 crores of investment including FDI of US dollar 5-6 billion is expected. Similarly 500,000 direct jobs are expected to be created. SEZ has increased the export in the economy. Increase in exports will increase the foreign exchange earnings in the economy.

Investment and Employment Opportunities :-

At present 1819 units are in operation in the SEZs. Those SEZs established prior to the act coming into the force there are 1122 units providing directs employment to over 1.93 lakh persons among which, about 37 percent of whom are women. Private invest by entrepreneurs in these SEZs established prior to the SEZ Act is of the order of over Rs. 7860 crore. The SEZs scheme has received tremendous response amongst the investor both in India and abroad. The expected position by December 2011 will be Investment 259159 employment 1743530.

The creation of additional employment and the flow of investment are evident of positive response of SEZ in the country. The lists of developers who setup SEZs in India contain this tremendous response the following are some of them : Nokia SEZ in Tamil Nadu, Qurak city SEZ Chandigarh, Mahendra world City in Tamil Nadu for development of SEZs.

Development of Backward States :-

Almost SEZ policy will promote infrastructure development and industrialization in state such as UP, Orissa, West Bengal. The selected state wise number and area of SEZ are as follows: growth of labor intensive manufacturing industry by SEZs : Out of the 341 formal approval given till date, over 120 approvals are for sector specific and multi-product SEZs for manufacture of textiles apparels, leader footwear, automobile components, engineering etc. which would involve labor intensive

technology.

In this way 140 SEZ projected 17, 43,530 additional jobs and are going to produce employment for large number of unemployed rural youth. Nokia and Flextronics electronics hardware SEZs in Sri Perumbudur are already providing employment to 4500 and 3072 persons, majority of are women. Hyderabad Gems SEZ for jewellery manufacturing in Hyderabad has employed 1500 girls' majority of who are from landless families, after providing training to them. They have projected direct employment for 35,000 persons.

Table 3: Development of Backward States

SL No.	States	No. of SEZ
1	Andhra Pradesh	45
2	Chandigarh	2
3	Delhi	1
4	Goa	4
5	Gujarat	16
6	Haryana	19
7	Jharkhand	1
8	Kerala	10
9	Karnataka	29
10	Maharashtra	48
11	Madhya Pradesh	4
12	Orissa	5
13	Punjab	4
14	Pondicherry	1
15	Rajasthan	3
16	Tamil Nadu	25
17	Uttaranchal	3
18	Uttar Pradesh	8
19	West Bengal	7
	India	237

Challenges in SEZ Development :-

SEZs are projected as catalysts of economic growth and development. But development of SEZs faces large number of challenges. Some of them are as follows :

1. **Availability of Land :** For starting a SEZ an area of land required is minimum 1000

hectares or more depending upon the size of respective SEZ. Therefore, it is a problem for development of SEZ. According to one estimate, total land for SEZs required is 14000 hectares. People on a large scale would be displaced when such large land is acquired by the government at throw away price for handing over the same to industrialists. Hence, there is a strong resistance to acquisition of land for SEZs.

2. Location : The industrialists interested in setting up units in SEZs are insistent for location of SEZ near a port. There has already been congestion of industries in the areas having port or lack of availability of due to congestion of population. Development of SEZs in such areas is also against the industrial dispersal policies and environment protection law.

3. Rehabilitation of Displaced : Establishment of a SEZ displaces a large number of people due to acquisition of land the displacement creates social unrest. Also, political game is played for these situations.

4. Infrastructure constraints : Proper internal and external infrastructure is required for SEZ operations. There are almost all states in India facing the constraints.

5. Financial Challenges : Various incentives and facilities are given to SEZ Units. There has been controversy between the commerce and Finance Ministry of Government of India over exemption of SEZs. There would be a revenue loss to the government on account of SEZs. One estimate of the cumulative revenue loss due to the exemption of the SEZs so far finalized places the figure at Rs. 1, 75,000 crore during the next few years. The loss would be more SEZs are approved.

North-East India and SEZs :

At present, SEZs activities have been expanded to other states of India. But in case of North-East India (NER), it has not expanded. Only SEZ in NER, Agro and Food Processing Special Economic Zone (AFSEZ) established at Ganesh Nagar under Dimapur District in Nagaland is the first and only SEZ in NER of India. Nagaland Industrial Development Corporation Limited (NIDCL) has identified Dimapur as the location for the SEZ.

AFSEZ seeks to capitalize on the abundant Agro- Horticulture Resources of the NER and address the problems of post- harvest wastage and thereby provide a boost to the horticulture and agriculture activities of the NER states with a ready outlet for their produce.

Conclusion :

The main purpose to promote SEZs in India is to speed up economic growth. The only hope behind to encourage SEZs are to increase production, investment, opportunity, in the economy. It will happen if SEZs are set up in the backward areas. SEZs will be welcome by all, if these units are setup in the barren land of back ward districts. Tax concession and incentives must be providing for

the backward state not for that state which is already developed. There should be transparency in the regard of use of land and price of land. Due to land acquisition, people who become unemployed must be given employment opportunities in SEZs or elsewhere. In China, SEZs are Government institutions; hence, state has been able to get better fruitful results. On the other hand, situation is different in India, as most of the industries are established in SEZs are in private sector. Thus the anticipated benefits are not accruing to the state.

References :-

1. Dutt, Ruddar (2006). "Special Economic Zones", Mainstream, November 10-16.
2. Ministry of Commerce and Industry, Department of Commerce, Gol.
3. Planning Commission: An approach to the Eleventh Five Year Plan, Dec., 2006.
4. Sarma E. A. S., (2007)> Help the Rich, Hurt the Poor, Case of Special Economic Zones, Economic and Political Weekly, May 26-june 1, Vol. XLll, No. 21.
5. Sunny Verma and Arun S. (2008), Subsidiaries Help SEZ promoters Beat Land Caps, The Financial Express, Sept. 3, 2008, p. 9.
6. http://sezindia.nic.in
7. Survey of Indian Industries. The Hindu Publication 2007.
8. Aradhna Aggarwal (2006): "Special Economic Zones, Revisiting the policy Debate", Economic and Political Weekly, Vol. XLI, Nos. 43 and 44. Nov. 4-10.
9. And Impact of SEZs on Employment, Human Development and Poverty, ICRIER working paper 194.

संगम Impact Factor : 4.553
Website : www.ginajournal.com
ISSN : 2321-8037
SANGAM
विशेषज्ञ समीक्षित पत्रिका A Peer Reviewed International Refereed Journal
गीना देवी शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित साहित्य, शिक्षा, संस्कृति एवं शोध को समर्पित मासिक
Vol. 11, Issue 3-4
पृष्ठ : 188-190

समावेशी शिक्षा का महत्व

डॉ. गोविन्द सोनी
6–एच, 30 जवाहर नगर, श्रीगंगानगर, राजस्थान।

गुरूकुल शिक्षा प्रणाली से लेकर वर्तमान की शिक्षा प्रद्धति में विशेष आवश्यकता वाले अध्ययनरत बालक–बालिकाओं का अनुपात सदैव रहा है। विशेष आवश्यकता वाले बालक–बालिकाओं की शिक्षा एवं उनके विकास के संबंध में समय–समय पर अनेक उपागमों, तौर–तरीकों एवं व्यवस्थाओं में बदलाव किया जाता रहा है। प्रारम्भ में विशेष आवश्यकता वाले बालक–बालिकाओं की शिक्षा व्यक्तिगत रूप से प्रदान की जाती थी। केवल अभिभावक ही व्यक्तिगत रूप से ऐसे विद्यार्थियों की शिक्षा पर ध्यान देते थे। धीरे–धीरे समाज में बदलाव के साथ विशेष आवश्यकता वाले बालक–बालिकाओं की शिक्षा पर दानदाताओं एवं समाज सेवी संस्थाओं द्वारा ध्यान दिया जाने लगा।

समावेशी शिक्षा का अर्थ एवं परिभाषाएँ :– समावेशित शिक्षा से तात्पर्य विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों को सामान्य विद्यार्थियों के साथ सामान्य विद्यालय में एक छत के नीचे शिक्षण एवं प्रशिक्षण की व्यवस्था करना है। अतः समावेशित शिक्षा के अन्तर्गत सामान्य विद्यालयों को समावेशित विद्यालयों के नाम से जाना जाता है। इनमें क्षेत्र विशेष के विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थी उस क्षेत्र के सामान्य विद्यालयों में नामांकन करवाते है तथा शिक्षण एवं प्रशिक्षण प्राप्त करते है। इस प्रकार समावेशित शिक्षा के अनतर्गत् विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों का आर्थिक, शैक्षिक, मनोवेज्ञानिक, सामाजिक चिकित्सीय एवं स्वास्थ संबंधी विकास किया जाता है।

समावेशित शिक्षा की परिभाषाएँ –

"समावेशन एक प्रक्रिया है जिसमें प्रत्येक विद्यालय की दैहिक, संवेगात्मक तथा सीखने की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपने संसाधनों का विस्तार करता है।" –उमा तुली

शिक्षाशास्त्री के अनुसार "समावेशी शिक्षा को एक आधुनिक सोच की तरह परिभाषित किया जा सकता है, जो कि शिक्षा को अपने में सिमटे हुए दृष्टिकोण से मुक्त करती है और ऊपर उठने के लिये प्रोत्साहित करती है।"

दूसरे शब्दों में, समावेशी शिक्षा अपवर्जन के विरूद्व एक पहल है। शिक्षाशास्त्री के अनुसार – "समावेशी शिक्षा अधिगम के ही नही, बल्कि विशिष्ट अधिगम के नये आयाम खोलती है।" समावेशी शिक्षा एक सतही प्रक्रिया नहीं है, बल्कि मनुष्यों के विकास के लिए मनुष्यों के द्वारा किये गये कुण्ठामुक्त प्रयास है।

वर्तमान में समावेशी शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व :– भारतीय संविधान के अनुच्छेद–16 के अनुसार समाज के प्रत्येक वर्ग को शिक्षा में समानता के अवसर का अधिकार प्राप्त है। बालक–बालिकाओं को किसी भी

आधार पर शिक्षा अर्जन करने से वंचित नहीं किया जा सकता। मनुष्य सामाजिक एवं प्रजातांत्रिक प्राणी है अतः शिक्षा प्राप्त करना उसका मौलिक अधिकार है। विशिष्ट बालक–बालिकाएँ समाज के अभिन्न अंग है, इन्हे शिक्षा से जोड़ने हेतु समावेशी शिक्षा महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है। वर्तमान में भारत की आर्थिक, सामाजिक एवं शैक्षिक स्थिति के अनुसार समावेशी शिक्षा को विशेष आवश्यकता वाले विद्यार्थियों के लिए शैक्षिक विकल्प के रूप में स्थापित किया गया है। हम निम्न प्रकार समझ सकते है :–

समावेशी शिक्षा की आवश्यकता :–

- समावेशी शिक्षा समाज के प्रत्येक बालक के लिए उच्च आंकांक्षाओं के साथ–साथ उसकी व्यक्तिगत शक्तियों का भी सम्पूर्ण विकास करने में बालक की मदद करती है।
- समावेशी शिक्षा के माध्यम से बालक अन्य बालकों के साथ अपने स्वयं की व्यक्तिगत आवश्यकता एवं क्षमता में सामंजस्य बिठाने की कोशिश करता है।
- समावेशी शिक्षा सम्मान और अपनेपन की भावना के साथ–साथ विद्यालय में सभी प्रकार से व्यक्तिगत मतभेदों को भुल कर एक मत होने में मदद करती है।
- समावेशी शिक्षा सभी बालको को कक्षा में समान गतिविधियों में भाग लेने और व्यक्तिगत लक्ष्यों को प्राप्त करने में मदद करती है।
- समावेशी शिक्षा व्यवस्था में, अपंगों को सामान्य बालकों के साथ मानसिक रूप से प्रगति करने का अवसर प्रदान करती हैं।
- सामान्य बालक कई सकारात्मक व्यवहार विशेष बालकों से सीख लेते है।
- सामान्य बालकों को कई मानवता से जुड़े व्यवसाय और उनमें कैरियर की सम्भावनाओं जैसे–विशेष शिक्षा, फिजियोथैरिपी इत्यादि की जानकारी मिलती है।
- सामान्य बालकों में अलग–अलग प्रकार के व्यक्तियों से प्रभावी सम्प्रेषण कौशल का विकास होता है।
- समावेशी शिक्षा से बालक अधिक आत्मविश्वासी और आत्मसम्मान युक्त हो जाते है।
- सभी बालक विद्यालय के अन्दर और विद्यालय के बाहर स्वतन्त्र अधिगम की प्रक्रिया सीखते है।
- समावेशी शिक्षा में सभी बालक एक दूसरे द्वारा सीखे गये ज्ञान और समझ का दैनिक जीवन में प्रयोग करते है।
- समावेशी शिक्षा से बालक अपने से विभिन्न बालकों से प्रति संवेदनशीलता और उनकी भिन्नताओं को स्वीकार करते हुए उनके साथ अनुकूलित होना सीखते है।
- बालकों के सम्प्रेषण कौशल का बेहतर विकास के साथ बेहतर जीवन के लिए तैयार होते है।
- वे अपने आप व अपनी उपलब्धियों पर गर्व करना सीखते है।
- समावेशी शिक्षा पद्वति बालकों की सामान्य मानसिक प्रगति को अग्रसर करती है।
- समावेशी शिक्षा सामाजिक एकीकरण में मदद करती है। यह बालकों में सामाजिक, नैतिक गुण, प्रेम, सहानुभूति, आपसी सहयोग आदि गुणो का विकास करती है।
- समावेशी शिक्षा लचीले वातावरण तथा आधुनिक पाठ्यक्रम के साथ शैक्षिक एकीकरण लाती है।
- समावेशी शिक्षा के वातावरण के माध्यम से समानता के उद्देश्य की भी प्राप्ति की जा सकती है। जिससे

कोई भी छात्र अपने आपको दूसरों की अपेक्षा हीन ना समझे।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि समावेशी शिक्षा समाज के सभी बच्चों को शिक्षा की मुख्य धारा से जोड़ने की बात का समर्थन करती है। समावेशी शिक्षण व्यवस्था सामाजिक विचार विमर्श अधिक किये जाते हैं। अपंग तथा सामान्य बालक में सामान्य शिक्षा के अन्तर्गत एक प्राकृतिक वातावरण बनाया जाता है। इस सामान्य वातावरण से छात्र मे उपयुक्तता की भावना तथा भवनात्मक समायोजन का विकास होता है। जिससे विशेष बालकों की सामजिक भागीदारी बढ़ेगी।

समावेशी शिक्षा का महत्व :-

- समावेशी शिक्षा में विशेष आवश्यकता वाले बालकों को अपने हम उम्र और विकलांग बच्चों के साथ अंतक्रिया का मौका मिलता है।
- विशेष आवश्यकता वाले बालक अपने सामान्य सहपाठियों की सामाजिक रूप से सभी कार्य व्यवहार सीखते है।
- शिक्षक भी विशेष आवश्यकता वाले बालकों से भी उचित अपेक्षाएँ रखते है।
- शिक्षक बिना किसी भेदभाव के सभी प्रकार के बालकों से समान व्यवहार करते है।
- विशेष बालकों को अपनी उम्र के हिसाब से सामान्य बच्चों के साथ उपयुक्त शैक्षणिक विषयों के प्रायोगिक भाग को सीखने का मौका मिलता है।
- समावेशी शिक्षा के कारण यह सम्भावना बढ़ जाती है कि विशेष बालकों की सामाजिक भागीदारी बढ़ेगी और जीवन पर्यन्त रहेगी। आगे आने वाले समय में बालकों के लिये उपयुक्त प्रशिक्षण तथा विशिष्ट कक्षा के कार्यक्रमों में सहायक सिद्व हो सकती है।

इस प्रकार समावेशी शिक्षा से न केवल विशेष आवश्यकता वाले छात्रों को लाभ होता है, बल्कि इससे गैर विकलांग बालकों को भी लाभ होता है। पाठ्य सहभागी क्रियाओं के दौरान विशेष बालकों का सहयोग करने का सामान्य बालकों को अवसर मिलता है। समावेशी शिक्षा से बालकों को व्यक्तिगत विभिन्नताओं को स्वीकार करने, सहनशक्ति जैसे अनेक गुणो का विकास करने में सहायता मिलती है। समावेशी शिक्षा सामाजिक एकीकरण को बढ़ावा देती है। मानव के रूप में जन्म लेने के फलस्वरूप प्रत्येक व्यक्ति को प्रकृति द्वारा प्राप्त समस्त प्रकार की सुविधाओं का उपभोग करने का अधिकार है। अतः विशिष्ट बालक भी समाज का एक अभिन्न अंग होता है। उनके लिये समावेशी शिक्षा की आवश्यकता परमावश्यक हो जाती है।

PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गीना देवी शोध संस्थान के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने मनभावन प्रिन्टर्ज, भिवानी से छपवाकर सम्पादकीय कार्यालय 6-एच 30, जवाहर नगर, श्रीगंगानगर, राजस्थान-335001 से वितरित की।

ISSN 2321:8037